निराश रोगियों
का मार्ग दर्शक
प्रथम
असंयम व भूलें
भूल रहित ... का मार्ग
जेसमें एक भी रोग रूपी गढ़ा नहीं
महात्मा जगदीश्वरानन्द

निराश रोगियों का मार्गदर्शक

(प्रथम भाग)

लेखक

महात्मा जगदीश्वरानन्द

वेदान्त शास्त्री

सत्वचिकित्सक

तृतीयावृत्ति २२००

मूल्य रु० ५–५०

देते हैं। शरीर अपनी शोधक व्यवस्था से जब हमारे आन्तरिक विकार को निकालने की चेष्टा कर रहा होता है ठीक तभी उस चेष्टा को न समझ कर इलाज के नाम पर उसे दबाने की कुचेष्टा करते हैं, दवा के प्रयोग से ही उसे दवा देते हैं। विषाक्त दवाओं के प्रयोग से ही प्रतिदिन रोगों की संख्या बढ़ती जा रही है।

देखने में व कहने सुनने में तो रोग अनेक दिखाई देते हैं पर वास्तव में रोग एक है प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान की भाषा में विजातीय द्रव्य के निकालने का प्रयास। उस समय बुद्धिमत्ता यह होगी कि विकार को निकालने में प्राण की सहायता करें, उस प्रकार को जानें किस विधि से जीवनी शक्ति को सशक्त बनाएँ जिससे सहज में रोग नामधारी विकार शरीर से बाहर हो जाए। उस दशा में दवा खाकर प्रकृति के काम में रोड़ा अटकाना सर्वथा अनुचित ही है।

जीवनी शक्ति रोग नामक विकार को किस-२ मार्ग से निकालती है ? उस की उस चेष्टा में किस प्रकार सहायता की जाती है ? प्रकृति के सरल उपादानों मिट्टी, पानी, धूप, हवा, आकाश तथा विभिन्न लवणों, विटामिन युक्त वनस्पतियों, योग की विभिन्न क्रियाओं से विकार को निकालना ताकि वह रुककर किसी भयंकर पीड़ादायक जटिल रोग का नाम न रखवाले। इसके साथ ही हम यह जानें **"रोग यों ही नहीं आते बुलाए जाते हैं, विशेष रूप से निमंत्रित किए जाते हैं, बाजारों से खरीदे जाते हैं।"**

ठीक यह भी मानें **"भूल रूपी नींव पर रोगों की दीवारें खड़ी हैं, उन पर विभिन्न पैथियों के महल खड़े हैं। साहस व संयम से भूल रूपी नींव को खिसका दें बस देखते-२ रोगों की दीवारें ढह जायेंगी, उन पर बने विभिन्न पैथियों के महल भी धराशायी हो जायेंगे।"**

फिर न नेचरोपैथी, न योगपैथी, न एलोपैथी, न ही अन्यान्य पैथियों की आवश्यकता है।

ऐसा भी मान लिया, बन गया कोई कष्टदायक कठिन रोग या ऐसी परेशानियां जिन का डायग्नोज (निदान) कराने में अनेक प्रकार के टैस्ट हो

गये पर कुशल डाक्टरों की समझ में भी नहीं आ रहा कि क्या नाम रखें इस रोग का, वैसी दशा में कुशल डाक्टर असमर्थता प्रगट करता है, विना नाम रखे क्या चिकित्सा करूं। ऐसी असमर्थता की दशा में भी प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान आशा दिलाएगा कि इस अवस्था में भी सफलता पूर्वक उपचार किया जा सकता है। क्योंकि हम मानते हैं विकारों के कुछ मुख्य केन्द्र हैं उन्हें साफ करने से अनेक परेशानियां विभिन्न नाम रूपधारी भयंकर रोग स्वतः ही साफ होने लगेंगे। इस संबन्ध में मेरा एक प्रसिद्ध सूत्र है --

"गुहात्रय प्रविष्टाः सर्वेरोगाः"

तीन गुहाओं में प्रविष्ट सारे रोग हैं। इन्हें साफ करते ही सभी रोग भागते दिखाई देंगे। इन की सफाई का प्रकार भी कठिन नहीं है। बड़े सरल ढंग से कुछ यौगिक शोधक क्रियाओं तथा प्राकृतिक उपादानों से हो जाती है। तभी मिट्टी, पानी, धूप, हवा में छिपी शक्ति का चमत्कार दिखाई पड़ता है। रोगी आश्चर्य चकित होता है हम तो समझे हुए थे विना कीमती दवा सेवन व लम्बे चौड़े नुस्खे के रोग जा ही नहीं सकता यह तो **"राई की ओट में पहाड़"** वाली किंवदन्ती प्रतिफलित हो रही है।

इतने वर्षों के अनुभव से यही कहूंगा संयम की उपेक्षा कर, भूलों को जाने बिना दवाओं के सेवन से मानव दवाओं की दलदल में ऐसा फंसता है कि उसमें से निकलना भी कठिन हो जाता है। उधर शीशियों का भी प्रसव होने लगता है। एक शीशी दूसरी की, फिर दूसरी तीसरी की सिफारिश करती हैं, उत्तरोत्तर शीशियाँ वढ़ती जाती हैं। शनैः २ शीशियों से अलमारी भर जाती है, एक छोटा सा दवाखाना ही वन जाता है।

कवर पर चित्र में यही दर्शाया गया है कि विभिन्न चिकित्सकों द्वारा समय समय पर रोगी रूपी गढे में से निकाला जाकर भी व्यक्ति भूल व असंयम द्वारा पुनः गढ़े में गिर जाता है। प्राकृतिक चिकित्सक ही संयम का मार्ग बताकर उसे सुगम पथ पर चलाता है।

रोगी संयम को अपनाये, दवाओं की दलदल से बच जाये, प्राकृतिक तत्वों से रोगों को भगाये, कष्ट से मुक्ति पाये, धन बचा

धर्म कार्यों में लगा सुख शान्ति पाये, इस उद्देश्य से इस पुस्तक का तृतीय संस्करण निकाला।

सचमुच धन वही है जो दूसरों की तृप्ति का साधन वन सके। सभी धर्मों में दान का बहुत महत्व है। दान धर्म का एक प्रमुख खम्भा है। दान के अनेक प्रकार हैं, जिस वस्तु का दान होगा, उसी का संवर्धन होगा। दान का सीधा सा अर्थ हुआ बीज बोना। धन देकर धन का, अन्न देकर अन्न का, गौ दान से गौओं को पाना इस प्रकार स्वर्णदान, भूमि, जल, फल आदि अनेक प्रकार के दान शास्त्रों में बताये गए हैं। दानों का वर्णन कर श्रेष्ठता बताते हुए कहा —

"सर्वेषामेव दानानाम् ब्रह्मदानम् विशिष्यते"

ब्रह्म विद्या का दान सर्वश्रेष्ठ है। विद्यादान सद्विचारों का प्रसार करना अज्ञानांधकार में पड़े दुखियों को सुविचार दे सुखी बनाना एक महान पुण्य है। इस महान् पुण्य के अभिलाषी हैं श्रेष्ठमना श्री बलदेव जी चरला।

इस पुस्तक के मूल प्रेरक उदारमना सेठ वलदेव जी चरला का स्मरण अत्यंत आवश्यक है जिन्होंने मुझे लिखने के लिए प्रेरित किया तथा प्रथम संस्करण के लिए २२ बाईस रिम कागज भेंट कर बड़ी सहायता की। दूसरे संस्करण के लिए भी पांच सौ प्रतियों के छपाने का भार वहन करने का आश्वासन दे मुझे उत्साहित किया। उदारमना सेठ जी की उदारता का ही परिणाम था कि चार सौ साठ पृष्ठ की योग, प्राकृतिक एवं आयुर्वेद का समन्वय करने वाली अलौकिक पुस्तक का प्रथम संस्करण मूल्य केवल ३ रु० २० पैसे रखा गया। निःसंदेह इस ज्ञान प्रसार में श्री चरला जी का योगदान एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। पुस्तक के साथ इनका तादात्म्य संबंध है। आज के युग में जिस प्रकार एलोपैंथी की चकाचौंध से हट जनता प्राकृतिक एवं योग चिकित्सा की ओर लौट रही है और एक व्यापक प्रभावकारी क्षेत्र बनता जा रहा है इस पुस्तक की व्यापकता के साथ सरल हृदय चरला जी भी अविस्मरणीय बने रहेंगे। तृतीय संस्करण में विस्तार के कारण प्रत्येक गुहा संबंधी विवरण अलग अलग भाग में रक्खा जा रहा है। कागज, छपाई आदि की मूल्य वृद्धि के कारण पुस्तक का मूल्य बढ़ाने को विवश होना पड़ा है।

—जगदीश्वरानन्दः

लेखक का संक्षिप्त परिचय

महात्मा जगदीश्वरानंद जी का पश्चिमी पाकिस्तान जिला झंग के गाँव में जन्म हुआ। माता-पिता की अनुमति से ही एक महात्मा जी के साथ वाराणसी (काशी) में चौदह वर्ष की आयु में आए। बनारस के उदासीन सम्प्रदाय के महन्तजी ने शिष्य बनाया। एक वर्ष के भीतर ही महन्त जी के देहांत के बाद गद्दी के महन्त पद पर आसीन हुए। वेदांत शास्त्री प्रथम खंड उत्तीर्ण करते ही मन में गद्दी के प्रति अरुचि होने लगी। अपने साथी महात्मा से पांच रुपये उधार ले प्रयाग में आकर प्राकृतिक चिकित्सक डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह जी के पास आ शिक्षण लिया। डाक्टर जी द्वारा चलाए गए शिविरों में शिक्षण ले "डॉ० आफ नेचर क्योर एण्ड योग" की डिग्री प्राप्त कर वेदांत शास्त्री उत्तीर्ण कर अपने मैनेजर को मुखतार आम नाम दे उज्जैन चले गए। उज्जैन में कल्पवृक्ष के सम्पादक श्री डा० दुर्गाशंकर जी नागर के पास रह मानसोपचार की शिक्षा ली।

श्री नागर जी के सरल, शांत एवं त्यागमय जीवन का इन पर बड़ा प्रभाव पड़ा। दस वर्ष तक उनका सान्निध्य बना रहा। नागर जी के देहावसान के बाद उज्जैन से रोहतक (हरियाणा) में वैदिक भक्ति साधनाश्रम में महात्मा प्रभु आश्रित जी (टेकचन्द जी पूर्व नाम) की सेवा में रहने का अवसर मिला। उज्जैन निवास काल में पहाड़ी पर एकांत स्थान में रह नेति, धौती, वस्ती प्राणायाम आदि का अभ्यास भी कुछ मास चला। महात्मा प्रभु आश्रित जी के त्यागमय जीवन व उपदेशों का इन पर बड़ा प्रभाव पड़ा, अतः उन्हें प्रकाश-दाता गुरु के रूप में मानने लगे।

सबसे पहले जिला वर्धा में हिंगन घाट में एक प्राकृतिक चिकित्सालय की स्थापना सन् १९४५ में की। सन् ५२ में तुमसर (जिला भंडारा महाराष्ट्र) के रायबहादुर सेठ श्रीराम दुर्गाप्रसाद की उदार व्यवस्था से एक शानदार आरोग्यदान शिविर लगाया। उसके बाद विभिन्न स्थानों में शिविर लगे।

अन्त में मेरठ, गाजियाबाद, देहरादून में चिकित्सा केन्द्र चलाए गए पर वहाँ पराधीनता देख स्वतन्त्र आश्रम की भावना जागीं। अब बागपत मार्ग पर पाँचली ग्राम जिला मेरठ में जीवन निर्माण केन्द्र आश्रम की स्थापना कर विधिवत् चिकित्सा की जाती है।

आश्रम रजिस्टर्ड (पंजीकृत) है जिसकी अपनी कुछ मौलिक विशेषताएँ हैं—पहली विशेषता है रोगी से व्यसन त्याग की मुख्य फीस ली जाती है। दूसरी विशेषता है सृष्टि रचयिता ईश्वर के प्रति तथा शरीर व मन के निर्माता माता पिता आदि गुरुजनों के प्रति आस्थावान् बनाया जाता है। तीसरी विशेषता है—१. अध्यात्म, २. योग, ३. प्राकृतिक चिकित्सा एवं ४. आयुर्वेद के सौम्य प्रकार का समन्वय कर चतुष्टय योग से शरीर मन के विकारों की निवृत्ति की जाती है। खेतों के बीच शांत एकांत स्थान में बने आश्रम में ट्यूबवेल, बिजली पानी फिट सादे ढंग के हवादार साफ कमरे व फ्लश टट्टियां हैं। गौशाला व भोजनालय है। इस प्रकार के आश्रम की स्थापना कर मुख्य अधिष्ठाता के रूप में उसका सचालन कर रहे हैं। इसके साथ ही सहारनपुर व मोदीनगर में भी इसी विधि के उपकेन्द्र चला रहे हैं। इसके अतिरिक्त अनेक पुस्तकें भी लिखी हैं—१. जुकाम खांसी दमा की सफल चिकित्सा, २. दंत रोगों की सरल चिकित्सा, ३. उत्तम स्वास्थ्य के लिए आदर्श आहार, ४. नमक भी एक हल्का विष है, ५. टांसिल व कंठ रोग निवारण, ६. आरोग्याभिलाषा, इत्यादि।

नारायणदेव शास्त्री
मेरठ छावनी
(उ० प्र०)

विषय-सूची

प्राक्कथन

प्राकृतिक चिकित्सा क्षेत्र में अन्य अनेक विद्वानों की लिखी पुस्तकें उपस्थित हैं, फिर इस रचना का अपना क्या महत्व है ? कौनसी विशेषता है ? यह एक सहज प्रश्न होता है। उत्तर में निवेदन है कि उन विद्वानों के अनुभवों का सार भी इसमें है और साथ ही अन्य सुन्दर मिश्रणों द्वारा इसे शीघ्र लाभकारी बनाने का एक सफल प्रयास भी किया गया है।

"पुस्तक की मौलिकता"

अंग्रेजी में अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने प्राकृतिक चिकित्सा पर प्रमाणिक पुस्तकें लिखीं। उन पुस्तकों को आधार मान हिन्दी में भी विभिन्न पुस्तकें लिखी गईं जो अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। उन सबके रहते हुए उसी प्रकार की एक अन्य पुस्तक रचना का क्या प्रयोजन है ? जबकि विद्वान् लेखकों ने अपने-२ ढंग से सुवाक्यों द्वारा अच्छी प्रकार उन तथ्यों को प्रकट किया है जिन तथ्यों को मैं भी अपनी लेखनी से प्रकट करने जा रहा हूँ। फिर भी विनम्र साहस से इस पुस्तक की अपनी अनोखी मौलिकता सिद्ध करना चाहता हूँ।

१. धार्मिक दृष्टिकोण से रोगों व दुःखों का चिन्तन।

२. रोग निवारण उपाय में धार्मिक अनुष्ठान, सत्संग, भजन नाम जप व दानादि का वर्णन।

३. शारीरिक रोगों के मूल कारण मानस-विकार का प्रतिपादन।

४. मानस-विकारों के निवारणार्थ मानस साधना।

५. रोगों के निदान के लिए बाह्य साधनों की अपेक्षा किए बिना रोग निदान के सरल सूक्ष्म विज्ञान का प्रतिपादन।

६. रोगों के उपचार में रोग को चारों तरफ से पकड़ने के लिए मानस, यौगिक, प्राकृतिक एवं आयुर्वेद का समन्वित प्रयोग ।

७. रोगों को जड़मूल से निकालने के लिए ब्रह्मास्त्र माने जाने वाले उपवास का यौगिक क्रिया के समन्वय से संकटहर विधि का निर्देश ।

इस में साधारण सिर-दर्द से लेकर सभी पुराने, विशेष रूप से असाध्य समझे गए रोगों का वर्णन है। पुराने रोगों की जड़ें कहां हैं ? कैसे उन पर प्रहार किया जाना है ? किस प्रकार वे निर्मूल होंगे, इसका सम्यक् विवेचन है ।

लकवा, बवासीर, पोलियो, दमा, बोन टी.बी., पायरिया, गठिया, ब्लडप्रेशर, अम्लपित्त (एसिडिटी), भयंकर आंव, पागलपन, मृगी, पुत्र-प्राप्ति, संततिकारक योग, जुकाम, खांसी, टायफाइड (मियादी बुखार), टैटोनेस (धनुष्टंकार), कैंसर, अनिद्रा, चश्मा-निवारण, टांसिल, स्त्रियों के रोग, बिना दर्द के प्रसव, दर्द-गुर्दा, पथरी, डायब्टीज (मधुमेह) आदि सभी शारीरिक एवं मानसिक रोगों के उपचारों का वर्णन है ।

ईश-प्रदत्त, सर्वत्र प्रकृति में व्याप्त, प्राणियों को प्राप्त इस सरल विज्ञान को प्रकाशित करते हुए शरीर-शास्त्र विशेषज्ञों को यदि शरीर-रचना-विज्ञान के आधार पर कुछ न जंचे, तो वे उस सम्बन्ध में मुझे अनभिज्ञ मान क्षमा ही करेंगे और मेरे द्वारा केवल उस ज्ञान के आधार पर लाभ प्राप्त उन रोगी बन्धुओं को साक्षी मान समाधान प्राप्त करेंगे—यह नम्र निवेदन है, क्योंकि महर्षि चरक जैसे मनीषी भी यही मानते हैं । वस्तुतः वही श्रेष्ठ चिकित्सा है, वही श्रेष्ठ कर्म है, जिससे शरीर में धातुओं की समता हो, अंग प्रत्यंग सक्रिय हो काम करें ।

याभिर्क्रियाभिर्जायन्ते शरीरे धातवः समाः ।
सा चिकित्सा विकाराणां कर्मतत् भिषजां वरम् ।।

आज भारत की एक अजीब स्थिति हो रही है । बाहर से कहने

को वह स्वतन्त्र हो चुका है पर अनेक बातों में वह मानसिक रूप से बुरी तरह परतन्त्रता में घिरा हुआ है। प्राचीन ऋषि-मुनियों के ज्ञान की अवहेलना कर सुख की इच्छा से नवीन पाश्चात्य ज्ञान को विश्वास एवं श्रद्धा से टकटकी लगाए देख रहा है। यह विचारधारा इस तेजी से फैल रही है कि किसी एक देहाती रोगी बालक से बुखार की दशा में बात करें तो वह कह रहा है—मुझे देशी दवा माफिक नहीं पड़ती, इन्जैक्शन लगवाओ। शाबाश! क्या कमाल की बात है। परमेश्वर ने भूल की, जो तुझे भारत में पैदा कर दिया। कैसा निरादर है, सहृदय सर्वहितकारी ज्ञानपुञ्ज उन ऋषियों का जिन्होंने रोगों का सम्यक् दर्शन किया, अमृतोपम औषधियों को तपोबल से जाना और यह जाना कि रोग का मूल कारण क्या है? कैसे उसे हटाना है? पर आज के मानव के पास वह चिंतन ही नहीं। वह तो यह देखता है, कैसे झट से पीड़ा हटे, भले ही कल को फिर लौट आए, बस आज झट से भाग जाए। इस मुकाबले में पाश्चात्य चिकित्सक ने बाजी मार ली। रोग को झट से दबाना, पीड़ा को भगाना, इस प्रकार रोग को पेचीदा बनाना, यह मुख्य काम है विदेशी चिकित्सा का। एक छोटी-सी सिर दर्द की दवा एनासीन वगैरह जो शुरू हुई, पांच मिनट में पीड़ा को भगाया, पर दर्द का व अपना डेरा लगाया। रोगी जब तक जिएगा, न सिर दर्द जाएगा, न दवा से पिंड छुड़ा पाएगा। जीवन-व्यापी रोग बन जाएगा। दिल कमजोर हो जाना एवं अन्य कष्टों को भी मंगा लेना—यह एक नया काम भी बन जाएगा।

यह है तात्कालिक चमत्कार दिखाने वाली एक औषधि का नमूना। इसी प्रकार गलत इलाज करते करते जब रोग पेचीदा बन गया तब उसका ठीक-ठीक नामकरण करने के लिए वैज्ञानिक मशीनों द्वारा सैकड़ों रुपये खर्च कर टस्ट होंगे। उसके बाद बड़े स्वाभिमान-पूर्वक यह घोषित होगा, प्रचारित भी होगा कि वैज्ञानिक साधनों द्वारा एक ऐसे राग को ठीक से देख पाये, जो अद्यावधि सर्वथा अज्ञात

था । टैस्ट मात्र से छुटटी मिल जाती, तो भी बात थी, इलाज के नाम पर डाक्टर अस्त्र-शस्त्रों द्वारा शरीर के अंग प्रत्यंग काटने लगते हैं। वह शस्त्र-क्रिया रोगी के लिए कितनी महंगी पड़ती है, डा० को कैसे धनवान बनाती है यह स्पष्ट है। दूसरी ओर टीकों व गोलियों के द्वारा शरीर में जहर भरा जाता हैं। यह अच्छी खुशी की बात है कि अस्सी प्रतिशत दवाओं पर लिख ही दिया जाता है 'Poison'। उन जहरों के प्रयोग से किसी प्रकार के रोग को झट से दबाकर चमत्कार दिखाया जाता है। उसे देख हमारे भोले भाई समझते हैं 'क्या कमाल कर दिखाया। रोता आया हंसता गया!'

जुकाम, बुखार जैसे प्रकृति की ओर से हो रहे शोधक प्रयोग को एक दिन में दबाकर दिखा देते हैं। जो मित्र थे, सफाई के लिए आए थे, उन्हें शत्रु समझा जाता है।

आयुर्वेद का एक ऋषि कहता है :—

ज्वरस्य प्रथमोत्थाने लंघनञ्च दिनत्रयम्।
न देयं क्वथितं वारि, न च भैषज्यं दापयेत्॥

जब बुखार हो तो प्रथम तीन दिन तक उपवास किया जाए। न कोई दवा, न कोई काढ़ा दिया जाए। शरीर सफाई के जिस सुन्दर उद्देश्य को सम्मुख रख प्राकृतिक वैद्य ने अग्नि स्वरूप ज्वर को पैदा किया था वह पूरा हुआ कि बुखार शरीर से विदा हुआ। इतना ही था उस भले मानस का काम! पर कौन समझे और क्यों समझने का प्रयास हो? जिस टायफाइड को मियादी बुखार माना जाता है, मियाद वाला उसकी संज्ञा हो चुकी है सदियों से, उसके विकारों को पचने दिया जाए तो वह सुन्दर परिणाम आपके सामने लाए, कि आप अपने प्रियजन के लिये मनायें, चाहें, कि प्रकृति मियादी ज्वर के रूप में आग पैदा कर उस के शरीरस्थ विकारों को जलाये, उसे नया चंगा स्वस्थ बना जाये, जो कि मरियल सा बना रहता है, पनपता ही नहीं, आये दिन रोगों से घिरा रहता है उसे टायफाइड वरद बन कर आता है। उसको एक सप्ताह में ही मार भगाया

जाता है और इसे साइन्टीफिक वैज्ञानिक चिकित्सा का चमत्कार घोषित किया जाता है। परिणाम स्वरूप किसी का कद मारा जाता है, किसी की टांग, किसी की बाहू, किसी का पनपना, किसी की स्मृति या अन्य कोई अंग। क्या लाभ मिला हमें ऐसे चमत्कार से ? ये विवेकी जन हिसाब लगायें। जैसे आपने घर से घास-फूस कचरा इकट्ठा किया कि इसे जला दिया जाये, तो यह सावधानी तो अवश्य बरतनी होगी कि वह कचरा स्वयं ही जले, आस-पास के मकान को क्षति न पहुँचाएं। ठीक यही समझदारी व सावधानी रखनी है आपने किसी भी बुखार के लिए, जो कि प्राकृतिक योग चिकित्सा आप को बड़ी सरलता से दे सकती है, जिस ज्ञान के लिए आप बेताब हो रहे हैं। इलाज के नाम पर औषधियों के नाते करोड़ों रु० प्रतिवर्ष भारत से विदेशों में जा रहे हैं। गुलामी की-परम्परा कायम है। बाहर से स्वतन्त्र, भीतर से परतन्त्र। अतः यह प्रयास है कि ठण्डे दिल से चिन्तन करें, सोचें, स्वयं को स्वाश्रयी बना, देश को स्वाश्रयी, आत्म-निभर बनावें। अन्न, औषधि का मोहताज, मंगता बन कब तक स्वाभिमान स्थिर रखेंगा ? यह तभी सम्भव है—

देश की मिट्टी, दश की हवा। देश का पानी, देश की दवा॥

—लेखक

मानसिक विकार ही रोगों के मूल कारण

मनोविज्ञान एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर रहा है। हर क्षेत्र में अपने ढग की विशेषताएं प्रकट करता है। बाल शिक्षण, बाल अपराध, सामाजिक उलझनें, व्यापार को चमकाने के सुझाव, प्रतिदिन जीवन में उठने वाली समस्याओं का ठीक हल करने में व मानव कल्याण में मनोविज्ञान एक महत्वपूर्ण विज्ञान है। मनोविज्ञान व्यक्ति के मानसिक व्यापार को समझने की एक विधि है। ठीक इसी प्रकार शारीरिक रोगों के विषय में भी मनोविज्ञान के विद्वान उन सब रोगों के मूल में मानसिक विकारों को ही कारण के रूप में सिद्ध करते हैं।

थोड़ा सा चिन्तन करने पर ही उनकी सारी बातें ठीक ही जान पड़ती हैं।

परिवार समाज की सबसे महत्वपूर्ण इकाई है। माता-पिता तथा अध्यापक मनोवैज्ञानिक रूप से प्रौढ़ होकर बालक का शिक्षण भली-भाँति करने में कुशल हो योग्य बालक का निर्माण करने में समर्थ होते हैं।

सच्चाई यह है कि जब मानव ने जन्म लिया तभी से मनोविज्ञान का जन्म हुआ। मानव के उत्थान व कल्याण का सम्बन्ध उसके शिक्षण से जुड़ा है। कुशल गुरुजन (माता-पिता व अध्यापक) बच्चे के भीतर छिपी योग्यता, रुचि व शक्ति को अपनी पैनी बुद्धि से उसे बढ़ाते हैं। यही सच्चा मनोविज्ञान है। केवल मनुष्य ही की क्या बात है प्राणीमात्र के भीतर छिपी बुद्धि व शक्ति को समझना, उसे उभार कर बाहर लाना, बढ़ाना व कार्य में प्रयुक्त करना। यह सब मनोविज्ञान का क्षेत्र है। हम अपने पालतू पशुओं का नाम रखते हैं, उन्हें बुलाते हैं, शिक्षित करते हैं, भाषा और इशारे से काम भी करते हैं। हमारे आश्रम में पालतू बिल्लियाँ थीं। उनके छोटे बच्चों के नाम रक्खे। ज्यों ही उनकी बुद्धि विकसित हुई टट्टी पेशाब के लिये बर्तन में राख रख कर उन्हें दिखाया। ठीक उसी में टट्टी पेशाब करने लगे। उनकी साफ़ बिछौने पर बैठने की मनोवृत्ति देखी। तब बाहर साफ़ आसन लगा दिया जिस पर वे प्रसन्नता से बैठने लगीं। में एक साफ़ सुथरी बिल्ली को देखा। यज्ञ में बैठे हुये आदमियों ने जिसकी धोती साफ़ सफेद चमकती थी उसकी गोद में आ बैठती थी। सरकस के अनुभवियों ने अनेक प्रकार के पशुओं को शिक्षित कर दिया तथा वे कितना पैसा कमा रहे हैं उन शिक्षित पशुओं के द्वारा। मनोविज्ञान एक महत्वपूर्ण स्वतन्त्र शास्त्र ही बन गया है। हर क्षेत्र में उसका महत्वपूर्ण स्थान व उपयोग है। अब मैं अपने रोगों के सम्बन्ध में मनोविज्ञान द्वारा की गई खोज़ों के सम्बन्ध

में कुछ संक्षेप में लिखना चाहता हूँ। होम्योपैथी चिकित्सा के प्रवर्तक सुप्रसिद्ध डा० हैनिमैन ने अपने ग्रन्थ "आर्गेनिन" में प्रतिपादित किया है कि मनुष्य की समस्त शारीरिक व्याधियों का मूल मन में ही होता है। जैसे उन्होंने पुराने जटिल रोगों का चिन्तन करते हुये वंश परम्परा को माना, पितृ वंश या मातृवश में उनके बीजों को खोजने का सुन्दर चिन्तन किया, ठीक वैसे ही मानसिक विकारों को भी रोगों का कारण माना। पश्चिम के डा० फ्रायड के मतानुसार कामवासना के दमन के परिणाम स्वरूप अनेक युवक स्त्रियाँ अजोव से मानसिक रोगों से पीड़ित हो रही हैं। भले ही कोई डा० फ्रायड के चिन्तन से सहमत न हो तो भी आज के युवक-युवतियों में विभिन्न प्रकार के दौरे हिस्टीरिया जैसी पेचीदा बीमारियों के मूल में काम दमन की प्रवृत्ति को झुठलाया नहीं जा सकता। कितने युवक-युवतियों को मैंने देखा पढ़ने में बड़े होशियार फर्स्ट डिवीजन में पास हो रहे हैं। देखते-देखते उनकी बुद्धिमत्ता बुरी संगति में उसी तेजी से काम करने लगी।

लड़कों ने तो हस्त मैथुनादि द्वारा नाश का मार्ग अपनाया। एक लड़के को तो यहाँ तक कुटेव में फंसा पाया कि वह लत लगी कि वीर्य नाश से होने वाली कमज़ोरी को दूर करने के लिये हाथ से निकाले गये वीर्य को पुनः खा जाता ताकि कमज़ोरी ,न आये। इस प्रकार वीर्य पान के रूप में अपने भीतर ज़हर लेने लगा। परिणामतः बुरी तरह पागल बन स्वयं परेशान रहने लगा। परिवार में माता-पिता तथा अन्य कुटुम्ब के लिये भयंकर संकट पैदा किया। ऐसे ही एक सुन्दर युवती एक युवक के प्रति प्रेमाकर्षण में अपने को छिपाती रही। माता-पिता से भी छिपाती रही तथा बुरी तरह अजीब ढंग के दौरे का शिकार हुई। उन दौरों को समझना भी कठिन था ? क्या कोई भत प्रेत है ? कोई प्रेत आत्मा इसे परेशान कर रही है। अनेक निदान किये जाने लगे। जितने मुँह उतनी बातें। उसी बीच भेद

खुला यह अमुक से प्रेम करती है। दूसरी जाति का होने से माता पिता की ओर से स्वीकृति प्राप्त न होते देख कामवासना की अतृप्ति के परिणाम स्वरूप अन्तर्मन में बनी वे ग्रन्थियाँ ही उसके पेचीदे दौरे का कारण बन गईं जिसे कोई गैस, कोई भूत-प्रेत व ऊपरी छांपा बता रहे थे।

मानसिक रोगों का रहस्यः—मानस शास्त्रियों ने इस विषय में भी चिन्तन किया। मानव के मन को दो भागों में विभक्त किया। एक वाह्यमन, दूसरा अन्तर्मन, कांशस माइन्ड व सबकांशस माइन्ड। जाग्रत अवस्था में मानव वाह्यमन या चेतनमन से काम करता है। उस दशा में यों तो अनेक क्रियाएं होती हैं पर जो विशेष प्रभावकारी या आकर्षक काम होते हैं उनका मन पर विशेष रूप से प्रभाव पड़ता है। जिनका मन पर विशेष प्रभाव पड़ता है उन कामों के संस्कार अन्तर्मन (सब-कांशस माइण्ड) पर पड़ते हैं। यही संस्कार स्वप्नों में आते हैं। जब मन (बाह्य मन) या कांशस माइण्ड बाहर के कामों से विरत होता है अर्थात् नींद की दशा होती है ठीक उसी समय अन्तर्मन अपना कार्य आरम्भ करता है। अपनी उधेड़-बुन शुरू करता है। वह अर्धनिद्रा हल्की दशा की नींद होती है। गाढ़ी नींद में नहीं। तभी सोया मनुष्य नींद की दशा में बड़बड़ाता है। अनेक अच्छे बुरे भयावने स्वप्न देखता है। कामवासना से पीड़ित युवक व युवती ठीक उसी प्रकार गन्दे स्वप्न देखते हैं जबकि दूसरी ओर ईश्वर की साधना में लगे साधक मनुष्य ऋषि महात्मा, साधना स्थान, मंदिरों, नदी, सागर व पर्वतों के स्वप्न लेते हैं। बात यों है कि जो कुछ जागने के समय में देखा गया है, जो भी संस्कार के रूप में संजोया गया है वही सब स्वप्न की दशा में प्रकट होता है। ठीक वे संस्कार जो अन्तर्मन में चित्त भूमि के किसी कोने में पड़े हुए थे चूंकि समाज के वातावरण के अनुकूल न थे अतः छिपाये या दबाये जा रहे थे। वे दबाये गये विचार व उनसे बने संस्कार ही आगे मानस रोगों के कारण बने। उन संस्कारों की ही मानों सूक्ष्म ग्रन्थियाँ

बनने लगीं। वे ही मानसिक रोगों के मुख्य उपादान का कारण बनीं। "उपादान कारण वह कहलाता है जिससे जो चीज़ बनती है। मिट्टी घड़े का उपादान कारण है।"

जबकि अन्य सारे साधन निमित्त कारण, कहलाते हैं। जैसे टोकरा, गधा, कस्सी, खुरपास चाक आदि सब निमित्तकारण हैं। मैंने कहा जो विचार समाज में खुलकर नहीं आ सकते, जिन्हें छिपाना या दबाना पड़ता है उन्हीं से वे दबे संस्कार मानस ग्रन्थियों के रूप में रोग के रूप में परिणत होंगे। इससे स्पष्ट हो गया, एक ही विचार देश भेद से बुरा या साधारण समझा जा रहा है। जिस देश में बुरा पापमय छिपाने योग्य समझा जा रहा है वहीं पर वह रोग का रूप लेगा। वही विचार दूसरे देश में साधारण सा माना जाता है छिपाने की आवश्यकता नहीं होती तब वह रोगकारक नहीं होता है।

जैसे युवा अवस्था में युवक युवती का परस्पर आकर्षण, उनका प्रेमालाप आगे चलकर उन दोनों का विधिवत् विवाह के पूर्व अवैध सम्बन्ध यह व्यवहार ऋषियों के आर्यवर्त भारतवर्ष में अत्यन्त घृणित माना गया समाज के वातावरण में न समा सकने के कारण पाप माना गया, छिपाने या दबाने योग्य माना गया। जबकि वही अवैध प्रेम पाश्चात्य देशों में एक साधारण रूप से माना गया जिसे दबाने या छिपाने की आवश्यकता नहीं समझी जाती।

यौन सम्बन्धी कामुक बातें, लज्जित कार्य, दूसरों को धोखा देना, चारसौ बीसी करना हानि पहुँचाने के कार्य जिनकी स्मृति इतनी अप्रिय होती है उन्हें हम अचेतन मन में दबा देते हैं। दबे भाव दुःखद मानसिक दशा में हटाए भी नहीं हटते शारीरिक पीड़ा की दशा में जिस किसी प्रकार से नींद का आवाहन होता है। बस नींद आई कि कष्ट हल्का हुआ इसलिए कहते हैं—"टाइम इज दि ग्रेट हीलर"

यह दमन की गई भावनाएं ही हमारे व्यक्तित्व को प्रभावित करती हैं।

व्यक्ति के स्वभाव का भी अपना महत्व है—एक व्यक्ति निर्भीक है, स्पष्टवक्ता है वह यदि ऐसा कोई कदम उठा भी लेता है जिसे समाज स्वीकार नहीं करता, समाज उसे पचाने की क्षमता नहीं रखता तब भी निडर हो समाज के सामने आता है अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करने का साहस करता है। समाज को सहमत करने का साहस करता है। जबकि उसका पग अपने आप में ठीक होता है। वैसी दशा में वह दबता नहीं, छिपता नहीं, अपने लिये घुटन नहीं तैयार करता। हाँ यदि शास्त्र-दृष्टि से सर्वथा अधार्मिक व अनैतिक पग नहीं है तो

गीता के अनुसार—

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते॥

अर्थ—मूढ़ बुद्धि पुरुष कर्मेन्द्रियों को (हठ से) रोक कर इन्द्रियों के भोगों को मन से चिन्तन करता रहता है वह मिथ्याचारी अर्थात् दम्भी कहा जाता है।

विपरीत इसके दब्बू स्वभाव का आदमी वैसा काम कर समाज के सामने मुँह दिखाने का न साहस करता है न अपनी बात को ही स्पष्ट कर पाता है। वह बेहद घुटन अनुभव करता है। तब वह अपने को पतित मान हीन-भावना का शिकार बन या तो वह अपने लिए आत्महत्या, आत्मदाह, डूब मरना ही चुनता है या फिर अपने को पापी मान घुटन में रह शीघ्र पागल हो जाता है अथवा जीवन भर हीन भावना का शिकार बन कुम्भलाया, मुर्झाया किसी प्रकार अपनी जीवन नौका को चला रहा होता है। अब उसमें न वह साहस है, न निर्भीकता व समाज में घुल मिलकर बैठने का रस, न हिम्मत से कुछ करने की भावना ही होती है। ऐसा दब्बू स्वभाव का आदमी न सह सकने के कारण आत्महत्या, पागलपन या जीवन भर हीन भावना की गाँठ बाँध किसी प्रकार हतप्रभ हो जीवन जिएगा। ऐसा आदमी इतना तो अवश्य करे कि कोई कदम उठाने से पहले अपनी परेशानी व

घुटन को अपने से बड़े या बराबर के पास अवश्य प्रगट करे। निश्चित हल इस सारे कथन का सार है कि वातावरण→व्यक्ति→वातावरण एक दूसरे को प्रभावित कर रहा होता है, जबकि साहसी तेजस्वी व्यक्ति वातावरण को प्रभावित करता है।

पागल (विक्षिप्त) होने के अनेक कारण—एक प्रसिद्ध कारण है भग्नाशा। भग्न+आशा, आशा का भग होना। जब आशा टूटती है तब मस्तिष्क के स्नायुओं को धक्का लगता है, वही धक्का पागलपन का रूप लेता है। भले ही प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तानुसार मुझे उस धक्के के पीछे उपादान कारण के रूप में शरीर में विकारमय दशा विजातीय द्रव्य की स्थिति दिखती है। बाहर दृष्टि का धक्का तो केवल निमित्त कारण है। मान लो उसी प्रकार का धक्का अनेक व्यक्तियों को लगता है पर क्या सारे पागल हो जाते हैं ? जिनके शरीर में विकार की दशा मौजूद होती है विजातीय द्रव्य होता है वे ही उस उस आघात को नहीं सहन कर पाते जबकि दूसरे व्यक्ति उसे सहन कर जाते हैं। कल्पना करें कहीं भूकम्प का झटका लगा, झटका अपने आप में सम है पर भिन्न-भिन्न व्यक्तियों पर उसका प्रभाव अलग-अलग हो रहा है। क्योंकि शरीर और मन की दशा में अन्तर है।

हार होने से पागलपन—अमरीका जैसे पश्चिम देश की बात है—कवि सम्मेलन हो रहा था एक से एक योग्य कवि कविता कह रहा था। एक अन्तिम कवि की कविता ने रंग जमाया, चहुँ ओर से प्रसन्नता की वाह-वाह की गूँज होने लगी तभी एक पादरी ने एक कविता कह सारा माहोल ही वदल दिया। सारा झुकाव उस पादरी की ओर हो गया। पूर्व कवि को एक झटका लगा तभी से वह पागल हो गया पर उसका पागलपन अजीब किस्म का था हर समय न दीखता कभी कभी वह पागलों जैसी चेष्टा करता। मनोवैज्ञानिक ने चिंतन कर यह रहस्य खोला जब कभी उसे कोई पादरी दिखाई पड़ता या पादरी से सम्बंधित वस्तुएँ दीखती ठीक तभी वह पागल

हो जाता आगे पीछे ठीक रहता। गिरजाघर या गिरजाघर का घन्टा सुनाई पड़ता तभी दौरा हो जाता।

मानसिक ईर्ष्या डाह के कारण पागल होना—जब कभी मन में बहुत दिनों तक किसी व्यक्ति के प्रति ईर्ष्या या डाह के भाव बने रहते हैं तो उनसे भी स्नायु मंडल में एक तनाव बढ़ता है परिणामत: ईर्ष्या भाव बढ़ जाने से वह व्यक्ति पागल हो आत्महत्या करने के लिये तत्पर होता है। वाराणसी में उदासीन साधु सप्रदाय के विद्यालय में न्याय शास्त्री पंडित जी पढ़ाने आते हैं। महेश्वरानन्द नामक साधु का अपने उच्च कक्षा में पढ़ने वाले साधु के प्रति ईर्ष्या डाह बढ़ता गया क्योंकि पंडित जी उसे अधिक प्रेम करते हैं। मंत्री जी ने इसे अधिक समय पढ़ाने के लिये निर्धारित किया है।

ईर्ष्या से जलता हुआ उसने चाकू छाती में मार आत्महत्या का प्रयास किया वह पीड़ा नहीं सही गई तब कुएं में छलांग लगाई वहाँ से भी बचा लिया गया। तब कुछ भी दवा लेने से इन्कार करने लगा, क्या होगा दवा लेकर शरीर ने तो जाना ही है। इस प्रकार वह पागल हो गया। उस पागलपन में मारना पीटना न था, केवल हीन भावना, मर जाने की भावना ही थी। पागल होने से पहले उसकी दशा यह थी, शांत सा दिखाई देना, कम बोलना, समाज में न बैठना, अलग थलग रहना इन कारणों से घुटन बढ़ती गई। कभी भी अपने मनोभाव या उद्गार खुल कर साथियों में प्रकट न करना। वह घुटन इतनी बढ़ी कि उसने आत्महत्या के लिए तैयार कर दिया।

मानसिक रोगियों के रक्त में कुछ ऐसे तत्व पाए जाते हैं जो स्वस्थ व्यक्ति के रक्त में नहीं होते।

क्रोध व द्वेष से रोग—एक महिला अनेक रोगों से ग्रस्त बनी रहती थी, चिकित्सा कराने से कुछ लाभ नहीं हुआ तब मनोवैज्ञानिक ने अध्ययन कर निर्णय दिया उसका अपनी बहन के प्रति द्वेष बना हुआ है उसे बहन से प्रेम बढ़ाने के लिए कहा गया पर उसने चिढ़-

कर उत्तर दिया यह नहीं हो सकता परिणामतः वह रोगी बनी रही। समय बीता, कुछ राहत न मिलती देख निराश होकर उसने व्यवहार बदला, प्रेम करना आरम्भ किया। कुछ ही दिनों में गहरा प्रेम हो गया उसी के साथ ही वह ठीक भी होने लगी, समय पर स्वस्थ हो गई।

क्रोधावेश में मृत्यु :—होटल का मैनेजर जो समाज में खासा तगड़ा दिखाई देता है। एक नौकर ने उसकी आज्ञा के बिना ही एक कप चाय पी ली। बस इतने में ही वह आग बबूला हो गया। उस नौकर को शूट करने के लिए पिस्तौल ले उसके पीछे दौड़ा, उतने में ब्लडप्रेशर बढ़ा, दौरा हुआ, चक्कर आया, गिरा और मर गया।

इसी प्रकार क्रोध के आवेश में दमे का दौरा होना व अन्यान्य रोग भी पाए गए।

एक महिला किसी पड़ोसिन से खूब लड़ी क्रोध किया उसके तुरंत बाद ही छोटे बच्चे को स्तन पान (चूची का दूध) कराया, क्रोध के कारण दूध जहरीला हो गया था जिससे उसका बच्चा मर गया। क्रोध खून को जहरीला बनाता है। जहरीला खून ही अनेक रोगों का कारण बन जाता है। ब्लडप्रेशर, खाज, खुजली, एग्जिमा जैसे रोग भी वनते हैं।

सरलता से समझ में आने वाली बात है लोभ से अपच, लीवर-विकार अनिद्रादि दोष होंगे ही, लोभी व्यक्ति अधिक खाएगा और अपच संबंधी रोग बनाएगा। स्वभाव से अनुदार कंजस आदमी को कब्ज का विकार भी संभव है। कब्ज आगे चलकर स्वतः अनेक रोगों की माँ (जननी) बन जाएगी।

शारीरिक रोगों से भयंकर मानसिक रोग—जहां यह बात है कि मानसिक विकार शारीरिक रोगों के कारण हैं वहां यह भी उतना ही सत्य है कि शारीरिक रोग भी भयंकर मानसिक रोगों को पैदा करते हैं। शरीर में बने दाद एग्जिमा को त्वचा का ही रोग मानकर ज्यों

ही दवाएं लगा उन्हें दबाया जाता है वे भीतर को ओर दब अन्दर ही अन्दर दमा व दिल संबंधी रोग बन जाते हैं। कोई भी व्यक्ति जब किसी मरहम या दवा का चमत्कार सुनाता है जिसके लगाने से दाद एग्जिमा जैसे रोग ठीक होते जान पड़ते हैं तो मैं उन्हें समझाता हूँ कि इस त्वचा संबंधी रोग को बदलकर प्रकट होंने में छः मास से अधिक नहीं लगेंगे।

दिमाग के नजदीक हुए दाद एग्जिमा को ज्यों ही तेज दवाएं लगा कर दबाया गया कि वह दिमाग का रोग ही बन गया। वहम पागल-पन के रूप में बदल गया। शरीर के अन्य भागों में दबाए गए दाद एग्जिमा, छाती, फेफड़ा व दिल के रोग के रूप में बदल जाते हैं। सिद्धांत रूप में यह कहना चाहिए मानस विकारों से तो शारीरिक रोग होते ही हैं। विपरीत इसके शारीरिक रोगों से भी मानस रोग होते हैं।

स्वार्थ, संकीर्णता, रूढ़िवादिता का उन्माद—

पहले जिस प्रकार के उन्माद का वर्णन किया गया वह एक वैय-क्तिक उन्माद था अब उससे भी व्यापक जो समाज, जाति, राष्ट्र को दूषित व बर्बाद करने वाले उन्माद की बात कही जा रही है। वह भी दिमाग की विकृत दशा का ही रूप है। जब कोई शक्तिशाली नेता, कोटि का व्यक्ति संकीर्ण दिमाग से, रूढ़िवादिता से चिन्तन करने लगता है परिणामतः उस विकृत चिंतन से बहुत बड़ा समाज, जाति व देश प्रभावित होते हैं। विचार से आदमी बनता भी है बिगड़ता भी है। विचार से देश बनते व बिगड़ते हैं। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का एक विद्यार्थी अब्दुल लतीफ था जिसके अंग्रेज प्रोफेसरों ने उसके दिमाग में विचार भरा पाकिस्तान का। बस फिर क्या था अब्दुल लतीफ पाकिस्तान के नक्शे बनाकर भारत में भेजने लगा। उसके संबंध में पोस्टर व छोटी पुस्तकें छाप कर भारत में भेजने लगा। उसक आरम्भ में तो उसकी बात किसी ने न सुनी, मिस्टर जिन्ना ने भी कहा अब्दुल लतीफ पागल है। अंग्रेजों की प्रचारक मंडली अब्दुल लतीफ

के पीछे कार्य कर रही थी। धीरे २ यह विचार जड़ें पकड़ने लगा। मुस्लिम लीग की मांग हो गई और १६४७ में भारत के दो भाग हुए। लाखों मौत के घाट उतारे गए। हजारों देवियों का सतीत्व लूटा गया। हजारों बच्चे नेजों पर लटकाये गए। एक करोड़ आदमी घर से बेघर हुए। चले थे बहिश्त (स्वर्ग) बनाने बन गया जहन्नुम (नर्क)।

"जैसा कर्म वैसा भोग"

आग लगाने वालों के भाग्य में आग है, तलवार चलाने वालों के भाग्य में तलवार है। जो दूसरों की राह में कांटे बिछाते हैं उन्हें फूलों की सेज कैसे मिलेगी। विचार की शक्ति तोप वन्दूक पिस्तौल एटम बम और हाइड्रोजन बम से बड़ी है।

अतः बुरे विचार एक बहुत बड़ा पागलपन है। शास्त्रों में स्थान स्थान पर मानसिक पवित्रता की प्रार्थना की गई है। गायत्री मन्त्र में भी **"धियो योनः प्रचोदयात्"** हमारी बुद्धियाँ पवित्र हों अन्यत्र भी **"तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु"** मेरा मन पवित्र हो। इस प्रकार मन को पवित्र बनाने की प्रार्थना की गई।

जो सुख देता वह सुख पाता।
मानुष अपना भाग्य विधाता॥

'रोग-निदान का सरल सूक्ष्म विज्ञान'

आज की संवृद्ध विकसित मानी गई एलोपैथी चिकित्सा के मत से इस पांच छः फुट लम्बे तगड़े शरीर में पांच हजार संख्या में रोग पाये जाते हैं। इस के अतिरिक्त नए २ रोग भी प्रकट हो रहे हैं। प्राकृतिक चिकित्सा के विद्वान रोगों के उन सारे नामों को मानकर भी सभी रोगों का मूल कारण एक विजातीय द्रव्य (फारन मैटर Foreign matter) मादा फासिद (उर्दू) मानते हैं। एक कारण में सारे रोगों का समावेश किया। इसी कारण के रोग निवारण के उपाय

में उपचार समता रखी गई। मैंने उन विद्वानों के सूक्ष्म रहस्य को समझते हुए रोग निदान का एक सरल सूक्ष्म ढंग देखा। इस रहस्य को समझाने के लिए सारे रोगों का वर्गीकरण इस प्रकार किया—

"गुहात्रयप्रविष्टाः सर्वे रोगाः या सरल शब्दों में स्थानत्रयप्रविष्टाः सर्वे रोगाः" तीन गुहाओं या तीन स्थानों में सारे रोग छिपे हैं। वे तीन गुहाएँ या तीन स्थान इस प्रकार हैं :—

१. पहली गुहा—पेड़ू संस्थान, नाभि के चहुँ ओर का भाग, छोटी बड़ी आंत व गुर्दे।

२. दूसरी गुहा या स्थान—आमाशय, मेदा (उर्दू), स्टमक (Stomach); लीवर (Lever)–यकृत या जिगर (उर्दू); तिल्ली प्लीहा (Spleen); ऊपर छाती का भाग फेफड़े–फुफ्फुस तक का भाग।

३. तीसरी गुहा या स्थान—कन्धे से ऊपर का सारा भाग–गला टांसिल, मुँह, नाक, कान, आँख, माथा, सिर आदि।

भले ही इन तीन गुहाओं या स्थानों में समाए हुए ये सारे रोग हैं। फिर भी रोगों के निर्माता मुख्यतः दो स्थान हैं—पहली व दूसरी गुहा।

तब मैं कहता हूँ—"गुहाद्वयनिर्माताः सर्वे रोगाः" या "स्थानद्वयनिर्मिताः सर्वे रोगाः" सारे रोग दो गुहाओं या दो स्थानों में निर्मित हैं।

इन दो स्थानों में इनका निर्माण हो रहा है। वे स्थान हैं—पहली व दूसरी गुहा।

इस रहस्य को समझाने के लिए अब मैं आगे बढ़ता हूँ। कुछ उदाहरणों से इस रहस्य को स्पष्ट किया चाहता हूँ।

उदाहरण स्वरूप टाँसिल को ही लें—मैंने उसे तीसरी गुहा या स्थान का रोग दिखाया, भले ही टाँसिल का स्थान गला है। पर वह गले का रोग नहीं। उसका सीधा संबंध नीचे की दूसरी गुहा स्टमक (Stomach), आमाशय या मेदे से है। विकृत आमाशय उसे उभारे हुए

है। आमाशय को साफ़ कर ले, उभरा टांसिल गायब हो जाएगा। अपनी इस बात को समझाने के लिए मैं प्रसिद्ध उदाहरण देता हूँ। एक आदमी के पैर के अंगूठे में या हाथ के अंगूठे में चोट लगी। अंगूठा पक गया। उस पके अंगूठे का उभार जांघ में या काँख में हुआ। चलना कठिन हो रहा है। बाहू हिलाना व उठाना कठिन हो गया। अब जाँघ की गाँठ या बाहू की उभरी गांठ के इलाज पर यदि कोई पैथी जोर देती है, तो मेरी दृष्टि में बहुत बड़ा अज्ञान है, पागलपन है। टांसिल का आप्रेशन कर उसे ठीक करने की बात सोचना भयंकर भूल है। इलाज होना चाहिये स्टमक (Stomach) का जिसने उसे उभारा है।

ठीक एक दूसरा उदाहरण लें—एक आदमी को पीलिया हो गया, आँखें पीली हैं, उसे हर चीज पीली दीखती है। कहने को को आँखों का रोग है, दीखता भी नहीं है। पर क्या यह आँख का रोग है ? हरगिज नहीं। यह लीवर का विकार है। पित्ताशय की विकृति से हो रहा है। मेरे इस कथन पर विद्वान वैद्य व हकीम अपनी मोहर लगा रहे हैं। कभी किसी को संदेह भी हो जाए, मतभेद हो जाए तो भी यह निदान अपने में अकाट्य है। इसी प्रकार आँख का आना (दुःखना), आँख की ललाई व अन्य रोगों का संबंध भी सीधे दूसरी गुहा स्टमक (Stomach) व लीवर की विकृति के साथ है।

इससे भी आगे बढ़ कर देखें, आँखों में होने वाले सफ़ेद मोतिया के मूल में भी आमाशय व लीवर की गड़बड़ी अर्थात् दूसरी गुहा का विकार ही कारण है। ऐसा मानकर ही दूसरी गुहा की शुद्धि करा यौगिक क्रियाओं से व अनेक बच्चों के चश्मे उतरवाए, बड़ों के लगे हुए चश्मों के नम्बर घटाए। आंख के डाक्टर ने भले ही आज तक किसी का चश्मा न उतरवाया हो, पर हमने आँख का डाक्टर न होते हुए भी कितने चश्मे उतरवाए।

इसी प्रकार कान के रोगों में भी पस आना, दर्द करना, साँ-साँ की आवाज आनी इन सारे रोगों में सीधा संबंध दूसरी गुहा आमाशय से है।

इसी प्रकार अब लें सिर दर्द को, कहने को यह सिर का दर्द, मेरे शब्दों में तीसरी गुहा या तीसरे स्थान का है। पर उसकी जड़ें पहली या दूसरी गुहा में हैं। भले ही योग्य वैद्य उसे भयंकर कब्ज का परिणाम कहें या विकृत लीवर का विकार या बढ़े हुए पित्त को कारण बताएँ या बिगड़े जुकाम, रेशे का जमाव कहें; जुकाम, रेशा सिर में नहीं बना, आमाशय में बना है, वहीं से उठकर ऊपर आया है। अब भले ही ऊपर आकर जमते-जमते जो भी शक्ल बना ली है, रेशा नजला जमकर तरल या ठोस रूप में परिणित हो गया। इस समय रसौली (ट्यूमर, Tumor) या कोई और रूप लिये हुए है। जो भी हो, उसका मूल उद्गम स्थान नीचे की एक या फिर दोनों गुहाएं हैं। वर्षों के अनुभव से मैं कह सकता हूँ कि यह एक निर्विवाद अकाट्य सत्य है।

वर्षों से भयंकर शिरोवेदना से पीड़ित रोगियों की चिकित्सा करते हुए ये तथ्य मेरे सामने आए, रोग की तहें खुलीं, आंतों से सड़ा जमा आँव निकला तब जाकर उन्होंने कहीं सिर पीड़ा से छुटकारा पाया।

इसी प्रकार हाथ का ठीक काम न कर सकना, हस्ताक्षर करने में भी कठिनाई का अनुभव करना, जिसे आज की एडवांस व साइन्टीफिक मानी जाने वाली ऐलोपैथी के सिद्धान्त में पारकिनसन्स डिज़ीज है, जिसका ऐलोपैथी में कोई इलाज नहीं है। यह रोग भी लीवर की गड़बड़ी के परिणामस्वरूप है। भले ही लीवर स्वयं विकृत हो, स्नायु मंडल को प्रभावित कर इस समय उस रोग का सीधा संबंध स्नायु मंडल से जोड़ दिया है। पर वास्तव में लीवर की खराबी से ही उसकी शुरूआत है। प्रयोग से सिद्ध हुआ लीवर के सक्रिय होते

ही हाथ कंपन में आशातीत सुधार हुआ, धन्यवाद के पत्र आने लगे।

इन कतिपय उदाहरणों से यह सिद्ध हो जाता है कि ऊँची सत्ता (बुलंदी) पर पाए जाने वाले रोगों की जड़ें अर्थात तीसरी गुहा के रोगों की जड़ें भी बहुत नीचे की पहली व दूसरी गुहा में पाई जाती हैं। आंख, कान, नाक व गले के रोगों के माने जाने वाले स्पैशिलस्टों को भी वैसी अनुभूति नहीं हो रही।

इसी प्रकार मेरे द्वारा किया गया, वर्गीकरण एक मौलिक अस्तित्व रखता है।

जैसे मैंने तीन गुहाओं का भेद पूर्व में वर्णन किया कि पहली व दूसरी दो गुहाएँ रोग निर्माण करने वाली हैं जबकि तीसरी गुहा में विकार संचित हो रहा है। विकार वहाँ स्टोर किया जा रहा है। संचित किया हुआ विकार रोग का रूप ले रहा है। अब मैं इसके आगे शरीर में पाए जाने वाले रोगों का वर्गीकरण इस प्रकार की भाषा से करूँगा कि कौन-कौन रोग प्रथम गुहा–प्रथम स्थान या दूसरी गुहा — दूसरे स्थान से संबंधित है। इस प्रकार रोगों के स्थान का वर्गीकरण हो जाने पर इलाज करते समय हम उस मूल कारण पर ही जोर देंगे न कि रोग के पाये जाने वाले स्थान पर। यह बात अलग है जहाँ रोग उभरा हुआ है वहाँ भी कुछ स्थानीय (लोकल) इलाज करेंगे ताकि पीड़ा में लाभ हो जाए पर विशेष ध्यान हमारा सदा उस मूलकारण स्थान की ओर रहेगा। ऐलोपैथी जैसी मूर्खता नहीं करेंगे कि गले में टांसिल उभरे दिखाई दिये तो गले का आप्रेशन कर दिया। गुदा में मस्से दिखाई दिए, तो गुदा का नाक में बढ़ा हुआ मांस देखा तो नाक का आप्रेशन सोचा या बिजली की मशीन से जला दिया। इस प्रकार का इलाज नासमझी का मूर्खतापूर्ण अवैज्ञानिक इलाज है। जहाँ जो कुछ दिखाई दिया बस उसे ले बैठे, उसी स्थान के एक्स-रे होने लगे। वहाँ की ई. सी. जी. का गई, उस स्थान का आप्रेशन सोचा गया। उसके मूल स्रोत की ओर ध्यान ही नहीं।

रोगों का वर्गीकरण करते समय कुछ रोग तो इतने स्पष्ट हैं जिन्हें झट से पहले स्थान या दूसरे स्थान में जोड़ा या दिखाया जा सकता है। कुछ रोग ऐसे हैं जो दोनों गुहाओं से जुड़े हैं। ऐसा भी वर्ग जिस में पहली व दूसरी गुहा से सम्बिन्धित होते हुए भी और आगे बढ़ गए हैं। जैसे उन्माद, हिस्टीरिया जैसे रोग स्नायु मण्डल से जुड़ गए है। दाद, एक्जिमा, जैसे भयंकर रोगों की तह में पेडु संस्थान की सडांद तो मुख्य कारण थी ही, उसके साथ ही साथ लीवर भी विकृत था। पित्ताशय विकार से भरा रहता है। इन सब दोषों, विकारों का भेद उस समय खुलता है, जब उपवास कराया जाता है। उसके पहले तो पता भी नहीं चलता, रोगी खाता-पीता मस्त अपने को तगड़ा अनुभव करता है। उसे यह महसूस ही नहीं होता कि कहीं कोई विकार है। उसे अपना उभरा हुआ रोग ही एकमात्र दिखाई देता है। रोगी को तो दीखता ही है। बड़े-२ डाक्टर वैद्य हकीमों को भी वैसा दिखाई पड़ता है। समझदार चिकित्सकों की भाषा बन गई कि "स्किन डिजीज" त्वचा का रोग है। मानो और सब कुछ तो ठीक ही है केवल त्वचा पर विकार या रोग है। यह नहीं पता त्वचा के नीचे गंदा खून वह रहा है। खून को गंदा करने में आँतों की सड़ाँध व लीवर गड़बड़ है। फिर भी मैं ऐसे रोगों को अलग ही रख देता हूँ ताकि चिकित्स्कों व आम जनता की मान्यता में बहुत खलबली न मचे न उन्हें विरोध ही दिखाई पड़े। पहली गुहा का स्थान मैंने छोटी-बड़ी आंत अर्थात् नाभि के चहुं ओर का भाग व गुर्दे बताया। इस स्थान में मल संग्रह होने पर वहां की सड़ांद से दूषित गैस उठ रहे हैं। ठीक उस दशा का अनुभव करें जब कभी ऐसी किसी सड़ी गली दुर्गन्धपूर्ण नाली पर से गुजरना होता है। वह सड़ांद आपके दिमाग में ऐसी टकराती है कि आप घबरा जाते हैं। ऐसी घिनौनी दशा होती है कुछ कह नहीं सकते। वे उठने वाले दूषित गैस, दुर्गन्धित वायु ऊपर की ओर प्रवाहित हो रहे होते हैं। भले ही वे पेट से ऊपर उठ सीधे छाती की ओर आ रहे हों, छाती को प्रभावित कर रहे हों।

हृदय के विभिन्न रोगों का निर्माण कर रहे हों, या सीधे प्रत्यक्ष में छाती का भारीपन या दर्द प्रकट कर रहे हों, अथवा कमर की ओर से पीठ की तरफ जा रहे हों। पीठ में दर्द होना, भारीपन व उभरा सा लगना ये उसके लक्षण होंगे। यह बात अलग है कि कमर से ऊपर उठते हुए वे सीधे ही पीठ की ओर बढ़ रहे हैं। या फिर पीठ की ओर बढ़ते हुए दाईं ओर से या बाईं ओर से ऊपर जा रहे हैं। जिस करवट मनुष्य सोता है विकार उसी ओर से ऊपर जाने का मार्ग बनाता है।

इस प्रकार अनेक ऊपर दीखने वाले रोगों के मूल में विकृत प्रथम गुहा कारण है। पेट के ऊपर के भागों में कहीं प्रथम गुहा, कहीं दूसरी गुहा, कहीं दोनों गुहाएं मिलकर कारण हो रही हैं। यह सूक्ष्म ज्ञान है। पेट के नीचे के रोगों में कमर से लेकर नीचे पैर के तलुए या एड़ी तक के सभी रोग सारी पीड़ाएं एकमात्र प्रथम गुहा के विकृत होने से हैं।

आप को यह सूक्ष्म रहस्य देकर मुझे आप के हाथ में एक 'की' Key चाबी देनी है जिससे आप स्वयं अपनी बुद्धि से पीड़ाओं का सफल उपचार कर सकें। किसी स्थान की पीड़ा, सूजन, या जलन है तो इस चक्कर में पड़ने की आवश्यकता नहीं, कि किसी योग्य डाक्टर को दिखाएं या किसी विशेषज्ञ से चैकअप कराएं। एक्सरे या टैस्ट कराया जाए, टैस्ट हुआ पड़ा है ऐसा समझें। न निदान की आवश्यकता है न किसी अन्य परीक्षण की। अब मैं कुछ पीड़ाओं के नाम लिख देता हूँ, बाद में उपचार का एक साधारण ढंग बता दूंगा।

१. कमर दर्द। २. पेट–जंघाएं भारी मोटी हैं या पीड़ा रहती है। ३. घुटनों में सोजिश, दर्द, अकड़ाहट। ४. पिंडलियों का भारीपन या दर्द, पीड़ा, चुभन या जलन। ५. एड़ियां दुःखती हैं। ६. पैर के तलुए में जलन होती है जो कि खासकर पेड़ू में आंव का जमाव सिद्ध करती है। ७. पैर के अंगूठे या किसी अंगुली में अकड़न,

शून्यता या पीड़ा है बस निश्चित समझें पेड़ू संस्थान की सडांद से ये सब पीड़ाएं हैं। जब यह सुनिश्चित है कि कारण पेड़ू में है तव मुख्य इलाज भी उसी का करना है। ये थोड़ी सी पीड़ाएं मैंने नमूने के रूप में दिखाई हैं। इस प्रकार की अन्य किसी नाम रूप व शकल को लिए तकलीफ है तो उसका कारण भी वही है। फिर चाहे भयंकर शायटिका पेन हो या कोई और पीड़ा। तब पेड़ू संस्थान की सफाई के लिए इसी पुस्तक में दिया एनिमा चार्ट चलाएंगे। एनिमा के पहले पेड़ू को सेंककर पौन घंटा मिट्टी पट्टी रखेंगे जो मल को फुला देगी। फूले मल को एनिमा निकाल देगा।

एनिमा न होने पर पेट को साफ करने के लिए (सौम्यं विरेचन) हल्का जुलाब दिया जाना चाहिए। (१) २५,३० मुनक्का एक तोला सूखे गुलाब थोड़े पानी में उबाल मसल छान पीना। अथवा ताजे गुलाब फूल दो तोले, ३० तीस दाने मुनक्का (बीज निकले) पीस चटनी सी बना बराबर आठ दस दिन तक सेवन करना या और अधिक दिन तक।

(२) दो तोला चोकर पाव भर पानी या दूध में पका बीच में तीस दाने मुनका डाल लप्सी बना खाना कुछ दिन तक। दूध की अपेक्षा पानी अधिक अच्छा है।

(३) त्रिफला चूर्ण एक तोला ले पानी में नीबू रस मिला पीना।

(४) पूर्व बताए सामान्य विरेचन यदि ठीक काम न करें तब थोड़ा अधिक प्रभाव डालने वाला निम्न प्रयोग करें—अमलतास का गूदा दो तोले, मुनक्का बीस, सौंफ एक तोला, सनाय तीन माशे पानी में उबाल पिलाया जाए।

(५) बेल का ताजा गूदा पांच तोले, मुनक्का २०, चोकर भुना हुआ दो तोले मिला हलुआ सा बंना सेवन करें निरंतर कुछ दिन तक। ये सौम्य विरेचन के कुछ नमूने मैंने दिखाए इसी प्रकार की अन्य चीजें ली जा सकती हैं।

अब करें स्थानीय उपचार—इस संबंध में भी मैं कुछ मौलिक संकेत देना चाहूँगा। स्वयं अपने विवेक से काम लें। कमर या टांग व घुटने के दर्द में गर्म ठंडे सेंक से लाभ होगा। भाप देकर ठंडे पानी में भीगे कपड़े से पोछें। उसी समय पीड़ा वाले स्थान पर उतनी बड़ी मिट्टी की पट्टी रखी जाए पौन घंटे या एक घंटे तक। पैरों के तलुओं में जलन होने पर पैरों पर ठंडी मिट्टी का लेप करें। पीड़ा व जलन के स्थान पर जैसा उपचार सहन हो तथा अनुकूल जान पड़े वैसा करें। भाप या ठंडा-गरम सेंक, या केवल ठंडी पट्टी या ठंडी मिट्टी की पट्टी।

———

"सुख दुःख का कारण"

मानव के सुख-दुःख के सम्बन्ध में चिन्तन करते हुए पवित्र-हृदय महर्षियों ने देखा कि उसके अच्छे-बुरे कर्म ही उनके मुख्य कारण हैं, जिन्हें पुण्य-पाप की संज्ञा दी गई है।

पुण्य कर्मों के परिणामस्वरूप सुख, ऐश्वर्य, शांति, अभीष्टप्राप्ति, सुख, सन्तान, सुमित्र, अनुकूल संरक्षक, भृत्य तथा निश्छल निष्कपट मार्गदर्शक गुरु आदि की प्राप्ति तथा पाप कर्मों के परिणाम-स्वरूप रोग, शोक, दुःख, अनैश्वर्य, इष्टनाश, कुसन्तान, कुमित्र, कुभृत्यादि की प्राप्ति।

इस प्रकार एक कार्य--कारण-भाव निश्चित किया और बताया कि ऐसा समझने पर यदि कहीं इसके विपरीत अपवाद दिखाई दे, तो समझो, कि पूर्व कर्मों का फल है जिन्हें हम नहीं देख रहे। भले ही वे इस जन्म के हों या किसी पूर्व जन्म के। स्थान-स्थान पर ऐसे संवादों द्वारा इसे सिद्ध करने का प्रयास किया गया। महाभारत में एक प्रसंग में कहा—

पुरा कृतानि पुण्यानिफलन्त्यत्र युधिष्ठिर।
सुख-सौष्ठव-रूपेण तथैवेष्ट-संपादनैः॥
तथा—पुरा कृतानि पापानि फलन्त्यत्र युधिष्ठिर।
दुःख-दौर्गत्यरूपेण तथैवेष्ट-विघातनैः॥

अर्थात् पूर्वकृत पुण्य फलित होते हैं सुख, ऐश्वर्य, इष्ट, अनुकूल-प्राप्ति के रूप में तथा पूर्वकृत पाप दुःख, दुर्गति, इष्ट-विनाश के रूप में प्रभाव दिखाते हैं। स्पष्ट हुआ कि जो मनुष्य सुख, शांति, सुसन्तान, ऐश्वर्य आदि चाहता है उसे चाहिए—धर्म करे।

धर्म की व्याख्या करते हुए महर्षि पतञ्जलि ने लिखा—

यतोऽभ्युदेयनिःश्रेयस्सिद्धिः सः धर्मः

जिस से इहलौकिक उन्नति व कल्याण सिद्धि हो, वह धर्म है।

धारणात् धर्म इत्याहुः, धर्मो धारयते प्रजाः।
वस्स्यात् धारणसंयुक्तः, स धर्म इति कीर्तितः॥

धारण करने के कारण ही उसे धर्म कहा जाता है। उस धारक शक्ति से प्रजा, लोक-समूह स्थिर है, धारण करने वाले गुण या तत्त्व को धर्म कहते हैं। हर वस्तु को स्थिर रखने वाला उसके भीतर का तत्त्व ही धर्म कहलाता है जो उसे सुशोभित किए रहता है। इसी धर्म के प्रसंग में ब्राह्मण ग्रंथों में लिखा—

"त्रयो धर्म-स्कंधा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति"

धर्म के तीन आधारस्तंभ हैं—

१. यज्ञ, २. अध्ययन व ३. दान।

१. यज्ञ—का उद्देश्य है मेरे द्वारा प्रकृति में की गई विकृति को दूर करना, क्षति की पूर्ति करना एवं कर्तव्यबुद्ध्या अपनी ओर से कुछ नवरचना, नूतन कृति करना। प्रत्येक व्यक्ति का जीवन प्राकृतिक तत्वों के उपभोग से चल रहा है। उपभोग के कारण प्रकृति में विकृति व क्षति भी हो रही है। अतः गन्दगी दूर करने व कमी को पूरा कर देने के निमित्त जो कर्म होगा, उसे यज्ञ कहेंगे। जिसका एक छोटा, एक प्रकार का रूप है अग्निहोत्र या हवन करना। ऊपर बताए उद्देश्य को सम्मुख रखते हुए अन्य शोधक, रचनात्मक कर्म यज्ञ नाम से कहे जाएंगे।

२. अध्ययनम्—मन बुद्धि को पवित्र, उज्ज्वल करने वाले, अध्यात्म विचारों से भरपूर, वेदादि सत् शास्त्रों का पठन-पाठन करना, पवित्र मंत्रों का जप तथा अपने जीवन का स्वयं द्रष्टा बनने का चिन्तन-अध्ययन करना स्वाध्याय कहाता है। रात्रि को सोने से पहले अथवा

दिन में भी अपने व्यापारों, कर्मों को पृथक होकर देखना, मेरे द्वारा हुए ये कर्म कितने उचित व अनुचित हैं, श्रेष्ठ मनुष्यों जैसे हैं या साधारण मानव के या पशु व दानव के हैं, मेरे द्वारा किसे सुख पहुँचाया गया—इस प्रकार अपनी डायरी लिखकर या वैसे चिंतन कर जीवन उज्ज्वल बनाने का प्रयत्न करना स्वाध्याय है ।

३. दानम्—मेरे मन, धन सम्पत्ति, बुद्धि, शरीर का दूसरों के अभावों की पूर्ति में लग जाना अथवा किसी श्रेष्ठ विकास के लिये उपयोगी बन जाना ।

मैंने अपने गुरुजनों तथा समाज के विभिन्न व्यक्तियों से समय समय पर अनेक प्रकार से सहायताएं, सेवाएं प्राप्त की हैं, अब इस योग्य हुआ हूं कि उसी प्रकार की सेवाएं कर अपने को उस ऋण से मुक्त कर लूं, ऐसा मान कर्तव्य-बुद्ध् या श्रद्धा-प्रेम से समाज के प्रति अर्पण-बुद्धि दान है ।

दान की अनिवार्यता बताते हुए उपनिषत् ने कहा—

श्रिया देयम्, ह्रिया देयम्, भ्रिया देयम्, संविदा देयम् ।

श्रद्धा समन्वित हो खूब ठाट से दो, न देने में लज्जा का अनुभव करते हुए दो । निंदा की भीति से बचने के विचार से दो, प्रसन्नता पूर्वक दो । जैसे भी हो अवश्य दो, इसी में तुम्हारा कल्याण है । न देने में ही अकल्याण है । इस प्रकार मानव-कल्याण-निमित्त दान पर बड़ा जोर दिया ।

अन्यत्र भी कहा है—

दानेन हन्यते व्याधिः, दानेन हन्यते ग्रहाः । दानेन हन्यते शत्रुः ।।
दानेन भूतानि वशीभवन्ति, दानेन वैराण्यपि यान्ति नाशम् ।
दानेन सर्वाणि सुखानि संति, दानं हि सर्वव्यसनानि हन्ति ।।

अर्थात दान के द्वारा सब प्राणी वश में हो जाते हैं, दान से सब वैरविरोध शांत होते हैं, दान से सब सुख मिलते हैं, दान सभी संकट विपत्तियों को हटा देता है ।

शास्त्र ने तो दान की महत्ता बताते हुए स्थान-स्थान पर उपदेश दिया। गीता में दान के विभाग कर सात्विक, राजसिक, तामसिक तीन प्रकार के दान कहे हैं। सात्विक दान के सम्बन्ध में लिखा है, कि कर्त्तव्य-बुद्धि की पवित्र भावना से अच्छे योग्य सदाचारी अधिकारी को जो दिया जाता है वह प्रभावकारी होता है।

मैंने देखा एक बच्चा बीमार बना रहता था, खून के दस्त होते थे। देखने से पता चला कि वह महान् कंजूस बन रहा है। हमारे घर से वह चीज क्यों ले जा रहा है इस प्रकार छोटी-छोटी बातों में रोता। उसकी माता को सुझाव दिया गया कि इसके हाथ से प्रसाद बंटवाओ, दान कराओ। इसके मन की संकीर्णता का प्रभाव आंतों पर पड़ रहा है। पहले-पहले तो देने के लिये उसकी मुट्ठी न खुलती, धीरे-धीरे सर्वप्रथम घर के व्यक्तियों—माता, बहन आदि को देने लगा। उत्साह दिला, समझा दूसरों को दिलाया, नित्य नियम से बच्चों में प्रसाद बाँटने लगा। थोड़े ही दिनों में अन्य साधारण उपायों से ठीक हो गया। इसलिए कल्याणाभिलाषी मानव को चाहिए कि अपनी आय के अनुपात से अवश्य दान करे। आय का दसवां भाग, या बीसवां भाग, और कम, तो चालीसवां भाग तो अवश्य करे।

श्रीमद्भागवत में अत्यन्त सुन्दर ढंग से दान का विभाग किया—

दानाय यशसेऽर्थाय कामाय स्वजनाय च।
पञ्चधा विभजन् वित्तम् इहामुत्र च मोदते॥

वह श्रेष्ठ पुरुष इह लोक एवं परलोक में सुखभागी होता है जो अपनी आय को इस प्रकार पांच भागों में विभक्त कर उपभोग करता है—एक भाग शुद्ध सात्विक दान में, दूसरा भाग यश के काम में, तीसरा अपने उपभोग में, चौथा बन्धु-बांधवों की सेवा में अर्पण करता है और पांचवाँ भाग अपने व्यापार के काम में लगाता है। ऊपर के सारे विस्तृत विवेचन का भाव है कि किसी प्रकार रोगी हृदय से दान भाव को अपनाए, जिससे उसका कल्याण हो।

दान देने से मनुष्य के हृदय में प्रसन्नता का संचार होता है।

हृदय की प्रफुल्लता से हृदयाकाश बढ़ने सा लगता है। हृदय की प्रसन्नता का स्नायु-संस्थान पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है, जिसके फलस्वरूप रसवाहक ग्रन्थियों में से आरोग्यप्रद रसस्राव होने लगता है। इस प्रकार रोगी क्रमशः आरोग्य लाभ करता है।

तुम्हारे पास जो हो, वह दान करो। शक्ति, साधन और सम्पत्ति को परोपकार में लगाने का नाम दान है। इसी का नाम सेवा है। पढ़े लिखे हो तो दूसरों को मुफ्त पढ़ाओ। धन हो तो उससे समाज की आवश्यकता की पूर्ति करो। बुद्धि विशेष है तो भूले भटकों को मार्ग बताओ। पथिक को आश्रय दो। गायों का पालन करो। निरुद्यमी को उद्यम दो। भगवान ने तुम्हें शक्ति, साधन, सम्पत्ति प्रदान की है, वह प्राणी मात्र के हृदय में बसते हैं—ऐसा समझते हुए उनकी सेवा में खर्च करके भगवान् की सेवा करो और भगवान् को प्रसन्न करो।

संसार का प्रत्येक व्यक्ति सुख चाहता है। सुख धर्म के बिना नहीं प्राप्त हो सकता। इसलिए सुख चाहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को धर्म का पालन करना चाहिए। रोगी, शोकग्रस्त व बेकार की सहायता करो अपनी शक्ति के अनुसार।

परहित सरिस धर्म नहीं भाई, पर-पीड़ा सम नहिं अधमाई ॥

एक नियम है—जैसा तुम दूसरों के प्रति करोगे, वैसा ही तुम्हारे पास लौटेगा। प्रेम के बदले प्रेम पाओगे, घृणा के बदले घृणा। दया, सहानुभूति के बदले दया, सहानुभूति प्राप्त करोगे।

"गुहां प्रविष्टावात्मानौ हि तद्दर्शनात्"

जीवात्मा-परमात्मा दोनों शरीर के भीतर गुहा में प्रविष्ट हैं। भाग्यशाली लग्न वाले प्रयत्नशील व्यक्ति ही अभ्यास द्वारा शरीर के भीतर गुहा में प्रवेश कर उनका साक्षात् करते हैं। ठीक ऐसे ही जटिल पुराने रोगों की जड़ें शरीर के भीतर गुहा में स्थिर हैं। उन्हें समझना, समझ कर धैर्यपूर्वक सतत प्रयास से उन पर प्रहार करना, उन्हें उखाड़ना, आत्मसाधना की भाँति कठिन काम है। जैसे—

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चित् यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ।।गीता ७/३।।

गोता में भगवान् कृष्ण कहते हैं कि आत्मदर्शन के लिए हजारों में बिरले जन ही तत्पर होते हैं। प्रयत्न में लगे हुए भी बिरले ही मानव धैर्य धारण कर आत्मदर्शन-रूप लक्ष्य प्राप्त कर पाते हैं। इधर जटिल असाध्य रोगों में फंसे रोगियों की मानस दशा भी ऐसी होती है। बिरले ही सच्चे स्वास्थ्य के अभिलाषी भाग्यशाली साहसी जन धैर्यपूर्वक पूर्ण प्रयत्न कर सच्चा स्वास्थ्य प्राप्त करते हैं अन्यथा शरीर-रथ को किसी प्रकार सरकाने की योजना बना स्थिर हो जाते हैं।

साधारण नए रोगों की तो बात ही नहीं, वे तो स्वयं ही अपना सफाई का काम कर चलते बनते हैं। पर स्वयं जाने वालों के लिये भी चिकित्सक अपना उपचार कर यशस्वी बन ही जाते हैं।

पुराने रोग जिन्हें हम कष्टसाध्य या असाध्य के नाम से पुकारते हैं, सचमुच वे गहरी गुहा में अपनी जड़ें जमाए रहते हैं। न ही वे साधारण उपचारों से टस से मस होते हैं। अन्य पैथियों में कहीं तो रोग परिवर्तित कर (खुजली दाद को दबा अन्दर भेज दमा बना दिया, गठिया को दिल के रोग में बदल दिया) इस रूप में समाधान किया जाता है या दवा के बल पर उनके उग्र रूप को समय समय पर दबाकर गाड़ी सरकाई जाती है पर रोग जड़ जमाए रहता है। यदि उसका कष्ट सहने योग्य हुआ, तो दवा के साथ समन्वय कर, ताल-मेल मिला, जीवन-गाड़ी चलाई जाती है। न सहने वाले कष्ट में रोगी इधर-उधर से हार प्राकृतिक चिकित्सा की प्रशंसा सुन इधर आता है। इधर आ फलाहार कर अन्य अनेक उपचार कर शरीर को दुर्बल होते देख छोड़ भाग जाता है। इतने प्रयास से भले ही रोग की उग्रता में अन्तर आ जाता है, पर वह जड़ से जाता नहीं। रोगी को यह सौदा अति घाटे का जान पड़ता है। जिस चिकित्सा की इतनी प्रशंसा सुनी थी, उसे कोसने लगता है। वजन भी घटाया रोग

भी न गंवाया—ऐसा विचार बना चल देता है। क्या करे प्रा० चि० भी ? रोग की जड़ अभी भी गहरी है। ऐसी दशा में धैर्य एवं विवेक-मिश्रित साहस का एक धक्का चाहिये कि बस बना काम, जो अभी तक अटक रहा था।

"उपवास की अनिवार्यता एवं चमत्कार"

बस अब करना है एक उपवास। ज्यों ही उपवास हुआ कि पुराने रोगों की जड़ों पर सीधा-सीधा प्रहार हुआ। ऊपर आत्म-दर्शन की जो कठिनता वर्णन की गई, उसे इधर भी समझें। आत्म-दर्शन के लिए सारे प्रयत्नों को असफल बता आत्म-कृपा को ही मुख्यता दी—

> नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो,
> न मेधया न बहुना श्रुतेन।
> यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः॥

यह आत्मा न तो उपदेश देने से प्राप्त होती है, न अधिक बुद्धिमत्ता से, न बहुत सुनने से। जिस अधिकारी को स्वीकार करती है, योग्य समझती है, उसके प्रति अपने आप को प्रकाशित कर देती है। स्वात्मकृपा ही मुख्य साधन है।

ऐसे ही शरीर गुहा में प्रविष्ट हुए, जड़ जमाए रोग कब बाहर आते, प्रकट होते हैं ? जब हम संयम साधना कर इस योग्य बन जाते हैं।

हमारे तप से शरीरस्थ चेतना जग जाती है। वह आत्म-कृपा करती है, रोगों को उठा बाहर कर देती है। जब हम आहार लेते रहते हैं तब एक क्रम बना रहता है। रस, रक्त से बचा कचरा आंतों के द्वारा मल के रूप में निकलता रहता है।

पर ज्यों ही आहार बन्द कर उपवास करने लगते हैं, तब वह क्रम उल्टा हो जाता है। आँतें अन्दर से जमे मल को उखाड़-उखाड़

कर बाहर धकेलने लगती हैं। छोटी आंत में जमा हुए स्थूल आँव (म्यूकस) को उखड़ कर बाहर आने में दस दिन लग जाते हैं। आंतों की अपनी क्षमता होती है कि वे कितनी सक्रिय हैं, कितने दिन में मल को बाहर निकालती हैं। बस जैसे-जैसे उपवास बढ़ता जाएगा आँतों के भीतर जमा मल उखड़-उखड़ बाहर आता जाएगा। अंतिम छोर का मल भी उखड़ बाहर आता जाएगा। आश्चर्य होता है उस समय उपवासी को कि इस छोटे से नन्हें-मुन्ने चिपके-सिकुड़े पेट में से कहां से यह प्रतिदिन मल बाहर आ रहा है ?

आंतों के साथ ही साथ ऊपर के भाग में भी ऐसी क्रिया हो रही होती है। यकृत (लीवर), पित्ताशय (गैलब्लेडर) अपने आपको साफ कर रहे होते हैं। अत्यन्त दूषित, विदग्धकारी पित्त निकल-निकल कर आमाशय में आ रहा होता है, जिसे अनेक बार वमन कर निकालने का निर्देश किया जाता है। इस प्रकार यकृत व पित्ताशय द्वारा विसर्जित, आमाशय में पहुँचाया हुआ, वमन द्वारा बाहर निकाला गया वह विषाक्त पदार्थ कितने रोगों की जड़ों को बाहर ला रहा होता है—देखते ही बनता है। इसी प्रयास में पथरियाँ भी निकल आती हैं। इस कारण "मुझे पुराने असाध्य समझे जाने वाले **रोगों की जड़ों के दर्शन नाभि-प्रदेश, छोटी आंत के अन्तिम भाग तथा यकृत प्रदेश में हो रहे हैं।**"

उपवास के बिना यह काम बनता नहीं। अतः सत्य स्वास्थ्य के दर्शन भी होते नहीं। उपवास काल में फेफड़े तथा अन्य अवयव भी किस प्रकार शोधन कार्य में लग जाते हैं यह देखते, अनुभव करते ही बनता है।

प्रायः विभिन्न रोगियों में देखा है कि जहां पांच छः दिन का उपवास हुआ उन्होंने कहना शुरू किया अब मुझे इतना लाभ हो गया। लकवा का रोगी जो खाते पीते तो लाठी व आदमी के सहारे भी न चल पाता, उपवास के छटे दिन स्वयं एकाकी लाठी ले चल

पड़ा। यही हाल गठिया का देखा। उपवास-काल में ही आंखों में अन्तर आने लगा। जिन लोगों के हाथ कांपते हैं, लिखते नहीं बनता, उनके विषय में प्रायः यह कहा जाता है कि बुढ़ापे का रोग है, वायु विकार है। पर न वह बुढ़ापे का ही फल है, क्योंकि युवा को भी है और न वायु का ही रोग है। वह तो बिगड़े यकृत का दोष है। उसकी जड़ यकृत प्रदेश में है। उपवास आदि के द्वारा जड़ पर प्रहार कर यकृत को सबल स्वस्थ बना कर देख लो चमत्कार। अब मैं आवश्यक नहीं समझता कि असाध्य रोगों की तालिका ले आपके सामने वह सूक्ष्म विवेचन करूं कि किस की जड़ आंत में है व किसकी यकृत प्रांत में अथवा किसकी दोनों स्थान में। सबके लिए प्रयास एक ही है—एकै साधे सब सधै।

एक उपवास से दोनों स्थानों की ही शुद्धि नहीं, अन्य स्थानों की शुद्धि भी एकमात्र इसी उपाय से है। मैं रोगों का वर्गीकरण कर यदि तीन स्थानों में बांट दूँ तो और भी कुछ सरल हो जाए। योगियों ने मानव-शरीर में निवास करने हारे रोगों को तीनें गुहाओं में छिपा देखा। इस अभिप्राय से उन्होंने गुहात्रय संशुद्धि को लक्ष्य रख तीन क्रियाओं का आविष्कार किया। १. आंतें २. मेदा (आमाशय) तथा ३. कन्धे के ऊपर नाक का मध्यवर्ती भाग ये तीन हैं गुहायें जहां शरीर के विभिन्न रोग बस रहे हैं। उन तीनों गुहाओं का संशोधन सीख लेने पर सभी रोग बाहर निकलते जायेंगे। आंतों को साफ करने के लिए वस्ति क्रिया निरूपण की, जिसका आज सुधरा हुआ सरल रूप एनिमा है। आमाशय को साफ करने के लिए कुञ्जर क्रिया (वमन) व धौति जंसी क्रियाएं हैं। कन्धे से ऊपर के रोगों को ठीक करने के विकार निकालने के लिए नेति क्रिया का उपदेश दिया।

हमारे यहां उपवास कराने से पहले ही इन तीनों का सम्यक् अभ्यास करा दिया जाता है। परिणामस्वरूप उपवास करने वाला रोगी बिना किसी उपद्रव व कष्ट के सहज में उपवास कर लेता है।

सिर दर्द तक भी उसे नहीं होता, अन्य परेशानी की तो बात ही क्या है।

सारी चिकित्सा में उपवास-विज्ञान अपना एक स्वतन्त्र महत्वपूर्ण स्थान रखता है। जब रोगों के निर्मूल करने में प्रा० चि० की अन्य विधियां सफल नहीं हो पातीं, तब उपवास को ब्रह्मास्त्र के नाम से प्रयोग करता हूँ। रोगी की दशा देख, रोग की दशा देख, उपवास का निर्णय करता है कुशल चिकित्सक, कि कितने दिन उपवास आवश्यक होगा। उपवास-काल में पूर्व दबाए गए रोग भी पुनः उभरते हैं जिन्हें रोगी भूल चुका होता है कि मुझे भी कभी यह रोग हुआ था। दमा के रोगियों को तो विशेष रूप से देखा कि उपवास में हाथ, पांव, मुँह पर सूजन हो जाती, जिसे अनजान न समझ घबरा जाता है। और वर्म तीन-चार दिन में ही स्वयं उतर जाती है, ज्यों ही उखड़ा विष पच जाता है, निकल जाता है।

भले ही यह माना जाता है कि कुछ ऐसे रोगों में जैसे आमाशयिक व्रण, यकृत-काठिन्य, बढ़ा हुआ यक्ष्मा (टी. बी.), हृद् रोग की कुछ दशाओं व ऐसी अन्य कुछ स्थितियों में उपवास न कराया जाए। उपवास चिकित्सा सर्वश्रेष्ठ होती हुई भी साहस, धैर्य व विवेक की अपेक्षा करती है और चाहती है अनुभवी कुशल चिकित्सक की देख-रेख, जिसने कि स्वयं उपवास किया हो और अनेक को कराया हो। बस फिर कुशल ही कुशल है।

उपवास के पूर्व तैयारी—किसी कठिन रोग से छुटकारा पाने के लिए यदि आप चाहते हैं कि एक लम्बा सफल उपवास किया जाए तो एक प्रकार यह है कि आप पहले छोटे-छोटे एक-दो दिन के उपवास कर अभ्यास कर लें। कुछ दिन क्षारीय भोजन लें। चावल दाल आदि बन्द कर शाक, फल, नींबू आदि का अधिक प्रयोग करें। एक दिन केवल फल व सब्जी लेकर रह जाएं। दूसरे दिन फल व

सब्जी का रस ही लें। तीसरे दिन कुछ न लेकर उपवास कर जाएं। इस प्रकार एक दो या तीन दिन उपवास में रह जाएं। अच्छा यह हो जितने का उपवास करें उतने दिन या उससे आधे दिन रसाहार लेकर रहें। यदि जिगर की स्थिति बिगड़ी हुई न होगी तब तो आप इस प्रकार के छोटे उपवास सहज में कर अभ्यास कर लेंगे, अन्यथा एक दो दिन के उपवास महंगे पड़ जाते हैं। विकार उखड़ आता है, न निकल पाता है, न पच ही पाता है, सिर दर्द या अन्य बेचैनी दे जाता है। इस प्रकार की दशा में तो यह प्रकार ठीक होगा कि कुछ दिन पहले फल-शाकादि पर रहें, अन्न ही छोड़ दें। उसके बाद दो तीन दिन रसाहार कर लें। रसाहार के दिनों में एनिमा व पसीना आदि लेकर शरीर की शुद्धि भी कर लें। इसके पश्चात् उपवास आरम्भ करें।

कष्ट रहित उपवास का प्रकार—जैसे ही उपवास आरम्भ हुआ कि उसके साथ ही वमन का प्रयोग आरम्भ कर देना चाहिए। सेर डेढ़ सेर नमक मिला कुनकुना पानी पी जाएं, थोड़ा पेट को हिलाएं सामने झुक जाएं, गले में अंगुली डाल गुदगुदाएं, पानी निकालते जाएं। पहले-पहल भले ही पानी निकलने में परेशानी होगी। ज्यों ज्यों अभ्यास होता जाएगा, पानी सहज में निकलने लगेगा। पानी के साथ ही खट्टा खारा पानी निकलने लगेगा। दिन में हर दो तीन घण्टे पर वमन करते चलें। इससे भी अधिक बार कर सकते हैं—यदि वमन की आवश्यकता जान पड़े।

वमन-आवश्यकता के चिह्न—जी मिचला रहा है, एक अजीब परेशानी हो रही है। सिर में चक्कर आना, सिर दर्द करना, उठते-बैठते चक्कर आ जाना, तारे दिखाई देने, गिरने की स्थिति उत्पन्न होना, गले में जलन–इस प्रकार के अनेक उपद्रव जान पड़ेंगे। उन सबका एकमात्र उपचार है 'वमन'। ज्यों ही ये सब लक्षण दिखाई दें

तभी वमन कर डालें। वमन करते ही शांति मिलेगी'। इस प्रकार की वमन तीन दिन या अधिक चार दिन तक चल सकती है—जबकि पित्ताशय की विकृति अत्यन्त बढ़ी हुई होगी। पहले खट्टी वमन होती है, फिर खारी, पश्चात् कड़वी पीली व हरी।

जब इस प्रकार की गन्दगी निकल रही हो, तब सेर-डेढ़-सेर पानी की बात नहीं है, उस समय ढेर सा पानी लेकर बैठें, पीते जायें, निकालते जायें, जब तक पानी साफ न निकलने लग जाए। इस प्रकार करने से शीघ्र ही शुद्धि हो जाएगी।

समझदारी व साहस से काम लें—जब इस प्रकार की विषाक्त, दूषित पित्त निकल रही होती है, तब स्वयं भी वमन आने की प्रवृत्ति होती है। जब स्वयं उछाली से वमन आती हो तो एक अनिष्ट बात होती है, कि इतना तेजाबी मादा निकलता है कि गले को जला देता है, गला दुखने लग जाता है। वैसी दशा में होश्यारी से काम लें। जभी वमन आनी हो, पानी पी उसे आने दें। तब वह तेजाबी दूषित जलाने वाला विषाक्त द्रव पानी में घुल कर आएगा, आपका गला कम जखमी होगा।

भले ही ऐसी वमन विरले मनुष्यों को ही होती है। उन्हें ही; जिनके जिगर पित्ताशय बिगड़े हों, एसिडिटी (अम्ल-पित्त) के रोगी हों। और आज चाय और पकौड़े के युग में इसके अनेक रोगी होंगे। यही कष्ट की दशा भी है और यही रोग मुक्ति की भी। इससे डरे तो रोग जमा रहा, बहादुर बन इसे सह गये तो अनेक रोगों को भी जड़ से उखाड़ दिया।

ज्ञान में कष्ट का अभाव—मैं समझता हूँ यदि किसी समझदार के सामने लाभांश अधिक हो, कष्ट थोड़ा हो तो प्रसन्नता से उस कष्ट को सहता है।

उसमें भी कष्ट की मात्रा, समय की अवधि का भी ज्ञान हो जाए, तब तो कोई अर्थ नहीं। कैसी ही परेशानी हो, हंसते-हंसते उसे सहना व स्वीकार करना चाहिये। अपने साहस व धैर्य का परिचय देना चाहिए।

पुत्रदर्शन की प्रबल कामना से कौन माता प्रसव पीड़ा नहीं सहती ? दुःख से सुख की उत्पत्ति होती है। मैंने अपनी खांसी, जुकाम दमा की सफल चिकित्सा पुस्तक में उपवास के सम्बन्ध में पर्याप्त लिखकर समझाया है। उपवास में आने वाली अनेक परेशानियों को न आने देने का सरल मार्ग दर्शाया है।

—०—

लेखक के स्वास्थ्य सम्बन्धी मौलिक सूत्र एवं विचार

रोगी बने रहने का कारण—

"भोगवाद-औषधवादसमन्वये शारीरिकदु:खस्थैर्यम् "

भोगवाद तथा औषधिवाद का परस्पर मेल ही रोगी बने रहने का कारण है।

अनुचित आहार-विहार से जब शरीर में रोग ने कष्ट पहुँचाया तभी यदि संभल जाते, संयम को अपनाते, भूल को हटाते, तो सुखी बन जाते। वैसा न कर रोग के साथ दवा का ताल-मेल बैठा कर आपने पीड़ा को हटा जो राहत पाई, वही सदा के लिए रोगी बने रहने का बीज बोया।

रोगों का कारण—

अविवेकासंयमयोः योगः रोगाणाम् कारणम् ।

अविवेक व असंयम ही रोगों के मुख्य कारण हैं ।

अविवेक—बहुत बड़े जन-समूह को ऋतुचर्चा, दिनचर्या, रात्रिचर्या व आहारादि के सम्बन्ध में ज्ञान ही नहीं है।

असंयम—यदि कुछ ज्ञान भी है तो तदनुकूल संयम नहीं है। इसी असंयम के घेरे में शरीर-शास्त्री चिकित्सक-समूह भी आ जाता है जो विवेक रखते हुए भी असंयमी बन रोगी बना हुआ है। अविवेकियों द्वारा चलाये अनुचित आहारादि के प्रवाह में वे भी वैसे ही बहे जा रहे हैं जैसे अविवेकी जन। यदि अन्य साधारण जन दिन भर में चाय, बीड़ी-सिग्रेट, कुल्फी, सोडा, कोका-कोला आदि

पी दिन बिताते हैं तो शरीर-शास्त्री भी उन व्यसनों से बचे नहीं हैं। रोगकारी व्यसन सेवन में वे भी समान हैं।

अन्यच्च रोगकारणम्—आसक्ति-अशक्त्योः योगः रोगाणाम् कारणम्।

आसक्ति व अशक्ति का समन्वय ही रोगों का कारण है।

आसक्ति—विषयों (आहारादि) के प्रति लगाव (अटैचमेंट) बना है पर पचाने की शक्ति रही नहीं। शक्ति रही नहीं, आसक्ति नहीं–यह रोगों का कारण है। २० वर्ष पूर्व जो पचाने की शक्ति थी, वह आज नहीं है, पर मन आज उतना ही खाना चाहता है, पचा पाता नहीं—यह है रोगों का कारण।

रोग निवारण उपाय—

"व्रत–प्रायश्चित्ताभ्यां सर्वरोगनिराकरणम्॥"

व्रत एवं प्रायश्चित के द्वारा सारे रोगों का निराकरण होता है।

व्रत–रोग के कारण स्रोत को रोकना, उसमें वृत-बाड़ लगाना, बांध लगा देना तथा विकृत हुए रक्त-स्रोत को तथा अन्य अवयवों को शुद्ध व सबल करने हेतु प्रायश्चित करना। पूर्व भूलों को न दोहराना अथ च प्रसन्नतापूर्वक शोधक उपायों को अपनाना। जैसे पायरिया हो गया या प्रमेह, उसके मुख्य कारण मीठे का त्याग रूपी व्रत लेना। साथ ही रक्तशोधक कड़वी वस्तु का प्रसन्नतापूर्वक सेवन प्रायश्चित करना है।

कमजोरी या अशक्ति क्या है—

बिकारास्तित्वमेव् अशक्तिः

अथवा–विकारसत्ता हि अशक्तिः

विकार का अस्तित्व ही अशक्ति है। देखने में मोटा है, अच्छा

खाता पीता है, फिर भी कमजोरी का अनुभव करना, क्योंकि शरीर में विकार है। वमन आने के पूर्व किस प्रकार अशक्ति का अनुभव होता है, वमन के द्वारा विकार निकलते ही शरीर में शक्ति का भान होता है। बुखार है, खाते-पीते हुए भी अशक्ति जान पड़ती है, बुखार के हटते ही बिना खाए भी शक्ति जान पड़ती है।

स्वस्थ या निरोग जीवन की परिभाषा—

पीड़ारहितम् औषधिपरित्यक्तं, स्वकर्मकुशलम्
प्रसन्नतायुक्तञ्च जीवनम् स्वस्थजीवनम्।

जो व्यक्ति अपने दैनिक व्यापारादि कर्म करने में समर्थ है। शरीर में कोई पीड़ा का अनुभव नहीं करता, किसी दवा का भी सेवन नहीं करता, प्रसन्नतापूर्वक रहता है, उसका जीवन स्वस्थ है।

अन्य चिकित्साओं से हमारी चिकित्सा की तुलना--

प्राकृतिक एवं यौगिक चिकित्सा द्वारा हमारा लक्ष्य है–मनुष्य रोगी होना एक अपराध माने। रोग का कारण अपनी भूल व असं-यम को मान सतर्क हो अपने विवेक व संयम को बढ़ाए। स्वास्थ्य को दवा की बोंतलों, गोलियों, भस्मों, इन्जैक्शनों में न खोज प्रकृति के साथ तादात्म्य करे। प्राकृतिक नियमों का पालन करे, तन्दुरुस्ती पावे।

प्राकृतिक चिकित्सा अन्य चिकित्सा की भांति क्यों नहीं पनपती ?

उत्तरः—यों तो प्रत्येक चिकित्सा श्रम लेती है। अन्य चिकित्सा में द्रव्य द्वारा श्रम खरीदा जाता है। फैक्टरियों, औषध-निर्माण-शालाओं में मजदूर काम करते हैं। चिकित्सक व रोगी पैसे से दवा खरीद कर अपने काम में लाता है। स्वयं श्रम नहीं करता। प्राकृतिक चिकित्सा में रोगी को स्वयं श्रम करना पड़ता है। अन्य चिकित्सा पैसा मांगती है, प्राकृतिक चिकित्सा श्रम मांगती है। आज के इस वैज्ञानिक युग में मनुष्य सुविधा के नाम पर आलसी बनता जा रहा

है। वह श्रम से जी चुराता है। अतः प्राकृतिक चिकित्सा को नहीं अपनाता। यह संयम की साधना कराती है। अन्य चिकित्सा व्यसनों के रहते हुए भी चलाई जाती है। रोगी संयम से घबराता है। विषयों में रचापचा दवाओं के सहारे गाड़ी धकेलना चाहता है। यह काम अन्य चिकित्सा द्वारा उसे सहज प्राप्त हो जाता है।

एक प्रतिष्ठित सन्यासी महात्मा वर्षों से रोगी चले आ रहे थे, अन्य चिकित्सा-पद्धतियों से लाभ प्राप्त न कर प्राकृतिक चिकित्सा की ओर झुके कि इससे ही कुछ लाभ प्राप्त करूं। पर पूर्व इसके डाक्टरों ने उनके मस्तिष्क में यह भर रखा था कि ये प्राकृतिक चिकित्सक शरीर के सम्बन्ध में जानते ही क्या हैं ? शरीर की नस-नाड़ियों, विभिन्न अंगों व उनकी क्रियाओं का कहां है इनको ज्ञान ? जब शरीर के सूक्ष्म अंग-प्रत्यंग का ही ज्ञान नहीं तो इनके द्वारा की गई चिकित्सा में धरा ही क्या है ? इस आधार पर कह ही दिया कि तुम प्राकृतिक चिकित्सा वाले शरीर के बारे में कुछ जानते तो हो नहीं। दमा को ही देखो कितने प्रकार का होता है। तुम लोग तो एक ही लाठी से सबको हांकने लगते हो।

उत्तर में उन्हें निवेदन किया गया—ठीक ही है जिन्हें शरीर की चीर-फाड़ करनी है, औपरेशन करना है, उनके लिए अनिवार्य है कि वे इसे जानें। जिन्हें चीर-फाड़ औपरेशन कर अंगों को अलग नहीं करना अपितु वहीं पर उनका संरक्षण करना है, उनके लिए आवश्यक नहीं कि वे प्रत्येक नस-नाड़ी के नाम-स्थान की मरदुमशुमारी करते फिरें। किसी भी प्रांत की जनसंख्या जानने हेतु वहां की जनगणना (मरदुमशुमारी) कराई जाती है। बस हो गया एक सामान्य ज्ञान और काम समाप्त। जब पंजाबी सूबा के नाम पर मांग पेश हुई तब विशेष रूप से काट-छांट शुरू हुई, किस तहसील व किस गांव में कितने हिन्दु व सिख हैं ? अखण्ड प्रांत के समय इस प्रश्न का कोई महत्व न था। काट-छांट के समय ही इसने महत्व पाया। हम

अखण्डता, ऐक्य के समर्थक हैं। ऐक्य में विघटन-धर्मी पृथक-पृथक ज्ञान का कोई महत्व नहीं। अखंड पंजाब, अखंड भारत, एकता-संपन्न अखंड सम्पूर्ण शरीर। आंख पृथक्, कान पृथक्, दाँत पृथक्, नाक पृथक् यह आँख के स्पैशिलस्ट, यह दाँत के विशेषज्ञ, यह दिमाग के स्पैशिलस्ट डाक्टर हैं। शरीर के अंगों को पृथक् करके रख दिया। क्या आँख, कान, दाँत, नाक व दिमाग कहीं बाहर से स्वतन्त्र रूप से शक्ति पा रहे हैं? क्या संघटित अखंड शरीर से पृथक् इनका अस्तित्व है?

अखंड संघटित शरीर में एक ढंग से सबको शक्ति मिल रही है। सबकी शक्ति का स्रोत एक है। उन सब अवयवों को अलग-२ कर देखना केवल तभी होता है, जब ऑपरेशन द्वारा उनकी काट-छाँट करनी होती है। वह ज्ञान उतने में चरितार्थ है।

हम मानते हैं—

यत् शक्तिस्रोतः तत् एव विकृतिस्रोतः।

अर्थात् जो शक्ति का स्रोत है वही विकृति का भी स्रोत है। जिस मार्ग से, जिस क्रम से शक्ति आ रही होती है, ठीक उसी मार्ग व क्रम से विकृति भी आती है।

हम लोग यह सोचते हैं, चश्मा कैसे हटाया जाए, उसे हटाते हैं। चश्मा हटाना तो जानते हैं पर लगाना नहीं जानते। किस नं० का चश्मा चढ़ाना है, यह हमारा विषय नहीं है। पायरिया कैसे हटाएं? दांत को नीरोग व स्वस्थ बनाएं, इसका उपाय हम करते हैं। दांत उखाड़ने की कला के लिए दाँत से सम्बन्धित नाड़ियों के नामों व स्थानों का ज्ञान आवश्यक है। पर दाँत को सुरक्षित रखने व स्वस्थ बनाने के लिए उसकी आवश्यकता नहीं है। सभी अवयवों के शक्ति व विकृति के मूल स्थान को पकड़ते हैं। उन मूल अवयवों को पकड़ना उन्हें शुद्ध करना होता है, जहाँ शक्ति निर्मित होती है व प्रवाहित होती है। बस वे अंग हमारे काबू आये और शुद्ध हो गए, तो शक्ति-निर्माण क्रिया तथा शक्ति के विनिमय की क्रिया ठीक-ठीक होने

लगेगी। अन्यथा उन अंगों को ऊपर कहाँ से पकड़ेंगे और कैसे शुद्ध करते फिरेंगे। ऊपर से शुद्ध करते हुए भी वे शुद्ध न हो पायेंगे, यदि नीचे मूल से विकार-स्रोत ज्यों का त्यों जारी रहा।

औप्रेशन द्वारा टाँसिल को हटा देना, पीड़ा पहुँचाने वाले दाँत को निकाल देना कुछ समझ में नहीं आता। टाँसिल या दाँत क्या स्वयं में ही अकारण खराब हो गये थे ? क्या यों ही उन्हें ठण्डी गर्म हवा लग गई थी, जिस कारण वे पीड़ा पहुँचा रहे थे। उन्हें दूषित करने वाला कौनसा तत्व था ? और वह कहाँ से आ रहा था ? बाहर से या भीतर से ? मानना होगा वह भीतर से ही खराब हो रहे थे। जिस कारण से वे खराब हो रहे थे, उसके लिए हमने क्या किया ? केवल कार्य मात्र को हटाया, कारण ज्यों का त्यों बना रहा दांत गया पर दर्द न गया। दाँत से हटकर मसूड़ों में आ गया। यदि मसूड़ों में भी न आया तो और नीचे घुटनों में चला गया। कार्य गया कारण बना रहा। वही कारण अपने कार्य को पुनः किसी रूप में प्रकट करेगा।

ध्यान से देखें जब टाँसिल थे उस समय पीड़ा के साथ अन्य कितने कष्ट चल रहे थे। अब टाँसिल हट जाने पर कितने अवशेष रहे। मुख्य पीड़ा तो हटी, पर अन्य सभी परेशानियाँ पूर्ववत् बनी रहेंगी। टाँसिल कटवाया, खून बहाया, रु० गंवाया, पर हाथ कुछ भी न आया। दिल-छाती के रोग बने रहेंगे। वही जुकाम, वही अजीर्ण, वही कब्ज व सुस्ती और आगे बढ़ें तो दमा भी। जिस मार्ग से शरीर में शक्ति आती है उसी मार्ग व क्रम से शरीर में विकृति भी आ रही है। मेरे एक छोटे बाल व नाखून को भी भीतर से शक्ति मिल रही होती है। ज्यों ही शरीर भीतर से रोगी बनता है, शक्ति स्रोत विकृत हो जाता है। बाल झड़ने लगते हैं, सफेद होने लगते हैं। नाखून काले या बदशकल होने लगते हैं या बढ़ने ही बन्द हो जाते हैं।

ठीक ऐसे ही हमने हर अवयव को समझना है कि उसे भीतर से

शक्ति मिल रही है। आँख, दाँत कमजोर हो गए का अर्थ हुआ शक्ति के स्रोत में कहीं गड़बड़ है। अच्छा यही है, मूल स्रोत को पकड़ें उसे स्वच्छ करें, सबल बनाएं। ऊपर के अवयव स्वयं ही सबल, स्वस्थ हो जायेंगे। मूल स्रोत की उपेक्षा कर जब हम ऊपर ही ऊपर काट-छाँट शुरू कर देते हैं, त्यों ही उसे उलझाते जाते हैं। अतः हमारा मत है कि 'भारत का स्वास्थ्य' उसकी अखंडता, उसकी राजधानी के आश्रित है। यदि इन्द्रप्रस्थ, दिल्ली राजधानी पर चाणक्य जैसा नीति-निपुण, पटेल जैसा दिलदार लोहपुरुष बैठा है, उसका मंत्रि-मंडल सबल व स्वस्थ है, तो समझो सारा भारत स्वस्थ है, अन्यथा कहीं कश्मीर बंट रहा है, कहीं पंजाब घट रहा है, कहीं नागालैंड बन रहा है, फिर देखते चलो क्या-क्या समस्याएं आती हैं, कितने बंटवारे होते हैं।

ठीक यही दशा हमारे शरीर की है। मूल राजधानी, उदर संस्थान श्वाससंस्थान सबल एवं स्वस्थ हैं, उसके घटक अवयव आमाशय, पक्वाशय, लीवर (यकृत), प्लीहा (तिल्ली), आँतें सब सबल हैं, फेफड़ों में शुद्ध वायु-संचार, रक्त-संचार हो रहा है, बस फिर खामोश (मौन धरकर) बैठ जाइए। तब न आज के युग के ब्लड-प्रेशर, न हार्टफेल, न गैस-ट्रबल, न डायब्टीज (मधुमेह-प्रमेह) और न ही आँख के रोग आएंगे।

विपरीत इसके मूल राजधानी की उपेक्षा कर, वहाँ समस्या का हल न कर, ज्यों ही ऊपर से सुलझाने का प्रयास करेंगे, बस तभी औप्रेशनों का तांता बन्ध जाएगा। आज दाँत निकलवाए, कल को आँत निकलवाई, परसों नाक का औप्रेशन, चौथे कान का—इस प्रकार हर अंग के औप्रेशन कराने का सुन्दर परामर्श व आग्रह आपके मित्र डाक्टर आपको देंगे, पर स्वास्थ्य न दे पाएंगे।

ईश्वर के दिए अनुदानों से भी एक दिन आपको खाली कर देंगे। गरीब, दीन-हीन रोगी की स्थिति में ला देंगे। यह है शरीर के

विभिन्न अंगों को अलग-अलग मानकर चलने वाले शरीर-शास्त्रियों की राह, जिन्हें आप शरीर के विशेषज्ञ माने बैठे हैं, जिनके मुकाबले में हमें कहा जाता है ये शरीर के सम्बन्ध में जानते ही क्या हैं ?

हमें भी उत्सुकता है कि शरीर के भीतरी ढांचे को जानें, पर यदि वह सहज में प्राप्त होता नहीं दीखता, तो किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो हाथ पर हाथ धरकर बैठ भी नहीं जाएंगे, कि क्या करें। हमें परमेश्वर ने शरीर सम्बन्धी जो स्वाभाविक सहज ज्ञान दिया है, उसी से जनता की वह सेवा करेंगे जो दूसरों से कहीं बेहतर होगी। शरीर की स्वाभाविक रचना, उसकी सहज चेष्टा, प्राकृतिक नियमों के साथ तादात्म्य, ईशप्रदत्त प्राकृतिक तत्वों के गुण-धर्म, उनके द्वारा प्राप्त होने वाले लाभ इत्यादि अनेकविध ज्ञान-भण्डार प्रभु ने हमें प्रदान किया है। अपनी बुद्धि को निर्मल कर जितना चाहें अपने भीतर भरते चलें। जिस सहज ज्ञान से मनुष्य-इतर सब प्राणि सुखी व स्वस्थ हैं वह हमें भी प्राप्त है।

भले ही दमा के भेदों, उनके नामों को न कह सकें पर सभी प्रकार के दमा को कैसे ठीक किया जा सकता है यह कला हमारे पास अवश्य है।

"यस्मिन् विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातम् भवति"

जिस एक आत्मतत्व किंवा ब्रह्मतत्व के जान लेने पर सब कुछ जान लिया जाता है।

वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिका इत्येव सत्यम्

वाणी का प्रयोग-मात्र होता है या कुछ सुविधा कहें—मूल तो मिट्टी है। उसी से अनेक नाम व रूप के खिलौने बने हुए हैं। रोगों के नाम व रूप सब मायिक हैं। जितने भी आप बना लें, बढ़ा लें, उन नामों को जाने बिना भी किसी मूल आधार को मान हमारी चिकित्सा चलती है और अचूक सफल होती है।

सफलता सूत्र—

"रोगी साहस, संयम, धैर्य लेकर आए और विवेक मुझ से ले। प्राकृतिक यौगिक चिकित्सा में सफलता पाए।"

साहस से मैं चाहूँगा कि रोगी में इतना उत्साह हो—यदि मेरे साथ का रोगी ऐसी क्रिया कर सकता है तो मैं भी अवश्य करूंगा। संयम का अर्थ केवल इतना मात्र ही नहीं—अभी तक जो आप अन्य चिकित्सा-पद्धतियों द्वारा सुन पाए हैं तेज गंध वाली वस्तु नहीं खानी, अथवा कच्चा मीठा नहीं खाना, मिर्च या उड़द की दाल नहीं खानी—इस मार्ग में तो आपको प्रियातिप्रिय वस्तु घी, दूध, रोटी आदि को कुछ समय के लिए संयम की दृष्टि से छोड़ना होगा। इतना सब किया गया तब भी आप अभीष्ट फल के लिए बिना उकताए धैर्य से प्रतीक्षा करें। पर्याप्त धैर्य धारण किया गया, लाभ का अनुभव भी होने लगा, ठीक चलते भीतर से कोई जमा हुआ मल उखड़ बाहर निकलने को तत्पर हुआ, उसी दशा में आप घबरा गए, यह क्या हो गया ? ऐसा क्यों ? बस स्वयं निर्णय न करने बैठ जाएं, ठीक उसी दशा में उसे समझने के लिए मुझसे, अपने चिकित्सक से समझें। बस चिकित्सा में पूर्ण सफलता पाएं।

जिस प्रकार आत्मा के जगत् में जो कुछ पाया जाता है, वह स्वयं ही पाया जाता है। ठीक ऐसे प्राकृतिक स्वास्थ्य भी स्वयं के श्रम से पाया जाता है। कोई दूसरे पर निर्भर हो, नहीं पा सकता। किसी दूसरे के पैरों पर वहाँ नहीं चला जा सकता है। स्वयं के अतिरिक्त वहाँ कोई भी शरण नहीं है। स्वास्थ्य को पाना है, तो स्वशरण बनना है, यह शर्त अनिवार्य है। स्वास्थ्य हस्तांतरित होने वाली वस्तु नहीं। अन्य व्यक्ति स्वास्थ्य देने में असमर्थ है। यदि कोई समर्थ बताता है तो वह प्रारम्भ में असत्य कहता है।

स्वास्थ्य खरीदने जैसी वस्तु नहीं है। जो दुकानदार वन बेचते हैं वे स्वास्थ्य नहीं केवल दवाएं बेचते हैं। स्वास्थ्य सत्र से उपलब्ध

होने वाली वस्तु है, सब्र में विश्वास उत्पन्न कर ही वह पाना होता है।

भगवान् बुद्ध ने भी कहा अपने दीपक स्वय बनो। अपना शरण स्वयं बनो। स्वशरण के अतिरिक्त और कोई सम्यक् गति नहीं है।

इसलिए मैं रोगी बन्धुओं से कहा करता हूँ कि यह भूल जाओ कि मैं आपको स्वस्थ कर दूँगा। बस जिस दिन, जिस क्षण आपके मन में यह विचार उत्पन्न हो जाएगा कि मैं स्वस्थ होऊंगा, आप ठीक होकर ही रहेंगे। कोई शक्ति नहीं जो आपको बीमार बनाए रखे। चाहिए केवल आप में संकल्प-बल। पूर्ण संकल्प का एक क्षण भी बहुत है। अपने संकल्प को घना और प्रगाढ़ होने दें। वह श्वास में परिव्याप्त हो जावे। वह सोते-जागते स्मृति में हो। उसी से नया जन्म होता है। स्वास्थ्य तो निकट है पर हम में उसके निकट होने का दृढ़ संकल्प चाहिए। संकल्प सभी शक्तियों को जगा देता है। संकल्प चाहिए और चाहिए साधना-सातत्य। साधना सतत होनी चाहिए। सतत गिरते हुए जल के झरने चट्टानों को तोड़ देते हैं। जो चट्टानें प्रारम्भ में राह देती मालूम नहीं होती वे ही एक दिन रेत हो जाती हैं और राह मिल जाती है।

राह मिलती तो निश्चित है पर वह बनी बनाई नहीं मिलती। उसे स्वयं ही अपने श्रम से बनाना होता है।

जो धैर्यवान् नहीं है वह उसे नहीं पा सकता। धैर्य के बाद भी चाहिए अध्यवसाय—गतिशील धैर्य। कोई बात नहीं यदि इतना धैर्य धारण करने पर, प्रतीक्षा करने पर भी, काम नहीं बना तो और आगे चलेंगे, काम पूरा तो करना ही है। यह हो मन का निश्चय।

—०—

दूध

दूध विषयक धारणा के सम्बन्ध में चिन्तन—

पंजाब, उत्तर प्रदेश जैसे दुग्ध बहुल प्रांतों में विशेष रूप से और अन्य प्रांतों में भी एक रिवाज पाया जाता है। लोग रात्रि को भोजन करने के बाद सोते समय गर्म-गर्म मीठा दूध पीकर सोते हैं। इस सत्कार के बिना मेहमान-नवाजी तो पूरी ही नहीं समझी जाती। वैसे आज चाय, सिग्रेट पूछना भूल जाएं तो नुक्ताचीनी होती है जैसे रात्रि के दूध के सम्बन्ध में भी। उस दूध को पीकर लोग समझते हैं कि हम शक्ति पाते हैं। आगे चलकर अन्य व्यसनों की भांति दूध का भी एक सुन्दर व्यसन लग जाता है। दूध न मिले तो रात को नींद ही नहीं आती। सवेरे टट्टी नहीं आती। रात को दूध पीने से शक्ति आती है ऐसी जनता की धारणा है। केवल साधारण जनता की ही क्यों कहूँ, चिकित्सक-समूह, वैद्य महोदय भी उसके समर्थक दिखाई देते हैं। वैद्य यह प्रमाण भी उपस्थित करते हैं—

'दिनस्यान्ते पिबेत् दुग्धम् निशान्ते च पिबेत् जलम्'।

इस प्रकार का श्लोक कि दिन के अन्त में अर्थात् रात को सोते समय दूध पीना चाहिए और रात्रि के अन्त में प्रातः उठते ही (उषः पान) जल पीना चाहिए। मैं सम्यक् अध्ययन तो नहीं कर पाया कि ऐसा श्लोक किस शताब्दी का है और कैसी स्थिति, कैसे प्रसंग में प्रवेश पाया, पर आज इस साइकिल, मोटर, कल व नल के वैज्ञानिक युग में यह स्थान नहीं पा रहा। फिर भी उस धारणा के आधार पर अपने को चला अनेक रोगों में घिरा जन-समाज को

पाते हैं। जिला रोहतक के कलानौर में एक डाक्टर आनंदराज जी, जो सम्मिलित यूनानी एलोपैथी चिकित्सा करते हैं, वहीं बाहर बाग में मेरे पास आ रहे थे। कुछ ढीले से दीखे। मैंने पूछा—क्या हाल है? बोले–आज कुछ तबियत ठीक नहीं है। जुकाम हो रहा है। कुछ बुखार भी है। फिर क्या करेंगे? मैंने पूछा, तो बोले, "बस जाकर गर्म करके दूध पीऊंगा। आप लोग तो दूध को कोई महत्व नहीं देते। हम उसे बड़ा अच्छा समझते हैं।" मैंने उन्हें समझाया "यही अच्छा समझते हैं कि जुकाम हो रहा है। मेदे में रेशा रूपी कचरा भर रहा है। वैसी दशा में आप अमृतोपम दूध को कचरे में डाल रहे हैं। आपने यह कैसे कहा कि हम दूध को महत्व नहीं देते। दूध का वास्तविक प्रयोग करना हम सिखाते हैं। दूध के कल्प हम कराते हैं। हाँ! पेट अन्य पदार्थों से भरा पड़ा है अथवा कचरा पड़ा है, वहाँ ऊपर दूध डालना हम नहीं वताते। पृथक् स्वतन्त्र रूप से दूध के प्रयोग का महत्व है। दूध एक पूर्ण भोजन है जिसने सर्वप्रथम जन्मते ही आप का पालन किया। एक दो दिन नहीं, महीनों, वर्षों तक। शरीर की बढ़ोत्तरी उस समय जैसी हुई वैसी तेजी से बाद में न हुई, क्योंकि दूध ईश्वर या प्रकृति की ओर से दिया हुआ पूर्ण आहार था। पर ज्यों ही आपने उसका महत्व घटाया, उसे पानी बनाया (पानी के स्थान पर प्रयोग किया), तभी से रोगों ने डेरा जमाया।"

एक युवा या प्रौढ़ आपके पास आता है। आप उसे भोजन करने के लिए कहते हैं। वह अभी घर से भोजन करके आ ही रहा है, झट जवाब देता है मैं भोजन करके ही आ रहा हूँ, अर्थात् भोजन पर भोजन कैसे करूं? आप भी चुप हो जाते हैं। पर ज्यों ही अच्छा मलाईदार मीठा गर्म दूध पेश करते हैं, उसे पीते देर नहीं लगाता। खब बड़ा भरा हुआ तीन पाव का गिलास दूध पी जाता है। वह दध को भोजन नहीं मान रहा पानी के समान ही पी रहा है।

अन्न से परिपूर्ण पेट में जब दूध भरा जाता है तब कुछ पचा कुछ बेपचा विकार बन गया। बचपन में खाँसी, जुकाम, नाक आना, आँख आना, कान वहना, दस्त लग जाना बना रहा। यदि मेदे ने जुकाम, खाँसी के रूप में ऊपर की ओर न फेंका तो आँतों में जा वही आँव बन कर नीचे के मार्ग से आने लगा। बाहर दूध पतला था। कढ़ाई में डाल पकाते-पकाते मलाई के रूप में गाढ़ा हुआ। वैसे ही शरीर के भीतर की कढ़ाही में पड़ नाक के मल, कान के मवाद के रूप में कुछ गाढ़ा मलाई सा वन निकलने लगा। कितने बच्चों के वर्षों से नाक कान बहते थे। जब उनका दूध बन्द किया, वर्षों का रोग दिनों में गया। बाद में उनके गलत ढंग को बदल दिया। अब वही दूध उनका पोषक बन रहा है जो कुछ दिन पहले शोषक बन रहा था। ऐसा हो हाल है टाँसिल का।

युवा ने शक्ति पाने के बिचार से रात में सोते समय गर्म-गर्म मीठा दूध पिया और स्वप्न-दोष के रोगों में वीर्य के रूप में उसे निकालता गया। स्वप्नदोष के रोगियों के लिए रात्रि का गर्म दूध अत्यन्त घातक है।

वही गलत ढंग से पिया दूध कान-दर्द, आँखों के विभिन्न रोग, छींकें, खांसी-जुकाम व दमा के रोग में परिणत हो गया। कोई कहता है इसलिए दूध पीता हूँ कि सवेरे शौच साफ हो जाता है। मैं कहता हूँ टट्टी लाने के लिए दस बारह आने का दूध क्यों बर्बाद करते हो। टट्टी तो दो पैसे के त्रिफला चूर्ण से भी आ जाएगी। शक्ति तो उसने कोई देनी नहीं।

वजन बढ़ाने की दृष्टि से दूध-दलिया जैसे प्रयोग प्रचलित हैं। कुछ अंश में उसे सफल देखते हैं। फिर भी आहार-शास्त्रियों का कथन है कि अन्न के साथ दूध उतना हितकर नहीं जितना कि अकेला।

दूध लेने का सुन्दर ढंग व समय

जिस दूध की भूरि-भूरि प्रशंसा हम सुनते हैं उसका उचित ढंग व प्रकार भी हमें आना चाहिए। गौ के दूध के सम्बन्ध में कहा है—

'धारोष्णम् गव्यं पथ्यम्'

गौ का धारोष्ण दूध उत्तम पथ्य है। अमृत ही कहना चाहिए। प्रातः ज्यों ही गौ का दूध निकले, पृथ्वी पर भी न रखा जाए। छान कर गिलास आपके हाथ में आ जाए। पाव, डेढ़ पाव, आध सेर शक्त्यनुसार पीवें। पीने का सुन्दर ढंग यह होगा सिप सिप कर मुँह में घोल-घोल कर पिएं। "दूध खाया जाता है भोजन पिया जाता है" इसे स्मरण रखें। मेरे इस कथन से कल से ही आपने सवेरे उठ बैड टी की भाँति दूध का का प्रयोग आरम्भ कर दिया, बिस्तर पर बैठे-बैठे या उठते ही दूध लेने लगे, तो अमृत की अपेक्षा वह विष ही बनेगा, क्योंकि आप अमृत-सेवन के अधिकारी नहीं बने। वह तो कल्पवृक्ष है। अधिकारी के लिए अमृत, अनधिकारी के लिए विष वह तारक भी है, मारक भी। हमारे आश्रम में सहयोगी वैद्य जी इच्छुक थे कि मुझे धारोष्ण दूध मिला करे। मैंने उन्हें समझाया कि यदि अमृत चाहते हो तो ४ बजे उठो, आसन करके भ्रमण कर लो। तब कहीं छः बजे धारोष्ण दूध मिल सकेगा। शर्त यह है कि रात्रि में भी इतना हल्का आहार लो जो प्रातः तक पच जाए। भूख की अनुभूति को करा दे। यह है सर्वोत्तम समय व ढंग दूध के सेवन का। दूध पीने के आप पहले अधिकारी बनें। वह अमृत तो अपना अमृतत्व प्रकट करेगा अधिकारी के प्रति। उसी सुन्दर बेला में आप चाहें कुछ दाने किशमिश व अदरक के टुकड़े चबाकर दूध का स्वाद भी बढ़ा सकते हैं, रोचक बना, शीघ्र पचा सकने की क्षमता प्राप्त कर सकते हैं। कच्चा दूध वायु करेगा इस वहम से भी छुटकारा पा सकते हैं।

अधिक शक्ति चाहने वाले, जिन्होंने पूर्व इसके पूरा व्यायाम कर लिया है, वे इसमें शुद्ध शहद मिला कर लाभ उठाते हैं। पहलवान कोटि के लोगों का तो कहना है कि शुद्ध घी बर्तन में तोला दो तोला

डाल ऊपर से धारें मारी जाएं। वह घी धारा से ही पिघल मिल जाए, उसे पिया जाए। कुछ का मत है चार पांच काली मिर्चें घी के साथ चबाकर ऊपर से धारोष्ण दूध पिया जाना चाहिए।

नोट :—दूध में घी आदि की बातें विरले स्वस्थ हट्टे कट्टे लोगों के लिए ही हैं। दूसरे साधारण जन इसे पढ़ शक्ति के लोभ में यदि इन्हें प्रयोग में लायेंगे तो रही-सही पाचन क्रिया भी खो बैठेंगे।

गौ का दूध सात्विक, सुपाच्य, शक्तिदायक, आयुवर्धक है, भैंस के दूध के मुकाबले में। यों दूध पर ही लिखने लगूं तो एक पूरा लेख ही बन जाएगा। उसके सम्बन्ध में मेरे द्वारा तथा अन्य लेखकों द्वारा लिखी हुई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। किसी विशेष रोग की स्थिति में तो गौ-दूध की अपेक्षा बकरी का दूध कहीं महत्व रखता है—

अजानाम् अल्पकायत्वात् कटुतिक्तनिषेवणात्
स्तोकाम्बुपानात् व्यायामात् पूर्व दोषहरं पयः॥

बकरी का दूध दोषहर है क्योंकि छोटा सा शरीर, कड़वे कसैले पदार्थ खाने के कारण हल्की-फुलकी, फुर्तीली, व्यायामी होने से उस का दूध भी दोषहर व रोग-निवारक है। जब धारोष्ण दूध की व्यवस्था न हो तो उसे एक उफान देकर प्रयोग में लेना चाहिए।

अच्छा यही है उबला हुआ दूध केवल प्रातः लें। उसके साथ कोई अन्य नाश्ता न लिया जाए। हां आप कुछ चाहते हैं तो सूखे फलों का मिश्रण कर सकते हैं। दूध-मुनक्का, दूध-किशमिश, दूध-खजूर, दूध अंजीर, दूध के साथ खुरमानी आदि सूखे फल, सभी प्रकार के ताजे फल लें। आम, पपीता, संतरा, मोसमी, केला, टमाटर, शहतूत जैसे फलों के साथ दूध लें। रात में भी सुन्दर ढंग यह हो कि रोटी अन्न न लें, दूध, फल व मेवा लें। रोटी लेकर दूध पीना कोई अर्थ नहीं रखता। दूध को पूर्ण महत्व दें। उसे पूरा भोजन ही मानें। दूध को फल मेवे के साथ मिलावें। अन्न के साथ उतना अच्छा मेल नहीं है।

दूध का महत्व एवं दूध में पाये जाने वाले तत्त्व—जैसे ही प्राणियों में मुख्य जरायुज प्राणि पशु तथा उसने भी श्रेष्ठ मानव संसार में अवतीर्ण होता है कि उसके लिये ईश्वरीय व्यवस्थानुसार अत्यन्त हितकर सर्वोत्तम आहार उसको मां का दूध होता है। पशुओं में कुतिया के पिल्ले में, गौ के बछड़े में कुछ ही दिनों में आश्चर्यजनक स्फूर्ति व चेतना देखते हैं। एक मास तक पहुँचते-पहुँचते क्या कूदते फाँदते छलाँगें मारते हैं देखते ही बनता है।

दूध की श्रेष्ठता का प्रमाण इसी से प्रकट होता है। ईश-प्रदत्त किंवा प्रकृति-दत्त वह स्वाभाविक आहार है। उसके प्रभाव को देख आहार शास्त्रियों ने उसके महत्व को जानने हेतु तद्गत तत्वों का विश्लेषण किया और बताया कि दूध में शरीर निर्माण, संरक्षक एवं पोषक तीनों बातें पाई जाती हैं क्योंकि उसमें प्रत्यामिन, कार्वोज, दुग्धशर्करा, खनिज लवण, वसा तथा खाद्योज आदि पोषणोपयोगी तत्व पाए जाते हैं।

दूध वसा प्रधान आहार है जो शरीर को ताप व शक्ति देता है पर वह पूरा-पूरा काम अपनी प्राकृतिक दशा में ही करता है। नवजात शिशु माँ के स्तनों से जैसे दूध लेता है पशुओं से प्राप्त दूध भी उनकी धारोष्ण अवस्था में पूर्ण लाभकारी होता है। इसलिये गौ दूध के संवंध में लिखा **"धारोष्णं गव्यम् पथ्यम्"** गौ का धारोष्ण दूध हितकर है, **"पीयूषमभिनव पयः"** धारा से निकला शरीर में आया दूध अमृत (पीयूष) है। दूध के वसा अणु सूक्ष्म होते हैं कि आसानी से तथा शीघ्रातिशीघ्र शरीर की रक्त प्रदायिनी प्रणालियों में घुसकर उन्हें पोषण देने में सफल होते हैं। पर वसा अणुओं का यह स्वाभाविक गुण दूध को गरम करने से नष्ट हो जाता है क्योंकि दूध को गरम करते ही ये अणु पिघल और सिमिट कर दूध का ऊपरी सतह पर खिंच आते हैं और फिर सिवा स्वाद के और किसी काम के नहीं रहते। अतः दूध को गरम कर पीना अश्रेष्ठ है।

दूध में सोडियम, लोहा, कैल्शियम, पोटाशियम, मैग्नेशियम, सल्फर, आयोडीन आदि खनिज लवण पाए जाते हैं। इन्हीं से शरीर में बल आता है। शरीर की अस्थियाँ बनती व पुष्ट होती हैं। खाद्योज (विटामिन) की यह कथा है कि एक साथ ए० बी० सी० डो० तथा ई० ये पाँचों पाए जाते हैं। इन्हीं के परिणामस्वरूप दूध की प्रशंसा में आयुर्वेद में स्निग्ध, ओजवर्धक, धातुवर्धक, वृष्य, स्फूर्तिदायक रसायन, बुद्धिवर्धक तथा बलकारक कहा है।

दूध के गत गुणों को प्राप्त करने के लिये आवश्यक हो जाता है कि हम यथासंभव दूध को प्राकृतिक रूप में लेने का प्रयास करें। १. दूध को धारोष्ण ही पिएं गरम न करें। २. दूध को दुहने के बाद पृथ्वी पर भी न रखें। ३. दूध को सिप-सिप कर मुंह में घोल घोल कर पिएं। ४. दूध में चीनी न मिलाएं। ५. जितना पच सके उतना ही पिएं।

इन पांचों बातों में जितना अधिक से अधिक से पालन कर पाएं उतना ही श्रेष्ठ है, उसे अमृत बनाए रखने में सहायक है। मान लो सर्वथा यह संभव न हो कि स्तनों से निकलते बराबर पी सकें तो थर्मस या बोतल में भर लपेट कर रख सकते हैं कुछ मिनटों बाद पिया जा सकता है।

चिंतन का एक प्रकार :—प्रकृति का स्वाभाविक संकेत—शरीर रचना को देखते हुए सर्व प्रथम एक मत है कि दूध केवल बच्चों का ही आहार है, जब तक बच्चों के दांत नहीं आ जाते तभी तक वे दूध के अधिकारी रहते हैं। ज्यों ही उनके पूरे दांत आ जाते हैं उधर गौ, भैंस आदि पशु गर्भिणी हो जाती हैं स्वतः ही दूध बन्द हो जाता है कि अपने बच्चों को दूध पिलाना बन्द कर देती हैं। बच्चा घास, चारा, दाना खाने लगता है। एक मनुष्य का बच्चा है कि ज्यों ही अपना माँ का दूध पीना बन्द करता है त्यों ही साथ ही बछड़े की माँ

गौ या भैंस, बकरी का दूध पीना आरम्भ कर देता है। केवल इतना ही नहीं कि बचपन में ही ऐसा करता है बल्कि वह बूढ़ा होकर मरते दम तक ऐसा करना चाहता है जो कि अनुचित है। दाँत आने के बाद मूंगफली, बादाम तथा अन्य मेवे चबा कर दूध के गुण तत्त्व प्राप्त करने चाहिएं। इन्हें भिगो अंकुरित कर चबाना तथा पीस कर दूध तैयार कर पिया जा सकता है। मूंगफली को भिगो कर उसका लाल छिलका उतार कर पीस-छान ठीक दूध तैयार किया जा सकता है, उस दूध में लोग चावल आदि डाल पका खीर बना प्रयोग में लेते हैं। ऐसे ही ऋतु अनुसार खरबूजे के बीज पीस या खशखश अथवा कद्दू बीज पीस सुन्दर दूध तैयार किया जाता है। सोयाबीन भिगो छील पीस सुन्दर दूध तैयार किया जाता है। सोयाबीन भिगो छील पीस दूध तैयार कर दही जमाना, पनीर आदि तैयार किये जाते हैं। गौ दूध के स्थान पर ऐसे दूध का सुझाव दिया जाता है जो उपयुक्त हैं।

दूसरी ओर मनुष्य पशुओं से अपने को पृथक् बता बुद्धिजीवी कह दूध का अधिकारी मानता है। ऐसा कह वह पशुपालन व उनसे दूध प्राप्ति का आग्रह करता है, अनेक पूर्व ऋषियों का ऐतिहासिक उदाहरण पेश करता है कि ऋषि लोग अपने आश्रमों में गौएं पाला करते थे। गौएं ही उनके जीवन का मुख्य आधार होती थीं। गौ पालन, गौ सेवा, गोदानादि की गाथायें उपनिषदों, दर्शन ग्रन्थों में पाई जाती हैं। वेदों में गौ दूध, गौ घृत तथा उनसे सम्पन्न होने वाले यज्ञों की चर्चा भी आती है। इनके कथन में भो सार्थकता एवं ऐतिहासिकता पाई जाती है। पूर्व मत को महत्व देते हुए यदि हम चाहें भी तो जन मानस को दूध से पृथक् नहीं कर सकते, न प्रियता को कम कर सकते हैं। पुश्तदर पुश्त सदियों वंशपरम्पराओं से चले आ रहे दूध के संबंध में विचार को बदला नहीं जा सकता। चिन्तन के रूप में ही एक विचार दिया जा रहा है जिसे जँचे, जिसके गले उतर जाए अवश्य

प्रयोग करके देखे। प्राकृतिक जीवन का रहस्यपूर्ण तथ्य है।

दूसरी ओर दूध को पीयूष मानने वालों को भी थोड़ा ठीक-ठीक जान लेना चाहिये कि जिस दूध की हम इतनी प्रशंसा सुनते हैं वह किस रूप में लेने पर पूर्ण अमृत सिद्ध होता है। दूध को शिशु या बछड़ा जिस रूप में लेता है वह सुन्दर रूप है। माँ के स्तन से बाहर निकलते ही सीधे मुंह या गले में उतरता जाए उसे बाहरी आकाश, बाहरी वायु व पृथ्वी का स्पर्श न होने पाए। दूसरी बात महत्व की है जब बच्चा दूध पीता है तो उसका वही मुख्य आहार होता है वही पूर्ण भोजन। पर वयस्क अन्य अन्नादि आहार लेता हुआ दूध को पूर्ण आहार न मान पानी सा मान प्रयोग करता है जो कि दोषपूर्ण रोगकारी प्रकार है।

देहातों में गौ, भैंस, बकरी की धारें लेने का प्रकार सर्वश्रेष्ठ है। आज जिस ढंग से दूध दुकानों पर आता गरम कर पीने पिलाने का रिवाज है वह तो दूध को अमृत न रहने देकर विषाक्त बनाने की प्रक्रिया है। गौ को घर में पाल स्वच्छ चारा अन्न दाना खिला विधिवत् स्वच्छता से दूध लें, अमृत का प्रयोग करें, दीर्घ जीवी बनें। रोगों के निवारण में गौ दूध का कितना बड़ा स्थान है कितने ही रोगों में दूध कल्प कराए जाते हैं। रांची में एक अंग्रेज सज्जन ने प्राकृतिक चिकित्सालय बनाया। वहाँ चिकित्सालय बनाने की एक रहस्यपूर्ण घटना सुनी जाती है। उसे टी० बी० हो गयी थी। उसके लिये सर्वोत्तम उपाय की सूझ थी कि स्त्री का स्तनपान किया जाए, यह कैसे संभव हो। इस प्रयास में रांची की कोल भील जाति दिखाई दी। उनमें परदा प्रथा तो उतनी थी ही नहीं अर्धनग्न दशा में उनकी स्त्रियाँ यों भी रहती थीं वहाँ पहुंच उसने अपनी जगह बना ली और कुछ जंगली स्त्रियों से ऐसा सम्बन्ध स्थापित कर लिया जो आकर उसे अपना दूध पिला जातीं। इस प्रकार उसने स्वास्थ्यलाभ किया। स्वस्थ हो वहीं चिकित्सालय की स्थापना की।

"दूध कल्प विधि"

सामान्यतः कल्प शब्द प्रसिद्ध है, आयुर्वेद के आर्यग्रन्थों में काया-कल्प के विभिन्न प्रकार बताए गए हैं। कायाकल्प का अर्थ होता है—शरीर का नवीनीकरण। इसे करने के लिये पंचकर्म द्वारा शरीर शोधन कर गुहा प्रवेश करा विधिवत् औषधि विशेष प्रकार के सेवन कराये जाते थे।

यह कल्प भी आपके शरीर को नया बनाएगा। नव चेतना देगा। इसकी प्रशंसा में कहा जाता है अमुक-२ रोगों में लाभप्रद है उनकी संख्या बताते हुये हमारे साथी रोगों के नाम गिनाया करते हैं—मानसिक रोग, संग्रहणी, शूल, उन्माद, मूर्च्छाविंस्त रोग, बवासीर, रक्त-पित्त, अतिसार, योनिरोग, गर्भस्राव, श्वास, कास, सुजाक, वात्तपित्त, रक्त विकार तथा क्षयादि रोगों में हितकर है।

दूध कल्प की तैयारी—दूध दही इन सभो अमृतोपम वस्तुओं के कल्प यों ही नहीं चलाने चाहिये। सर्व प्रथम शरीर का संशोधन कर लेना चाहिये। शरीर शुद्धि के लिये तीन से ७ दिन का उपवास कर लेना आवश्यक है। तीन व ७ दिन की भाषा को ठीक से समझ लें यदि किसी पुराने भयंकर रोग में फंसे हुये नहीं हैं कुछ शरीर भार बढ़ाने की दृष्टि से या अन्य इन्द्रिय शक्ति विकासादि के विचार से करना चाहते हैं तो तीन दिन का उपवास भी पर्याप्त हो जाएगा। विपरीत इसके किसी पुराने भयंकर रोग में जकड़े हुये हैं तब आप सात दिन तो उपवास कर ही जाएं उसके बाद ही दूध पर आने का सोचें। उपवास को भी अपने ढंग से करें पहले भारी आहार बन्द करें हल्का अन्नाहार, अन्नाहार में क्षारीय आहार उसके बाद दो तीन फल सब्जियों पर रहें बाद में फल या सब्जियों के रसों पर ही रहें, दो या तीन दिन, उन दिनों जब रस ले रहे हों, प्रातः सब से पहला काम करना है सेर डेढ़ सेर पानी कुनकुना कर थोड़ा नमक मिला पिएं और अंगुली गले में डाल गुदगुदा कर वमन कर सारा पानी निकाल दें।

इस प्रकार वमन का अभ्यास हो जाने से से उपवास में कोई परेशानी नहीं होगी।

"उपवास की कष्टहर विधि"

उपवास काल में आने वाली सभी परेशानियों का एकमात्र उपाय है वमन क्रिया। रसाहार के बाद अब आप उपवास आरम्भ कर दें। पुस्तक में दिये उपवास प्रकरण को ध्यान से पढ़ें तदनुसार अपने को चलाएं। उपवास के दिनों एक बार नहीं अनेक बार पानी पी पी कर वमन करते जायें। उस तक तो केवल वमन क्रिया चलाएं जब देखें वमन में खट्टा, कड़वा, खारी कुछ नहीं आ रहा जैसा पानी पिया वैसा ही आ रहा है तब समझें कि शुद्धि हो गई उस के बाद नींबू रस पानी में मिला शुरू कर दें। ऋतु को देखें गरम या ठन्डे पानी में नींबू रस मिला जब कभी नमक चाहें मिलाकर दिन में पीयें चार पाँच छः बार। इस प्रकार नींबू के रस पर रहने से जब पर्याप्त शुद्धि हो जाये हल्की सी भूख जग जाये, जीभ भी सफेदी से मुक्त हो जाये लाल लाल दीखने लगे समझ लें उपवास सफल। जब रसाहार वं उपवास चल रहा हो उन दिनों सवेरे पेडू पर या सारे पेट पर मिट्टी रखें आध पौन घन्टा के लिए। बाद में क्रमशः उन एनिमा के द्रव्यों द्वारा एनिमा करें जो पुस्तक में दिये गये हैं।

१. नींबू २. त्रिफला ३. मट्ठा ४. पालक आदि के द्वारा। मिट्टी की पट्टी ऋतु व रुचि के अनुसार गरम या ठन्डी कर सकते हैं। उपवास के दिनों में खाली रहना आहार लेना ही नहीं तब दो तीन बार मिट्टी पेट पर रखें प्रातः सायं दो बार एनिमा भी लें। प्रातः गरम पानी वाले द्रव्यों का सायं ताजे पानी द्वारा। उपवास के बाद दिन में ४ या पांच बार किसी ऋतुज फल का रस जैसे संतरा, मोसंबी, अनार, जामन, पपीता, खरबूजा आदि फलों का रस लें। ऐसी ही गाजर, शलजम, मूली, धनिया, शलजम-मूली के पत्तों को पीस उनका रस, गाजर जैसो चीजों को कस कच्चा रस नींबू

मिला लें। दो बार सब्जियों का दो तीन बार फलों का रस लिया जाये। चाहें दो तीन प्रकार की सब्जियों को कुकर में या हांडी में या कलईदार पतीले में पका (बिना पानी के वे अपने रस में भाप से पकें) ठन्डा कर निचोड़ उन सब्जियों के रसों को पीएं। आध पाव तीन छटांक की मात्रा से लें। इस प्रकार फल सब्जियों के रस लेने पर दो तीन दिन में भूख जग जायेगी। बस तब समझें समय आया दूध कल्प का। जब इस प्रकार शरीर तैयार कर लिया तब थोड़ी बाहरी तैयारी करलें गौ दूध की समुचित व्यवस्था कर लें। क्या संभव है कि आप स्वयं गौ पाल सकें तो सर्वोत्तम अन्यथा गोशाला या अन्य स्थान से दूध की व्यवस्था करें। गौ स्वस्थ हो, नई प्रसूत हो ऐसी गौ का दूध चाहिये, बहुत दिनों की ब्याही हुई न हो। ताजा दूध सामने निकाल कर दे सके इतना प्रेम पैदा करें विश्वास जमायें।

यदि आप टी० बी० क्षय के रोगी हैं तो अच्छा हो आप गौ की अपेक्षा बकरी के दूध की व्यवस्था करें। साहस कर दो तीन बकरियाँ खरीद लें। डाक्टर की दवाओं में भी सैकड़ों रु० व्यय हुये या होंगे क्यों न इधर लगा दिये जाएं। पाली हुई बकरी के दूध को आप अपने अनुकूल सुस्वादु सुमधुर बन सकेंगे। बकरी का दूध पीने में जो लोगों को दुर्गन्ध आती है अस्वादु होने से पीना कठिन हो जाता है वह बात भी दूर हो जाएगी। बड़ा हितकर सिद्ध होगा। संभवतः सन् ४५ की बात होगी सीतामऊ स्टेट में वहाँ की रानी को इन्दौर के प्रसिद्ध डाक्टर मुकर्जी ने व अन्य डाक्टर ने टी० बी० बता दिया। डाक्टर के उपचार से थक वह उज्जैन के कल्प वृक्ष के संस्थापक मालव संत डाक्टर दुर्गाशंकर जी नागर के उपचार में आईं। उज्जैन से एक व्यक्ति सीतामऊ गया हुआ था तभी नागर जी की प्रेरणा से मेरा भी वहां जाना हुआ। प्रश्न सामने आया कि महारानी का शरीर भार—वजन कैसे बढ़ाया जाये, कैसे रक्तवृद्धि हो और टी० बी० से मुक्ति मिले। मैंने सुझाव दिया दूध कल्प हो जाये तो संभव है पर बकरी के

दूध का नाम सुन घबराईं, मैंने समझाया आप तो केवल एक संकल्प करो कि मुझे दूध कल्प करना है मेरा काम है कि कैसे दूध को रुचि कर बनाऊं उसकी दुर्गन्ध भगाऊं, उन्होंने स्वीकार किया। बकरियाँ खरीद ली गईं। बकरियों को जंगली आहार के अतिरिक्त रोज भीगे हुए चने, जौ, गाजरें, खजूर खिलाई जाने लगी। बड़ा सुन्दर सुमधुर दूध मिलने लगा, दूध कल्प ठाठ से चला। ३२ दिन में चार पौंड वजन बढ़ा। उसके बाद मैं उज्जैन चला आया फिर कितने दिन दूध का प्रयोग चला, कितना वजन बढ़ा पूरी जानकारी नहीं, पर उसके बाद वर्षों जीवित रहीं।

दूध की समुचित व्यवस्था के साथ अपनी आवश्यक जिम्मेदारियों, अपनी परेशानियों को भी दूर कर दीजिये। उन सब से मुक्त हो जाइये, सेवा करने वाले का प्रबन्ध कर लें; कौन जिम्मेवारी से दूध दोहेगा या लायेगा। इतना करने के साथ अच्छे खुले हवादार स्थान का चुनाव करलें। ऋतु अनुसार आरामदायक हो। न तो लू हो न ठण्डी हवा के झोंके हों पर बन्द हवा का भी न हो। आस पास नाहक शोर न मचता हो, कुछ शान्त एकान्त मनोहर स्थान हो, बगीचा हो, सुवासित फूलों से सजा हो तो बात ही क्या है, अच्छा बिस्तर बिछालें, घड़ी टाइमपीस या दीवार वाली हो, सामने हो, बस आप लेट जाएं दूध कल्प के लिए।

दूध कल्प का प्रकारः—धारोष्ण दूध लेकर या एक उफान का लें। दूध को किसी शीशी में डाल खूब हिला झाग-२ कर लें तब सोप सीप कर पिएं, मुंह में लेकर उसे और खूब हिलायें। मुंह की लार मिलायें तब गले के नीचे उतारें। इसकी सविस्तार विधि देखना चाहें तो मेरी लिखी पुस्तक "दुग्ध चिकित्सा" पढ़ें जोकि मैंने "कल्प वृक्ष उज्जैन" को भेंट करदी थी वहां से प्रकाशित हो रही है। कल्पवृक्ष उज्जैन (मध्य प्रदेश) इतने पते पर पत्र द्वारा मंगाई जा सकती है।

	मात्रा	समय	कितनी बार
प्रथम दिन	१ औंस	२ घण्टे बाद	७ बार
दूसरे दिन	१॥ ,,	,,	,,
तीसरी दिन	२ ,,	,,	,,

इस प्रकार क्रमशः आधा चौथाई औंस प्रतिदिन में बढ़ाते जाएं, एक सप्ताह पर्यन्त। सप्ताह बाद समय की अवधि दो घंटे की अपेक्षा पौने दो घण्टे कर दें। उधर दूध की मात्रा उसी क्रम से बढ़ने दें। अगले सप्ताह दूध की मात्रा उसी क्रम से बढ़ती जाए पर समय को घटा दिया जाय, डेढ़ घण्टा कर दिया जाए। इसी क्रम से बढ़ते जाएं, समय की दूरी घटाते जाएं, घटाते घटाते हर आध घण्टे पर पहुंच जाएं।

यहाँ तक पहुंचते २ पर्याप्त वजन बढ़ना चाहिए, शरीर में खूब स्फूर्ति, मस्तिष्क में सुविचारों की प्रगति, उत्साह ये सब लक्षण दिखाई देंगे। दूध कल्प का यह एक प्रकार है।

पाश्चात्य विद्वान डाक्टर मैकफेडन प्राकृतिक चिकित्सक ने अपनी "दुग्ध चिकित्सा" पुस्तक में हर आध घंटे पर दूध लेने का विधान किया। समय वही आध घन्टे का रखा पर मात्रा दूध की बढ़ती गई। बढ़ते-२ हर आध घण्टे पर डेढ़ पाव व आगे आध सेर तक भी पहुंचा दिया। दूध पियो और लेट जाओ। छोटे शिशु की नकल करो वह यही करता है। दूध पीते २ सोने लगता है। सभी प्रकार के श्रम बन्द, न मानसिक न शारीरिक, न अधिक पढिये न बातें ही कीजिये, बस आलसी बन पड़े रहने में अपनी कुशलता दिखाएं। दूध कल्प की सफलता की बड़ी शर्त है "पूर्ण विश्राम" करना। विश्राम में ही दूध तेजी से पचता है।

तीसरा विकल्प यह भी हो सकता है हर घण्टे पर दूध लें। देर से दूध लेने पर घन्टा या दो घन्टे की देर से इतना लाभ और लिया जा सकता है कि दूध पीकर आध पौन घण्टा लेट जाएं। उसके बाद न लेटना चाहें या कार्यव्यस्तता हो तो उठकर कुछ हल्का काम किया

जा सकता है। इस प्रकार दूध पचने में भी उतनी अड़चन न आयेगी। आपके काम में भी रुकावट न पड़ेगी, एक समन्वय हो जायगा। सहज में आप इस प्रकार कल्प निभा सकेंगे। कितने दूध तक पहुँच जाना चाहिये इसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि जितने फुट मानव लम्बा हो उतने सेर दूध तक पियें। पाँच फीट लम्बा पांच सेर दूध तक पहुँच जाये। जितने सेर दूध उसे जिस दिन पीना है उतने औंस दूध हर घन्टे उतने पर पीयें।

दिन में जितने बजे दूध आरम्भ करें सायं या रात्रि में उतने बजे तक पीयें। प्रातः ६ बजे से आरम्भ करें तो सायं ६ बजे तक चलायें। बहुत ही करें तो एक दो मात्रा अधिक लें उसके बाद बन्द। रात्रि में देर तक लेने पर पेशाब तंग करेगा, निद्रा में भंग करेगा। सचमुच भूख इतनी जग गई है कि रात्रि में भी मांग होती है तो वैसी दशा में रात्रि में चाहें तो उठकर भी मात्रा ले सकते हैं। इस विषय में रोगी थोड़ा स्वतन्त्र भी हो सकता हैं, अपने विवेक से भी काम ले सकता है, अपनी माँग व भूख को देखे और मात्रा का निर्धारण करे। पर बड़ी सच्चाई से इसे देखना होगा, कहीं लोभ व आसक्ति के कारण वैसा न किया जाये। यदि अपनी जिह्वा पर संयम न हो तो बड़ी कड़ाई से नियम का पालन करें, लगने दें भूख, लगती है तो, वह भूख भी एक इलाज ही कर रही है। इस प्रकार दूध कल्प को ४० दिन पर्यन्त चलाएं और अधिक आवश्यकता हो तो दो तीन चार मास तक निरन्तर चलने दें। इतना करने से सयम सधेगा, नवस्फूर्ति, नवजीवन प्राप्त होगा।

कल्प समाप्ति का प्रकार—जिस दिन आप दूध को विधि मर्यादा को समाप्त करना चाहते हैं उस दिन यों करें—यदि आधे घंटे या घंटे के क्रम से ले रहे हैं तो दो तीन मात्रा ले लें, दो घण्टे के अन्तर से लेते हैं तो एक मात्रा लेलें, उसके बाद दो तीन घंटे का अवकाश देकर बाद में थोड़ी सी उबली सब्जी, कोई एक ऋतुज फल, थोड़ी दही लें।

तीन चार घन्टे पुनः अवकाश ले बाद में दूध की मात्रा उसी क्रम से लें। दूसरे दिन प्रातः एक दो मात्रा दूध की ले बीच में तीन घण्टे का अवकाश दे दोपहर में फल सब्जी व दही लें। चार घण्टे का अवकाश दे एक मात्रा दूध की लें। पुनः दो घण्टा अवकाश ले कुछ फल सब्जी बस। तीसरे दिन भी इसी क्रम से कुछ फल सब्जी को मात्रा को बढ़ाकर लें। चौथे दिन दोपहर में सब्जी के साथ कुछ दलिया या चोकरदार आटे की रोटी भी लें। चार घण्टे बाद कोई रसदार फल रात्रि में फल सब्जी। पाँचवें दिन प्रातः दूध दोपहर में अन्न की मात्रा बढ़ा दें शेष पूर्व दिन की भाँति। धीरे-२ दोपहर के आहार में अन्न की मात्रा बढ़ाते हुए पांचवें दिन दोपहर में अपने पूर्ण भोजन तक आजाएं। कुछ दिन दोपहर का भोजनं पूर्ण होने के बाद ही रात्रि के आहार में अन्न को शुरू करें। यदि इस क्रम में रात्रि के आहार में भी धीरे-२ अन्न की मात्रा को बढ़ाया तो निश्चित ही है कि आपका पेट ठीक चलेगा, कोई परेशानी न आएगी, जरा भी अपच भारीपन न होगा। अच्छा हो यह ध्यान रखें अन्नाहार से शाक सब्जी की मात्रा दुगुनी हो फिर कल्याण ही है। आगे चलकर भोजन में दही की मात्रा को बढ़ा सकते हैं। सब्जी में घी भी धीरे-२ मिला सकते हैं।

तभी पूर्णान्न भोजन की ओर आ जाएं मूंग चना मोठ मूंगफली मसूर जैसे अन्नों को छः घन्टे पानी में भिगो दें, बाद पानी से निकाल कपड़े या टाट में टाँग दें, कोई अन्न २४ घण्टे में, कोई ३० या ३६ घंटे में अंकुरित हो जायेगा। उस अंकुरित अन्न को कुछ कच्ची मात्रा में कुछ को अधिक मात्रा में छौंक नमक मिला खूब स्वादिष्ट बना चबा चबा कर खाएं। साथ ही कच्ची सब्जियों का सलाद खायें। कल्प के द्वारा संयम की साधना कर जायें। रसना का स्वाद बदला जीवन बदला आप बदल गये। आगे इन्द्रिय और विषयों के दास बन कर चल रहे थे, किसी प्रकार जीवन नैया खे रहे थे, अब शरीर बुद्धि

इन्द्रियों के स्वामी बन कर जियें। शरीर एक घोड़ा है उसे खुराक देनी है, सुन्दर सारयुक्त प्राकृतिक पूर्णान्न खाद्योज युक्त आहार दें अव इस सादे आहार में आपको स्वाद आने लग जाये।

"रोग की दशा व दूध"

चिंतन का एक प्रकार :— दूध चिकित्सा दूध कल्प के सम्बन्ध में देशीं विदेशी प्राकृतिक चिकित्सकों ने प्रशंसा में अनेक रोगों की तालिका लिख दी। इन इन रोगों में दूध कल्प लाभप्रद है। इस सम्बन्ध में मेरा निवेदन है भले ही दूध एक ऐसा आहार है जो अन्नाहार की अपेक्षा सुपाच्य है, शरीर में शीघ्र आत्मसात् होने वाला, पाचक अंगों पर बोझ न डालने वाला आहार है तो भी रोग दशा में रोगों के निवारण करने में कितना कारगर है यह एक चिन्तन का विषय है। हम मानते हैं शरीर में विकारों का अस्तित्व ही रोग है। कुछ इनेगिने रोग होंगे जो केवल अभाव से संबंधित हों। अभाव सम्बन्धित रोगों में—पर वे रोग ही क्यों माने जावें केवल शरीर की कमजोरी ही कहें। ऐसी कमजोरी निश्चित ही दूध जैसे पोषक आहार के मिलते ही सहसा हटती जायेगी, झट से शक्ति आ जायेगी। अन्य जितने रोग हैं जो विकार रूप ही उन्हें हटाने के लिये शोधक प्रयोग करने अपेक्षित हैं। जब हम शोधक प्रयोग करने जाते हैं तब पोषक तत्व नहीं चाहियें। दूध एक पूर्ण आहार है, पोषक तत्व है, रोग हटाने के समय उसे लेना कोई बुद्धिमत्ता नहीं है। प्रयोग ने सिद्ध किया दूध देते हुये रोगों को हटते न देखा गया। अतः मेरी राय है जटिल रोगों को जड़ से निर्मूल करने के लिये पहले छोटे बड़े उपवास करलें, उपवास द्वारा उन्हें निर्मूल कर दें,, उपवास से आई क्षीणता दुर्बलता को हटाने के लिये अवश्य ही दूध कल्प या मट्ठा कल्प कर डालें ताकि शरीर में पर्याप्त व शुद्ध रक्त भर जाये, शरीर शक्ति सम्पन्न हो जाये, उसमें रोग प्रतिरोध क्षमता आ जाये। हाँ दाद, खुजली, एनिमा जैसे रक्त विकार से सम्बन्धित रोग जिनकी

जड़ें आंतों की गहरी गुहा में पड़ी हैं भले ही उनके हटाने के लिए लम्बा सफल उपवास नहीं कर पाये, फिर भी थोड़ा सा उपवास करते ही यदि आपने दूध कल्प शुरू कर दिया तो भी बड़ा कल्याण होगा क्योंकि दूध द्वारा शुद्ध रक्त बढ़कर विकृत रक्त को बाहर निकालने में प्रवृत्त होगा। कुछ बड़े-बड़े फोड़े निकाल मवाद बना विष को बाहर निकाल रक्त को शुद्ध कर शरीर को रोग रहित कर सकेगा। ऐसा कुछ रोगों में सीधे सीधे दूध कल्प का अपना स्वतन्त्र महत्व है जबकि अन्य जटिल रोगों में सर्वाधिक उपवास का, उसके बाद अशक्ति दूर करने नव शक्ति स्फूर्ति लाने के रूप में परंपरा से दूध कल्प का स्थान है। रोगों को हटाने में सीधा सीधा दूध कल्प का कोई महत्व नहीं है।

"क्या अशक्ति रोगों का कारण है"—हम रोगों का कारण विकारवाद को मानते हैं अभाववाद को नहीं। वैसी दशा में विकारों को हटाने की वेला में कोई दूध जैसा पोषक आहार देना पसन्द नहीं करते। दूध को अमृतोपम मानते हुये भी शरीर के विकारों से भरे रहने की दशा में देना पसन्द नहीं करते। पहले पात्र को विकार रहित कर दो, मल को निकाल दो। शुद्ध कर बाद में उसमें अमृत व शुद्ध वस्तु भरो। पात्र को मल रहित किये बिना अमृत सम वस्तु भरने पर भी अमृत का दुरुपयोग होगा। अतः उपवास द्वारा विकार मल व रोग निवृत्ति करें, बाद में दूध कल्प करें।

———

"चाय की कहानी एवं गुण-दोष वर्णन"

जिस चाय के प्रचार के सम्बन्ध में कहा जाता है कि सर्दियों में गर्मी देने वा गर्मियों में ठंड पहुँचाने वाली चाय है। प्रचार के लिए पहले-पहल प्रदर्शनियों, मेलों आदि सार्वजनिक स्थानों में मुफ्त पिला पिला कर लोगों को व्यसनी बनाया गया। जब वे इसके आदि हो गए तो उनसे चाय बिना रहा ही नहीं जाता। बस चाय मिल जाए और कुछ मिले या न मिले। जहाँ चाय को तनिक भी देर हुई कि सिर-दर्द हड़-फूटन आई। यदि दिन में चाय न मिली तो शरीर इतना शिथिल हो जाता है कि दिन भर बेकार हो गया। काम करने की शक्ति ही न रही। सिर-दर्द तो वह परेशान करता है कि कहें ही क्या। जब इसको पिया कि होश हवाश ठिकाने आए।

इसलिए मैंने इसके दो नाम रखे हैं—(१) राक्षसनी (२) जादूगरनी। राक्षसनी इस कारण कि इसने अनेक स्त्री-पुरुषों को खा लिया, जर्जर कर दिया। खोखला कर दिया। रज-वीर्य विकारादि धातु रोग लगा दिए। भूख को खा गई। नींद को खा गई। जीवन के विकास को खा गई। बढ़ती जवानी को, शांति, प्रसन्नता, उदारता, सहिष्णुतादि सद्गुणों को खा गई।

जादूगरनी इस कारण कि ऐसा जादू सा डाल दिया कि अब इससे पिंड छुड़ाना ही कठिन हो गया। जहाँ छोड़ो कि अनेक परेशानियों को मोल लो।

मेरे इस कथन के विपरीत सभी चाय-पियक्कड़ अपने अनुभव से इसे सरासर गलत बताएंगे। अजी हम तो प्रत्यक्ष अनुभव करते

हैं। जहां चाय पी कि दुगनें उत्साह, स्फूर्ति से काम में जुट गए। उसके प्रभाव से किस चुस्ती से हम ने अपने काम को पूरा कर दिया।

मैं मानता हूं आप सर्वथा ठीक कहते हैं। इस में एक ऐसा द्रव्य है, जो आप को चुस्ती देकर आप से काम करा लेता है। अन्यथा आप जरा चाय का एक कप बाजार से मंगाएं, उसका विश्लेषण करें। उस में शक्ति नाम की कौन सी वस्तु है, जिसने आपको शक्ति दी और आप नें काम कर दिखाया। एक चम्मच दूध, वह भी सप्रेटा, एक चम्मच चीनी, पानी, चाय की पत्तियां। अब आप सोचें, उतने दूध वा चीनी में कितनी शक्ति है जो एक व्यक्ति में भरी गई और वह शक्ति पा मस्त होकर काम कर गया?

मेरा कहना है यह चाय के कप से आने वाली चुस्ती तो कमजोर घोड़े का चाबुक है जैसे चलने में असमर्थ कमजोर घोड़ा दो-चार चाबुक खाते ही दस कदम तेज दौड़कर दिखा देता है। हर चाबुक की मार उसकी गति को तेज कर देती है। क्या चाबुक की मार घोड़ें की शक्ति की द्योतक है? उस में शक्ति भर रही है? जिस घोड़े ने मालिक की पांच साल सेवा करनी थी, वह दो साल ही जिएगा, चाबुक की मार से दौड़कर।

ठीक ऐसे ही कमजोर शरीर से जब आप चाय के चाबुक से काम लेते हैं तो वह भी आयुहीन, शक्ति-विहीन होता जाता है और शीघ्र ही आप को छोड़ देता है। भूल जाइए इस बात को कि चाय आप को चुस्ती या शक्ति की मस्ती देती है। वह तो चाबुक मार कर काम लेती है।

चाय के गुण-दोष वर्णन:—आयुर्वेद के अनुसार तीक्ष्ण, गरम, कसैली, अग्निदीपक, वातकुपित करने वाली है।

यूनानी चिकित्सा में यह दूसरे दर्जे की गरम खुश्क है। एलोपैथी विज्ञानानुसार रासायनिक विश्लेषण—

मांस बनाने वाले पदार्थ—[केफीन] थीन Theine ३० प्रतिशत,
केसीन १५ प्रतिशत

गर्मी देने वाले तत्त्व—(१) एरोमेटिक आयल—७५ प्रतिशत
(२) शक्कर ३ प्रतिशत
(३) गोंद १८ प्रतिशत
(४) चर्बी के तेल ४ प्रतिशत
(५) टैनिन एसिड २५–२६ प्रतिशत
(६) खनिज द्रव्य ५ प्रतिशत

उत्तेजक या स्फूर्ति देने का श्रेय केफीन नामक पदार्थ को है। स्नायु में चेतना-शक्ति सी दौड़ पड़ती है।

टेनिन नामक तत्त्व रंगने के काम में आता है, आंतों की सतह को कड़ा करता है, भूख को मंद करता है। परिणामस्वरूप कब्ज होने लगता है। पाचन-शक्ति को मंद करने में यह सिद्धहस्त है।

भूख बंद करने वाला तत्त्व २६ प्रतिशत पाया गया। वोलेटाइल तेल, टेनिन एवं थेईन ये मुख्य तत्त्व हैं। एक कुछ स्फूर्ति देता दिखाई देता है, तो आंतों की गति को मन्द करता, भूख बन्द करता हुआ कब्ज का मुख्य कारण बनता है।

तीसरा—निद्रा की नसों में खुश्की लाने वाला बन निद्रानाश का कारण बनता है।

बच्चों की आंतों पर टेनिन नामक विष बड़ा घातक प्रभाव डालता है। अनजान भोले माता-पिता छोटे बच्चों को चाय पिलाकर उनका बहुत बड़ा अहित करते हैं। उनकी आंतों का सत्यानाश करते हैं।

चाय बनाकर कभी सफेद कपड़े से छानकर देखें उसका रंग न उतरेगा। ठीक वैसे ही वह आंतों को रंगने या कड़ा करने का दुष्प्रभाव आंतों पर डालता है।

SUNDER NAGAR

D. R. Dhiman
I. F. S.

सेवा में,

महात्मा जगदीश्वरानन्द जी महाराज
जीवन निर्माण केन्द्र, पाँचली
शिविर-सुन्दर नगर

पूज्य स्वामी जी,

पिछले न जाने कितने वर्षों से मेरी नब्ज (नाड़ी) की गति ४२-४५ प्रति मिनट हो चुकी थी और गत वर्ष १९७९ के अप्रैल मास में जब मैं अपना मैडिकल चैकअप करवा रहा था तो पता चला कि मेरी नाड़ी इतनी धीमी थी। डाक्टरों ने एक दम मुझे सचेत कर दिया, ई० सी० जी. करवाया व हृदय रोग से सम्बन्धित जो भी छानबीन थी जारी कर दी। मेरा रक्त चाप तो सामान्य (नौरमल) ही था परन्तु नाड़ी का इस प्रकार आधा होना चिन्ता का विषय बना रहा।
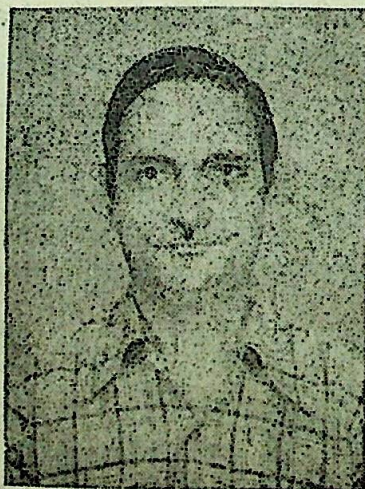
दिला राम धीमान

ई० सी० जी० जिला हस्पताल मण्डी में करवाया गया। वहां पर भी यही निष्कर्ष निकला कि एक बीट एक्ट्रोपिक बीट बनकर आती है और नाड़ी की असली बीट (चाल) को रोक देती है कभी एक के बाद और कभी दो के बाद ऐसा होता है। दवाईयां महीनों खाता रहा। फिर होम्योपैथी की दवाईयां लेनी शुरू कीं जिनका मुझे स्वयं भी ज्ञान है। दूसरे होम्योपैथों के पास भी गया। नाड़ी की गति में कोई सुधार नहीं हुआ। आयुर्वेदिक दवाईयां लेनी आरम्भ कीं, सिद्ध मकर-ध्वज व अन्य कई दवाईयों का महीनों सेवन करता रहा। अमृतसर के एक हृदय विशेषज्ञ डा० गुप्ता को भी मैंने दिखाया उन्होंने ई० सी० जी० करवाया, खून की जांच कराई, पेशाब की जांच कराई, एक्सरे लिए। और अन्त में उन्होंने कहा कि इस केस की मैं कोई व्याख्या नहीं दे सकता। सेहत सामान्य है परन्तु नाड़ी की गति ऐसी है कि एक या दो बीटों के बाद एक बीट मिस करती है। इसके बाद मैं सन्तोष कर बैठ गया लेकिन मन की चिन्ता बराबर रही कि नाड़ी की गति का यह विकार कभी भी खतरा पैदा कर सकता है। यद्यपि मेरी शारीरिक अवस्था सामान्य थी, रक्त चाप सामान्य था, शर्करा की कोई शिकायत नहीं, शरीर में कोई कष्ट नहीं, फिर भी विषय रहस्यमय रहा।

सौभाग्य से आपने सुन्दरनगर में जुलाई १६८० में शिविर लगाया। मैं अपनी पत्नी के शारीरिक विकारों को दिखाने के सम्बन्ध में आपसे मिला, आपके उपदेश सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मेरी नौकरी इतनी व्यस्त है कि मैं आपके शिविर में बराबर शामिल नहीं हो सकता था परन्तु आपके एक उपदेश को मैंने सुना कि चाय पीना बहुत खतरनाक है और इससे शरीर में हृदय रोगों सहित कई रोग हो सकते हैं। मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया और दूसरे दिन से ही चाय पूर्णतया छोड़ दी हालांकि मैं पिछले पच्चीस वर्षों से बराबर चाय दिन में कई बार पीता था। मुझे हैरानी हुई कि चाय छोड़ने के दूसरे दिन बाद ही मेरी नाड़ी की गति में सुधार होने लगा और

तीसरे दिन यह लगभग सामान्य हो गई। अब १५–२० दिन चाय छोड़ी को हो चुके हैं और हर समय यह ६७ से ७५ प्रति मिनट की गति से चलती है।

इस प्रकार डेढ़ वर्षों से चल रही यह समस्या जो मेरे मन में चिन्ता का विषय बनी हुई थी, हल हो गई है।

मैं किन शब्दों से आपका धन्यवाद करूं अपने को अक्षम समझ रहा हूँ। आपके सामयिक उपदेश से मेरी नाड़ी का विकार एकमात्र चाय छोड़ देने से ठीक हो गया है। मुझे विश्वास हो गया है कि चाय एक बड़ी खतरनाक चीज है और इस चाय के कारण ही हमारे देश के नौजवान हृदय व रक्त चाप जैसे रोगों का शिकार हो रहे हैं। मुझे विश्वास है कि प्रत्येक व्यक्ति मेरी इस कहानी को पढ़कर चाय पीना छोड़ देगा।

सम्मान सहित।

दिला राम धीमान,
वन मण्डलाधिकारी,
सुन्दरनगर वन मण्डल
सुन्दरनगर–१७४४०१
जिला मण्डी (हिमाचल प्रदेश)

———

भारतीय चिकित्सकों का ज्ञान श्रेष्ठ है

पाश्चात्य चिकित्सकों की अपेक्षा

ये उद्‌गार हैं मेयो हस्पताल के प्रसिद्ध सिविल सर्जन महोदय के।

कहानी यों है। पटियाला के महाराजा श्री भूपेन्द्र सिंह जी जहां बड़े उदार थे, वहां साधु, ब्राह्मण, विद्वानों का सम्मान करने वाले भो थे। उनके पास पं० दिलाराम जी वैद्य रहते थे, जो अपनी सादी वेष-भूषा में रहते थे। अंगरखा और पंजाबी मोटी पगड़ी पहना करते थे। प्रभु की देन थी उन्हें। वह रोगी की आंखें देख रोग का निदान कर लेते थे। नांड़ी पर हाथ रखना, या अन्य साधनों से परीक्षा की उन्हें आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी। संभवतः सन् १६१४ या १५ की बात होगी।

एक बार महाराजा भूपेन्द्रसिंह जी लाहौर गये। वैद्य जी उनके साथ थे। मेयो हस्पताल का निरीक्षण कराते हुए वहां के प्रसिद्ध अंग्रेज सिविल सर्जन महोदय ने वैद्य जी के संबंध में पूछा यह कौन हैं ? महाराज ने आदर सहित परिचय दिया—यह हमारे श्रद्धेय वैद्य जी हैं। सिविल सर्जन उपेक्षा की भाषा में बोले—भारतीय वैद्य कुछ जानते नहीं। बात कुछ आगे बढ़ी, वहीं हस्पताल में एक रोगी उन्हें दिखाया गया। वैद्य जी ने अपने नियमानुसार रोगी की केवल आंखें देख रोग समझ लिया। सिविल सर्जन महोदय ने पूछा कहो वैद्य जी। क्या है इसे ? वैद्य जी बोले--हमने तो जान लिया जो रोग है, आपके मत में क्या है ? सिविल सर्जन साहब बोले—इसे पथरी है। अब इसका आपरेशन होना है। वैद्य जी ने जोरदार शब्दों में खंडन किया, इसे पथरी नहीं है।

ज्यों ही इसका ऑपरेशन होगा, रोगी मर जाएगा। उधर सिविल

सर्जन महोदय को अपने परीक्षणों के परिणाम-स्वरूप यह दृढ़ निश्चय था कि इसे पथरी ही है। बात ने जोर पकड़ा, अपने बहुव्ययसाध्य हजारों रुपये वाली मशीनों द्वारा परीक्षण की रिपोर्ट से यही निश्चित रहा कि पथरी है। ऑपरेशन सरल एवं साध्य है। कोई भय की बात ही नहीं। उधर अनुभवी वैद्य महाराज भी दृढ़ हैं अपने किये हुये निदान पर। वह पथरी (अश्मरी) व मूत्रग्रन्थि के सूक्ष्म भेद को ठीक समझे बैठे हैं कि मूत्रग्रन्थि को भ्रम से पथरी समझा जा रहा है। मूत्रग्रन्थि का ऑपरेशन निश्चित ही प्राणघातक होगा यह उन्हें विश्वास है। बस फिर क्या था। वैद्यजी सिविल सर्जन महोदय से बोले—आप लिख दें—यदि रोगी की ऑपरेशन से मृत्यु हो गई तो मैं उचित दंड का भागी होऊंगा। सिविल सर्जन ने तपाक से लिख दिया। ऑपरेशन हुआ। रोगी की मृत्यु हो गई। वैद्य जी ने कहा तुम पर केस चलाया जायेगा। अब तो सिविल सर्जन साहब बहादुर बहुत छटपटाए, लगे हाथ-पांव मारने। महाराज पटियाला से अनुनय-विनय करने लगे—मेरी रक्षा करें। तब वैद्यजी ने अपने उदार हृदय से कहा—अपने हाथ से लिख दो:—भारतीय चिकित्सकों को रोगी के सम्बन्ध में जो ज्ञान है, वह पाश्चात्य चिकित्सकों को नहीं है।

अंग्रेज सिविल सर्जन ने सहर्ष झट से लिख अपनी जान बचाई। छुटकारा पाया, अहंकार गर्व गंवाया, माना कि वैद्य जी ने केवल आंख देख कर जो निदान किया वह हमारी बड़ी-बड़ी मशीन भी न कर पाईं।

उन्हीं वैद्य जी के सम्बन्ध में एक अन्य सुन्दर संस्मरण है—महाराज का प्यारा घोड़ा बीमार हो गया। यों तो वह खाता, पीता, लीद भी करता है पर हर समय सिर हिलाता रहता है।

पशु-चिकित्सालय का ऐलोपेथी इलाज चल रहा है। तीन दिन हो गए पर सिर हिलाना बन्द न हुआ। राजा साहब जब सैर करने

चले, वैद्यजी भी बग्घी में साथ थे। राजा साहब हंसते हुए वैद्य जी से बोले, "वैद्यजी आप मनुष्यों की आँखें देखकर रोग बता देते हैं हमारे घोड़े की भी आँखें देखकर बताएं क्या रोग है ? तब मैं आपकी विशेषता मानूं।" वैद्यजी को घुड़शाला में ले जाया गया। देखा घोड़ा खड़ा-२ सिर हिला रहा है।

वैद्यजी समझ गए। साइस को कहा—बुचका पानी का भर कर बाँध दो। हम जा रहे हैं। जब सिर हिलाना बन्द कर दे, तब उसे खोलकर टाँग देना। हम आकर देख लेंगे। यह कह कर राजा साहब व वैद्यजी सैर को चल दिये। वापिस आकर देखा तो घोड़ा शान्त खड़ा था, सिर हिलाना बन्द। वैद्य ने तोबरा (बुचका) मंगाकर देखा तो उसमें बालिश्त लंबी जोंक देखी। साईस से पूछा—यह बताओ जिस दिन से यह सिर हिलाने लगा, उस दिन कहीं बाहर के तालाब पर पानी पिलाया था ? उत्तर में साईस ने कहा—हां, जब महाराज साहब शिकार खेलने गये थे, तब जंगली तलैया का पानी पिलाया था। वैद्यजी ने महाराज साहब को जोंक दिखाकर कहा—यह घोड़े का रोग था, जोंक भीतर चिपक गई थी। अब पानी में डूबने से वह ढीली पड़ गई और बाहर आ गई। यह था भारतीय योग्य वैद्य का अन्तर्दर्शन रोगनिदान का।

नागपुर के समीप तुमसर जि० भंडारा में

आज से बारह वर्ष पूर्व की बात है एक साधक कोटि के एकांत-सेवी व्यक्ति को ज्वर आया। साथ में खांसी भी हो रही थी। यह दशा केवल एक सप्ताह से चल रही थी। इसी बीच हस्पताल के डॉक्टर साहब आए, इलाज शुरु हुआ। दो दिन बाद बोले—शहर में आएं, आप के शरीर का परीक्षण करना है। एक्सरे लिया, छाती का स्क्रीनिंग (Screening) किया और बोले कि छाती में कुछ खराश है। हस्पताल में भर्ती होकर विधिवत् इलाज कराना होगा। अपने

इलाज के प्रभाव के सम्बन्ध में यह भी आकर्षक बात कही गई कि एक मास में आठ पौंड वजन बढ़ा देंगे। यह बड़ा लोभ था इतना वजन बढ़ जाने का। टी० बी० मान चिकित्सा चलाई गई। सेठ जी व अन्य परिचितों को बताया गया सैकण्ड स्टेज टी० बी० है। आठ दिन के ज्वर व खांसी में दूसरे दर्जे की टी० बी० घोषित की वहां के दो प्रसिद्ध डाक्टरों ने।

ज्यों २ चिकित्सा चली, निद्रा समाप्त होती गई। डॉ० महोदय से कहा गया—नींद नहीं आ रही। तो वह बोले—चिंता के कारण। उन्हें समझाया 'चिंता कुछ नहीं, आप अपनी चिकित्सा को देखें, कुछ गलत तो नहीं हो रहा।' बोले, 'चिकित्सा ठीक चल रही है।' पन्द्रह दिन पहुंचते २ निद्रा का नाम भी नहीं, चौबीस घंटा बीत गए। चिकित्सा बन्द कर दी गई। सब ने राय दी, ठीक से परीक्षण होना चाहिए। इतनी जल्दी कैसे टी० बी० बनी और वह भी सैकण्ड स्टेज में। नागपुर में पहुंचे वैद्य जी आए, नाड़ी पर हाथ रखते ही बोले—टी० बी० का कोई लक्षण ही नहीं। मैं केवल संतोष के लिए नहीं कह रहा, वस्तु-स्थिति है। दूसरे वैद्य जी ने नाड़ी देखकर कहा, "केवल मात्र पित्ताशय की विकृति है, यह जो कुछ भी दीख रहा है।" नागपुर के प्रसिद्ध वैद्य श्री गोवर्धन जी छांगानी ने भी टी० बी० का विरोध कर अम्लपित्त का दोष बताया। तीनों वैद्यों ने पूर्ण विरोध किया। अब शेष रह गई मूर्धन्य डा० से परीक्षण की बात। वहां के डॉ० गुमाश्ता टी० बी० स्पैश्लिस्ट ने रक्त, पेशाब, थूक व एक्सरे ले रिपोर्ट दी। जब तक हमारी चारों की गणित न मिल जाए, तब तक टी० बी० कहना भूल है। रक्त, पेशाब, थूकादि सब में जर्म्स दीख पड़ें तब कहीं टी० बी० घोषित की जानी चाहिए। टी० बी० का कोई लक्षण नहीं। केवल इतना ही नहीं कि आज अब कोई नहीं, आज से पन्द्रह दिन पहले भी कोई नहीं था। ऐसा नहीं कि पन्द्रह दिन के इलाज से समाप्त हुआ, वह पहले भी न था। केवल रक्त में अम्लता है। छाती

में जो धब्बे दीख पड़े, जिससे उन्हें टी० बी० का भ्रम हुआ, वह केवल इसका द्योतक है कि किसी समय छाती की बीमारी हुई थी। अब करें मिलान। तीन पृथक् २ वैद्यों ने पृथक् २ समय पर केवल नाड़ी परीक्षा कर एक स्वर से टी० बी० के होने का विरोध किया, जब कि दो डॉक्टरों ने कीमती मशीनों द्वारा परीक्षण कर सर्वथा भ्रमात्मक टी० बी० का निर्णय दिया, वह भी सैकण्ड स्टेज का। आयुर्वेदिक प्राकृतिक उपचार कर बुखार खांसी आदि सारे लक्षण समाप्त हुए और वह आज भी स्वस्थ हैं।

आज जहाँ पाकिस्तान बना हुआ है, पश्चिम पंजाब में डेरा-गाजीखान में ऊधोदास नाम के हकीम रहते थे। अब से ४५ वर्ष पूर्व की बात लिख रहा हूँ। वह हकीम जी अपने ढंग के अनोखे थे। नौ बजे के बाद ही कहीं रोगियों के लिए द्वार खोलते थे। उनकी परीक्षा का ढंग था रोगी का मूत्र देखना। मूत्र बोतल में भर कर लोग ला कर बैठे रहते थे। उन्हें कहा जाता मूत्र गिरा कर दिखाओ। काफी दूर पर वह मूत्र गिराया जाता, जिसे हकीम साहब देखकर रोग की पहचान करते।

उतनी दूर से पेशाब गिरते देख रोग समझना व उपचार करना एक आश्चर्यकारक बात थी। उनकी चर्चा चहुँ ओर फैल रही थी। किसी प्रसंग-वश राय साहब त्रिलोकचन्द जी ने तत्कालीन अंग्रेज डिप्टी कमिश्नर से चर्चा की। उन्होंने कहा यह झूठ है, ऐसे कैसे हो सकता है। परीक्षार्थ एक व्यक्ति बैल का पेशाब ले गया, जिसे देख वैद्य जी ने कहा, जिसका यह पेशाब है बस उसे तो केवल खल व चारा चाहिए। अजीब थी उनकी परीक्षा पद्धति व इलाज।

हकीम, वैद्य प्रायः मूत्र परीक्षा के विशेषज्ञ हुआ करते थे। पेशाब में तेल डाल तथा अन्यान्य प्रकार से परीक्षा किया करते थे। आज भी करते हैं।

अभी-अभी मेरी देखी बात है जि० लुधियाना (पंजाब) में साने-वाल कस्बे में महंत मनसा दास जी महाराज थे। अनेक रोगों का सफल उपचार करते थे। माता (चेचक) के सम्बन्ध में भी उन की ख्याति थी, लोग बोतलों में पानी भर कर लाते थे। वह संत जी पानी मन्त्रित कर देते, ले जा कर रोगी को पिलाया जाता। इस प्रकार लाभ उठाते। ज्यों ही कोई आदमी बोतल लेकर प्रवेश करता त्यों ही बोल उठते—जाओ बाबा जाओ, उस माता नहीं है। किसी डॉ० हकीम का इलाज कराओ। अन्यथा चुपचाप बैठे रहते और पानी मंत्रित कर देते। उन्हें यह पता चल जाता था कि उस रोगी को माता है भी या नहीं। यह बात तो मैं कुछ आगे की कह गया। चिकित्सा विज्ञान की ही वह बात नहीं है। यह तो एक आध्यात्मिक स्तर व सिद्धि की बात है। पर तथ्य है, आज भी भारत में ऐसे व्यक्ति हर दिशा में दीखते हैं जो एक विशेष ज्ञान रखते हैं।

उज्जैन (मालवा) में अध्यात्म मंडल के संस्थापक, कल्पवृक्ष के सम्पादक श्रद्धेय मालव-सन्त दुर्गा शंकर नागर के अत्यन्त निकट रह-कर मैंने अनेक चमत्कार देखे। किस प्रकार वह जीवन से निराश, दीन हीन अवस्था को प्राप्त, जीर्ण-शीर्ण रोगी में नव चेतना भर देते थे और वह झट से स्वस्थ हो जाता। इस प्रकार अध्यात्म स्तर के अनेक व्यक्तियों के विभिन्न संस्मरण दिये जा सकते हैं जो अनावश्यक हैं। इन सारे संस्मरणों का सार यह है कि हमारे यहां चिकित्सा का कार्य अत्यन्त पुनीत माना जाता था। चिकित्सक समझता था कि मैं प्राण-दाता परमेश्वर का ही प्रतिनिधि बनकर चिकित्सा करने जा रहा हूँ। प्राण-प्रवाह में आये हुये अवरोध को मैंने चिकित्सा विज्ञान के सहारे प्रभु की दिव्य शक्ति को प्राप्त कर दूर करना है। स्वयं को वह एक माध्यम मानता था, रोगी व परमेश्वर में। प्रभु देव शक्ति व प्रेरणा देंगे। उनकी दी गई सूझ-बूझ का सदुपयोग करूंगा रोगी के कष्ट निवारण में। परमेश्वर की भूः प्राणदातृत्व शक्ति एवं भुवः दुःखनाशक

शक्ति का एक साथ अपने द्वारा रोगी पर प्रयोग करता। दया, सहानुभूति, सद्भावना, प्रेम, सरलतादि गुणों के अनुपात से चिकित्सक उतना ही सफल माना जाता था। उधर रोगी समूह उपकृत हो, कृतज्ञ बन अपने प्राणदाता, दुःखनाशक चिकित्सक महोदय की तन-मन-धन से अधिक समय पर्यन्त किंवा जीवन भर सेवा करता।

युग ने पलटा खाया, चिकित्सक ने भी अन्य व्यापारों की भाँति इसे एक सफल व्यापार मान अपनाया। हृदय का गुण गंवाया, पर धन कमाया। अपना सम्बन्ध फीस से ही जोड़ लिया। रोगी का हित दूर हो गया।

ऐसी दशा को देखकर ही किसी कवि ने लिखा—

वैद्यराज नमस्तुभ्यं यमराज सहोदरं।
यमस्तु हरति प्राणान्, वैद्यः प्राणान् धनानि च।

ऐ चिकित्सक तुम्हें नमः हो, आप यमराम के सगे भाई हैं। यम (मृत्युदेव) तो केवल प्राण ही लेते हैं पर आप तो प्राण एवं धन दोनों के ग्राहक बन जाते हैं। अस्तु, व्यापारिक रूप से यह पुनीत कर्म चल पड़ा।

"एलोपैथी-विज्ञान भारतीय आयुर्वेद-विज्ञान से पीछे है"

सन् १९५३ की बात है। मथुरा में मैं डिस्ट्रिक्ट इन्जीनियर था, आयु ४७ वर्ष की थी, नियमित व्यायाम, सूर्य नमस्कारादि करता था। मेरे दाए पैर के अंगूठे में बड़ी तेज जलन होने लगी, जिसके लिए वहाँ के प्रसिद्ध सिविल सर्जन की दवा १ मास तक खाई, पर कोई लाभ न हुआ। एक दिन मेरे मित्र कुंवर करनसिंह, जो वृन्दावन विद्यालय के प्रेसिडेन्ट थे, आए। मेरा कष्ट सुन आग्रहपूर्वक मुझे अपने विद्यालय के आयुर्वेदाचार्य जी के पास ले गए। मैं दवा खा खा कर तंग आ गया था, दवा के नाम से ही मुझे चिढ़ होने लगी। वैद्य जी से मैंने निवेदन किया कि मैं किसी दवा के सेवन करने में असमर्थ हूँ। उन्होंने उसे स्वीकार कर गले के दोनों ओर (घेंटी के अगल बगल)

दो गांठों को दबाकर बताया। मैंने दो दिन वैसा किया और पैर के अंगूठे का दर्द गायब हो गया। आज इसे चौदह वर्ष हो गए हैं, दोबारा आवश्यकता नहीं पड़ी। मेरे लिए यह अद्वितीय घटना थी।

इसी प्रकार मैंने जुकाम के लिए प्रार्थना की कि बड़ा कष्ट रहता है। उसकी विधि उन्होंने यों बतायी—सूखा गोला ले, उसमें काली मिर्च भर दो। ऊपर आटे से चहुं ओर वेष्टित करो (आटा जौ का हो)। कुछ सूखने पर शुद्ध घी में रख कर आग पर चढ़ाएं। डेढ़ घंटे तक मध्यम आग पर पकने दें। जब आटा बादामी रंग का हो जाए, उतार कर आटा पृथक कर दें। गोला, काली मिर्चों को पीसते जाएं, देसी खांड मिलाते जाएं। इस प्रकार कोई तीन किलो खांड उसमें मिल जाएगी। बस प्रतिदिन दो तोला से तीन तोला तक खांड दूध के संग लेते चलें। ठीक वैसा करने से देहरादून जैसे स्थानों में रहने पर भी कभी जुकाम नहीं हुआ।

ऐसी अनेक बातों को देख मेरी धारणा बनी—

"ऐलोपैथी-विज्ञान भारतीय आयुर्वेद-विज्ञान से पीछे है"

मैं हृदय से उन आयुर्वेदाचार्य के प्रति कृतज्ञ हूं। वैद्य जी ने गांठ दबाने का रहस्य बताया। बोले, "सिर से एक प्रकार का सीरम द्रव पदार्थ नीचे की ओर जाता है, गले की गांठें उसमें अवरोधक हो रही हैं, जिस कारण अंगूठे में दर्द है। दो दिन गांठें दबाने से जीवन भर के लिए मानो वह रोग मिट गया। क्या था वैद्य जी का सूक्ष्म ज्ञान।

भवदीय—ओम प्रकाश (र० इन्जीनियर)
पुल बेगम, मेरठ (उ० प्र०)

———

निद्रा-नाश, पीठ, कमर, पिंडलियों की भयंकर वेदना से मुक्ति

मेरठ निवासी मास्टर सुन्दरलाल जी जनता के सच्चेसेवक, कुशाग्र-बुद्धि, सात्विक प्रकृति के कर्मठ कार्यकर्ता हैं। जन हितैषी होने के कारण ही जनप्रिय कोटि के व्यक्ति हैं। समय-समय पर नगर कांग्रेस कमेटी के मन्त्री, हरिजन सेवा संघ तथा अन्यान्य संस्थाओं के मंत्री रहे ।

शांत स्वभाव, सत्वगुण प्रधान संयम की मूर्ति हैं। (लेखक)

सन् १९५८ से ६२ तक सर्वोदय प्रचार व भूदान यज्ञ के कार्य से महाराष्ट्र गुजरात बिहार आदि अनेक प्रांतों में भ्रमण का अवसर आया।

आहार में चावल को कब्जकारक मान उससे बचता हुआ डबल रोटी बिस्कुट चाय काफी आदि का सेवन करता रहा। परिणाम स्वरूप जब ६२ में मेरठ आया तो भयंकर सिरदर्द का प्रकोप हुआ।

रोटी छोड़ चाय अनासीन सैरीडान काफी अधिक लेने लगा। मित्र डा० ने कहा ब्लड प्रेशर है, पाखाना टैस्ट कराओ।

सिविल सर्जन ने २२ दिन में ही रोगमुक्त कर देने का आश्वासन दे इलाज आरम्भ किया। इसी बीच वह स्वयं अपने इलाज के लिए विदेश चले गए। १५ दिन के ही आश्वासन पर आयुर्वेद इलाज भी शुरू किया पर कोई लाभ नहीं हुआ। ३ मास तक होम्योपैथी भी चलाया।

५ अगस्त को स्वामी जी गाँधी आश्रम आए। परिचयानंतर २५ दिन प्राकृतिक उपचार व आहार से लाभ होता न देख उपवास आरंभ

किया। १५ वें दिन से जमा मल आंव के रूप में निकलने लगा। २२ वें दिन गुलाब के फूल, मुनक्का, तुलसी पत्तों के रस से यज्ञानंतर उपवास समाप्त किया। रसाहार फलाहार दही कल्प पर महीनों बिता २२ दिसम्बर को रोटी ली। रसाहार में भी ३-३ मील की पद यात्रा की। उपवास काल में सभाओं में भाषण दिए। चिरकाल तक सभा में बैठ सका जबकि पूर्व इसके आध घंटा बैठना भी कठिन था।

मैं मानता हूँ इस पद्धति से बीमार होने के कारण तथा उनके निवारण का प्रकार मनुष्य सहज में सीख अपने को स्वस्थ रख सकता है।

सुन्दर लाल (मास्टर) मेरठ

"गठिया से पंगु २१वें दिन ठीक"

वर्षों से पंगु हुआ जमीन से सरक सरक कर चलने वाला मोतीराम नामक पाकिस्तान से आया शरणार्थी बालक तुमसर (जि० भंडारा-महाराष्ट्र) में राय ब. श्रीराम दुर्गा प्रसाद जी द्वारा चलाए गए आरोग्यदान यज्ञ शिविर में इक्कीसवें दिन एक टाग के सहारे चलने लगा। ठीक २१.वां दिन था कि वह एक टांग से सीधा खड़ा हो गया, लाठी के सहारे उस टांग के बल चलकर दिखाया। उसकी विधवा माता तथा हम सबको अति प्रसन्नता हुई।

उपचार क्रम–विशेष किसी उपचार का तो स्मरण नहीं हो रहा। जैसा शिविर में कार्य-क्रम चल रहा था वही उसके लिये भी था। मिट्टी की पट्टी, एनिमा, टांगों घुटनों को भाप मिट्टी का पलस्तर। गर्म ठण्डा सेंक घुटनों का। पीली बोतल या गहरी नीली बोतल में सूर्य रश्मि तप्त तेल की मालिश। मुनक्का, अन्जीर, नींबू का नाश्ता। आहार में मुख्य रूप से फल सब्जियां। इन सारे उपचारों में विशेष महत्व का स्थान था श्री भीमा जी अंबुले द्वारा अत्यन्त प्रेम व भावना से टांग की मालिश व उत्साह भरे शब्दों में आशा का संचार।

गठिया से जकड़ी खाट पर पड़ी माता स्वस्थ

श्री कृष्णचन्द्र जी चोपड़ा की माताजी (हरी मस्जिद समीप पहाड़ गंज, दिल्ली) गठिया से बुरी तरह जकड़ गई थीं। अंग-अंग दुखता था। इरविन हस्पताल जाने को तैयार थीं, भीगी पट्टियों के लपेट ने बड़ा चमत्कार दिखाया। रात को सुख से नींद ली। फिर विधिवत् उपचार कराया। प्रा० चि० की अन्य सारी विधियों के साथ गोरखमुंडी अर्क जैसी वस्तु का भी सेवन कराया गया शीघ्र रक्त शुद्धि की दृष्टि से। बस फिर क्या था धीरे-धीरे अंग खुलने लगे। एक समय आया खूब स्वस्थ हो बाजार में जाने आने लगीं।

गठिया के लक्षण :—रोग का आरम्भ जब होता है तो ज्वर के साथ ही साथ जोड़ों में दर्द व फूलना आरम्भ हो जाता है। चलना-फिरना कठिन हो जाता है। करवट लेने में भी कष्ट का अनुभव करता है। पैरों में विशेष कष्ट होता है, दुर्गन्ध युक्त पसीना आना, प्यास लगना, सिरदर्द, कंपकंपी होकर बुखार आना वह भी १०४-१०५ डिग्री तक का हो जाता है। दो तीन सप्ताह के अनन्तर आराम आने लग जाता है। आगे चल बुखार व दर्द दोनों हट जाते हैं। जोड़ों पर सूजन अधिक बनी रहती है। रोग के प्रारम्भिक आक्रमण में प्रायः ऐसा होता है रात के पिछले प्रहर में दाएं पैर के अंगूठे में दर्द होता है, नींद टूट जाती है। जोड़ फूले हुए गर्म व लाल लाल होते हैं, कहीं भी हाथ लगाने मात्र से व्यथा होती है। उस समय जीभ मैल से पूर्ण होती है। पेशाब लाल गंदला होता है, रोगी में स्नायविक उत्तेजना होती है। धैर्यहीनता, अस्थिरता एवं क्रोधी स्वभाव वन जाता है।

गठिया के निम्न कारण - पानी में भीग जाना, गीले वस्त्र पहनना, ठण्डा शर्बत आदि ठण्डी वस्तुओं का प्रयोग होनें से।

गठिया का उपादान कारण—प्राकृतिक चिकित्सा की संक्षिप्त भाषा में कहूं तो एक वाक्य—में शरीर में पड़ा विजातीय द्रव्य। पर इतने से सन्तोष नहीं होता। कुछ अधिक छान-बीन या व्याख्या की

अपेक्षा होती है तब विभिन्न कारण उस विजातीय द्रव्य के कहे जाते हैं।

१–पुरानी चली आ रही कब्ज।

२–विभिन्न रोगों के विष :— पायरिया, सुजाक, टी० बी०, पुराना टांसिल, प्रदाह आदि।

३–विभिन्न जीवाणुओं के आक्रमण के फलस्वरूप सन्धियों में सूजन आना।

४–यूरिक एसिड।

हमारे भोजन में जब प्रोटीन जातीय पदार्थ अधिक होते हैं तब यूरिक एसिड अधिक मात्रा में उत्पन्न होता है। उत्पन्न हुआ तो क्या ? वहीं दग्ध होने की भी प्रक्रिया चलती रहती है पर जब शरीर दोष युक्त होने से दग्ध करने में समर्थ नहीं होता तब वह विकार न दग्ध हो पाया न बाहर निकला, वही गठिया का उपादान कारण हुआ।

गठिया के सूक्ष्म भेद—चूंकि शरीर के भीतर मांस पेशी के छोटे जोड़ तथा हड्डी व उनके जोड़ हैं, इसलिए वह विजातीय द्रव्य जिस जिस को प्रभावित कर रहा होता है वह उस अपने पृथक सूक्ष्म नाम से पुकारा जाता है। सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त होकर ज्वर संयुक्त होता है तब तरुण गठिया। मांस पेशियों को आक्रांत करते हुए पेशी-वात का नाम लेता है। छोटे-छोटे जोड़ों को प्रभावित करते हुए ग्रंथिवात तथा हड्डियों पर आक्रमण कर बिगड़ता है तब अस्थिजरा। इसी प्रकार हड्डी के जोड़ जब आक्रान्त होते हैं तब संधिवात गठिया (GOUT) कहते हैं।

उपचार क्रम :—सर्वप्रथम रोगी को एनिमा देकर पेट साफ कर लेना चाहिये। तत्पश्चात् उष्णपादस्नान लेकर शरीर के गर्म रहते ही सारे शरीर को भीगी चादर का लपेट दिया जाय। उस लपेट में तीन चार बोतलों में गर्म पानी भर कर रखें ताकि अच्छा पसीना खुल कर

आ जाए। इस प्रकार का पसीना रोगी के भीतर के विष को निकालने में बड़ा सहायक होता है। तुरन्त बुखार पर प्रभाव पड़ता है। पुस्तक में अन्यत्र दिये गये एनिमा चार्ट के अनुसार प्रतिदिन एनिमा दे पेट साफ कर लेना चाहिये। सबल रोगी को दो दिन या एक दिन के अन्तर से गीली चादर का लपेट दें। निर्बल को सारे शरीर का लपेट न देकर आधे धड़ का ही दें। आगे चल किसी दिन भीगी चादर का लपेट, किसी दिन सारे शरीर का वाष्प स्नान, किसी दिन उष्णपादस्नान का प्रयोग करें। दूसरे समय केवल आक्रांत भाग को भाप दें। भाप देते समय हर पांच मिनट के बाद ठन्डे पानी से पोंछते जाएं। सारे शरीर को जिस दिन भाप दें छः सात मिनट पर्याप्त हैं। उष्णपाद स्नान बीस मिनट तक स्थानीय भाप १५ मिनट पर्याप्त है। ऐसे रोगी को सूखे स्नान, हवा व प्रकाशमय स्थान में रखा जाना चाहिये, नमी वाले प्रदेश में नहीं। रोग की उग्र दशा हटते ही चलने फिरने का प्रयास ठीक नहीं। पर्याप्त विश्राम करना भी एक मुख्य चिकित्सा है। प्रथम श्रेणी का लाभप्रद उपचार यह होगा कि रोगी को उपवास ही करवा दिया जाए। उपवास में नेति वमन करवाने से शीघ्र ही विष निकलने से लाभ होगा। प्रायः ऐसे कठिन रोगियों में देखा कि प्रा० चि० के अन्य सारे प्रयोग किये गये उतना लाभ नहीं हुआ, ज्यों ही उपवास करवाया रोगी ने लाभ बताना शुरू किया। उपवास में बड़ी तेजी से विकार निकलने व पचने लगते हैं। उपवास करने के बाद अथवा उपवास न किया जाये तो उन दिनों प्रतिदिन नींबू रस पानी में मिला खूब पीना चाहिये। गर्म पानी में नींबू रस मिला दिन भर में पांच छः नींबू पी जाना विशेष हितकर है। दूध को नींबू से फाड़ कर दूध का पानी, सब्जियों को पका कर उसका जूस। रात को मुनक्का अजीर खुरमानी भिगो कर रखी हों, प्रातः उस पानी में नींबू रस मिला पी लें ऊपर से सब चीजें खा लें अथवा सब को मसलकर छान पानी बना पिएं। बीस पच्चीस मुनक्का दो तीन

अंजीर व तीन चार खुरमानी को धो लगभग पाव भर पानी में भिगोना चाहिये। अंगूर किशमिश हितकर हैं। टमाटर सेव जैसे फलों का सेवन किया जाना चाहिये। मुख्य बात है ऐसा रोग कैल्शियम व फास्फोरस की न्यूनता से होता है। अम्ल प्रधान खाद्य होने पर ये दोनों शरीर में टिक नहीं पाते। क्षारीय भोजन से शरीर में ये टिके रहते हैं। अतः फल सब्जी मधु आदि का आहार मुख्य है। रोटी भात आगे चलकर अच्छे होने पर लेने चाहिये। प्रतिदिन धूप में बैठ यथेच्छ धूप का सेवन होना चाहिये जिससे विटामिन डी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो सके।

मांस पेशियों की चिकित्सा :— जब विषों का प्रभाव ग्रीवा की माँस पेशी अथवा कमर या पार्श्व की माँस पेशी पर होता है तब पेशीवात के रूप में पीड़ित करता है। उस समय भी पेट को शुद्ध कर उन पेशियों पर गर्म ठण्डा सेक करना चाहिये। गर्म ठण्डा देने के बाद पट्टी का लपेट देना चाहिये। दिन में हर दो तीन घंटे पर करने से शीघ्र लाभ होता है।

गठिया के अन्य प्रयोग : —ऊपर आहारादि के सम्बन्ध में सम्यक् वर्णन किया गया वैसा शोधक आहार या पूर्ण उपवास किंवा सब्जियों का प्रयोग करते हुए यदि अन्य प्रयोग करने में असमर्थता या झंझट अथवा कोई संकोच हो तो निम्न प्रयोग दिए जा रहे हैं : —

पीड़ित स्थान पर, मेथी का चूर्ण १ किलो, हल्दी ५० ग्राम, बछिया का मूत्र मिला आग पर पका लेप करें, धूप में बैठें या धूप के अभाव में आग से सेंक करें दिन में दो बार।

निदान में यह बताया गया है अनेक रोगों के विष इसमें कारण होते हैं। आतशक सुजाक आदि भयंकर विषों को दूर करने के लिये चोप चीनी एक तोला लें, पानी में पका काढ़ा भी पीना हितकर होगा। इसी प्रकार 'उसवा' का काढ़ा भी अत्यन्त हितकर है। ऐसे ही नीम, गिलो तथा गोरख मुण्डी जैसी चीजों के स्वरस अथवा काढ़ा या

अर्क बना कर पीना विशेष हितकर है। चार सेर गर्म जल में एक पाव कपड़े धोने वाला सोडा मिला कर दर्द वाले स्थान जोड़ आदि को धोना। धोने का प्रकार यह होगा कि उस पानी में कपड़ा भिगो पीड़ित स्थान पर रखा जाए। ऊपर से गर्म जल की धारा डाली जाए। ऐसा रोगी घी जैसी स्निग्ध वस्तु का अधिक सेवन न करे।

'दो घन्टे में लकवे का उपचार'

वैदिक साधनाश्रम, तपोवन (देहरादून) का साधना शिविर जो कि ३१ मार्च से २८ अप्रैल १९६८ में हो रहा था उसमें मैं गया और वहां के यज्ञ के मुख्य संचालक या मुख्य अधिष्ठाता स्वामी आनन्द भिक्षु जी महाराज के कमरे (कक्ष) में ही ठहरा हुआ था।

दि० २४ अप्रैल को लगभग १२ बजे दोपहर में स्वामी जी के अनन्यभक्त ज्ञानभिक्षु जी वानप्रस्थी (रिटायर्ड एस० डी० ओ०) कमरे में आये, कुछ बातें कर ही रहे थे कि देखते-२ उनकी जीभ लड़खड़ाने लगी, बोलना बन्द हो गया। दायां हाथ भी शून्य क्रियाहीन ढीला हो गया।

आनन्द भिक्षु जी महाराज अपने बिछौने पर लिटा कर उनके अंगों को दबाने लगे। यह सूचना आग की भाँति बड़ी तेजी से सारे आश्रम में फैल गई। चहुँ ओर से दर्शक भागे आये, जो भी सहानुभूति प्रकट करने आया यही राय देने लगा बस विलम्ब न करो, किसी कार या टैक्सी द्वारा फौरन शहर अस्पताल में पहुँचाया जाये।

एक सज्जन बोले टैक्सी मंगा इन्हें सोनीपत अपने घर लड़कों के पास पहुंचाया जाए। उनकी धर्मपत्नी व अन्य हितैषीजन किंकर्तव्य-विमूढ़ हो रहे थे क्या करना ठीक होगा ? इसी बीच आश्रम के वैद्य जी आनन्दभिक्षु जी महाराज को लेकर महात्मा जगदीश्वरानन्द जी (प्राकृतिक चिकित्सक) के कमरे में पहुँचे और बोले, स्वामी जी जल्दी आइये, एक वानप्रस्थी जी को लकवा हो गया है।

महात्मा जगदीश्वरानन्द जी ने आकर देखा बोल नहीं सकते, हाथ भी नहीं उठा सकते। थोड़ा पेट को देखा और कपड़ा भिगोकर पेट व गले पर रखा। इतना करने से ही चेष्टा अच्छी जान पड़ी।

"लकवा या पक्षाघात"

लकवा का स्वरूप :—लकवा दो प्रकार का होता है किसी स्थान विशेष का या सारे शरीर का, सर्वांग। मुख का आधा भाग, कमर, मूत्राशय, टाँग, बाहु, नाक, आँख, कान आदि एक एक किसी भाग का या एक साथ सारे अंग प्रभावित होते हैं। उस अंग में स्पर्श ज्ञान ही नहीं रह जाता अथवा अत्यल्प। जब इसका दौरा होता है तो उस आक्रांत अंग से मनुष्य कुछ काम ही नहीं ले पाता। जब कभी पहले आक्रमण होता है तो सहसा ही रोगी मूर्छित हो जाता है। वैसी मूर्छा घण्टों चलती है। बोलने की शक्ति मारी जाती है, चुपचाप पड़ा करा-हता है। पाँच दिन से बारह दिन पर्यन्त इसकी अशक्ति बनी रहती है। फिर कुछ शक्ति का संचार होने लगता है।

लकवा के कारण:—शरीर के प्रत्येक यन्त्र व अंग स्नायु द्वारा संचालित होते हैं, जब किसी कारण से किसी विशेष-२ अंग में स्नाय-विक प्रवाह नहीं पहुँच पाता तभी वह अंग शक्तिहीन हो जाता है। दिमाग को ढाँकने वाली झिल्ली का प्रदाह, मेरुदण्ड की मज्जा का प्रदाह या सूख जाना, हिस्टीरिया, मूर्छा, मृगी आदि रोग जब बहुत समय तक चलते हैं। ब्लड प्रेशर (रक्तचाप) अधिक समय तक बना रहता है। पारा जैसी दवायें खाई गई होती हैं। देह में अत्यधिक विषाक्त द्रव्य के संचय होने से ही यह रोग होता है। शरीर की यह दूषित अवस्था ही स्नायुओं को निस्तेज कर देती है।

उपचार क्रम :—पेडू पर मिट्टी की पट्टी करवा आध घण्टे के बाद एनिमा प्रयोग एनिमा चार्ट में दिये क्रम के अनुसार। जल नेति, तेल नेति, वमन का प्रयोग कराएं। देखेंगे किस तेजी से मुंह नाक के

रास्ते बेहद ढेर बलगम कफ निकलेगी। उसके बाद शक्ति अनुसार पांच सात मिनट का पेड़ू नहान। पेड़ू नहान की स्थिति ना हो तो नाभि पर पड़े २ ही दस बारह लोटे पानी वहा पेड़ू को मल देना चाहिये। उसके बाद शरीर के गर्म हो जाने पर वही मुनक्का अंजीर खुरमानी आदि भीगी चीजों का नाश्ता नींबू रस मिला कर दें। उसके बाद धूप स्नान। आहार में सब्जियों के रस ही दिए जाएं। दूध को फाड़ कर उसका पानी मुनक्का मिला दिया जाना चाहिए। सप्ताह में एक बार सर्वांग गीली चादर का लपेट, प्रतिदिन पर्याप्त धूप स्नान कराया जाय, शरीर के गर्म रहते २ पैरों में गर्म पानी रख सिर पर ठण्डे तौलिये को रख पेड़ू नहान दिया जाना चाहिए। धूप स्नान ऐसे रोगियों के लिये अत्यन्त हितकर है। इतना तो अनेक वैज्ञानिक बिजलियों के प्रयोगों द्वारा लाभ नहीं होता जितना धूप स्नान द्वारा। कभी २ तीन मिनट से ६ मिनट की पूरी भाप। मेरुदण्ड पर गर्म-ठण्डा सेंक २० मिनट से ३० मिनट तक। यदि विशेष अंग आक्रांत हो तो गर्म सेंक करने के बाद ठण्डी पट्टी का लपेट करें, उसमें भी गर्म बोतल रखनी ठीक होगी—रोगी के सुन्न अंग को गर्म बनाए रखना चाहिये, गर्म कपड़े में लपेट कर गर्म रखा जा सकता है। गाजर का रस, खीरे का रस, नींबू रस मिला कर देना चाहिये। इन सब्जियों के कच्चे रस निकालने का सुन्दर प्रकार है। गेहूँ छानने वाली लोहे को छलनी लें, वह नीचे से खुरदरी होती है उस पर कस कर निचोड़ लें। आगे चल उपवास का विधिवत् प्रयोग कर पूर्ण लाभ की ओर लावें। क्रम से किया गया उपवास पुनः उसी क्रम से लौटा कर पूर्ण किया गया उपवास इस रोग को ठीक करने का सुन्दर साधन है।

लकवा में सूर्यरश्मि चिकित्सा—पीली बोतल में तैयार किये तिल तैल की रुग्ण अंगों पर मालिश। पीली व नीली बोतल का पीने को पानी देना हितकर है।

अन्य औषधि प्रयोग—एक पाव त्रिफला आठ गुणे पानी में भिगो

क्वाथ बना छान लिया जाए, उसमें एक छटांक अच्छा पीला गूगल कूट पोटली बना कढ़ाही में उसी क्वाथ में डाल पकने दें। जब हलुवे जैसा हो जाए तब रास्ना एक तोला डाल घी के सहारे मटर सम गोलियां बना ली जाएं। उन गोलियों को पीली बोतल में सूर्य-रश्मियों से प्रभावित कर लिया जाए। तीन चार गोली प्रतिदिन रोगी को पीली बोतल के जल से दी जानी चाहियें। पथ्य में सुपाच्य क्षारीय आहार मुख्य रूप से दिया जाए।

चिन्तन का एक प्रकार—इस प्रकार के रोग में प्रायः जन समाज की धारणा है कि यह एक वायु का रोग है। वायु का अर्थ किया जाता है ठन्डी वायु अर्थात् ठन्ड का रोग। ऐसा मान वे ठन्डे प्रयोगों, फलों एवं सब्जियों से भय खाते हैं। गर्म आहार मांस शोरवा अन्डा अन्य गर्म पदार्थ मांस में भी गर्म समझे जाने वाले मांस लेना पसन्द करते हैं। ऐसी धारणा कराने वाला चिकित्सक समाज है। वैद्य डा० स्वयं ऐसा माने बैठे हैं जबकि रोग के निदान में वे मानते हैं कि अनेक विषों के फलस्वरूप ऐसा रोग बनता है। हर रोगी व उसका अभि-भावक यह चिंतन कर देखें कि लकवा होने के पहले क्या वर्षों से उसका पेट विकृत न था? क्या उसे ब्लैड प्रेशर न था? क्या उसे अन्य विष किसी रूप में न मिल चुके थे? जब ऐसी बात स्पष्ट रूप से जीवन में दो चार वर्ष पूर्व देख रहे हैं तब न तो उसे यों ही **"सहसा प्रकृति या ईश्वर काप मान लें"** न **"उसे ठन्ड का रोग ही मान लें।"** यदि वायु का रोग आपने कहना ही है तो उसे गर्म वायु का रोग भी कह सकते हैं। पेडू की सड़ांद से उठने वाली गर्म गैस वायु को उसका कारण क्यों नहीं मानते? रोगों के आये विष क्या ठन्डे हैं जिन्हें कारण रूप में माना जाता है? यदि ठन्डे निमित्तों से रोग का आवि-र्भाव हुआ दीखता भी हैं तो केवल निमित्त ही हैं न कि मूल उपादान कारण। इतना समझ में आने पर **"खनिज लवणों एवं खाद्योज पूर्ण ताजी सब्जियां व फल हमारे रक्त शोधक लक्ष्य की पूर्ति में विशेष**

सहायक हैं।" उनके साथ फिर आप किसी प्रकार के महामाषादि तेल की मालिश करें अथवा अन्य वातघ्न तेलों का निर्माण कर उपयोग में लायें वे हमारे कार्य में सहायक होंगे। मुख्य रूप से ऐसे प्रयोग होने ही चाहियें जो उदर एवं रक्त के शोधक हों। प्रसंगवश मुझ वाराणसी के वैद्य विष्णु दत्त जी के कथन का स्मरण हो आया जो उन्होंने मिरजापुर के सेठ रोगी के संबंध में सुनाया था। वह खाट पर पड़ा था, खाने की रुचि भी न रही, मैंने उदर शुद्धि का सोचा। सभवतः वह दवा लेना भी पसन्द न करता होगा। साधु ब्राह्मणों का श्रद्धालु था। सेठ जी से कहा ब्राह्मण भोजन कराना है। अपने सामने बैठा सबको खिलायें। वैसा किया गया, सबको खाते देख उसे भी रुचि हुई। उसकी पूड़ियां जो बनाई गई उनमें कास्टर आयल (शुद्ध एरण्ड तेल) का मोन दे बनाया गया। उनके खाने से उदर शुद्धि हुई भूख लगी। रुचि बढ़ी और उस प्रकार की पूड़ी रोटी खाने म रस लेने लगे। इस प्रकार आगे चल वह स्वस्थ हो गये। एरण्ड तेल का युक्तिपूर्वक प्रयोग करके कैसा लाभ पहुँचाया।

ऐसे ही भाप या पसीने के प्रकार बड़े लाभकारी हैं। लक्ष्य हो उदर शुद्धि, रक्त शुद्धि, रक्तसंचारादि उसे ध्यान में रख वैसी शारीरिक क्रियाएं आहार व उपचार का चुनाव किया जाना चाहिये। मांस चर्बी आदि खाद्य तो स्वयं भारी व सूक्ष्म विषमय होते हैं।

"भयंकर आंव का रोग गया"

आज से ३० वर्ष पूर्व की बात है पाकिस्तान बने पश्चिम पंजाब में जिला झंग के रोड़ू सुल्तान नामक गाँव में संस्कृत विद्यालय मे बैठा पढ़ा रहा था कि ऊंट पर चढ़ा हुआ एक रोगी आया। (तब ऊंट ही वहां की मुख्य सवारी थी) सब विद्यार्थी उत्सुकता से उसके चहुँ ओर हो गये। उसने संक्षेप मे दशा बताई, दिन मे चार बार (शौच) टट्टी

जाता हूँ केवल सफेद आंव ही आती है। टट्टी के साथ ही पेशाब होता है अलग से कभी पेशाब नहीं होता। देहातों के छोटे बड़े हकीमों के इलाज तो किये ही हैं। जिला के मुख्य सरकारी हस्पताल में भी महीनों रहा पर कुछ लाभ नहीं हुआ, शरीर सूख कर काँटा हो गया।

दोपहर में जब मैं विश्राम कर रहा था तो रोने की आवाज आई आकर पूछा तो बोला हाथ पाँव में बेहद जलन हो रही है। तुरन्त हाथ पाँव पर गीली ठंडी मिट्टी लगाई गई उससे शांति मिली, बार-बार मिट्टी बदलने के लिये कहा गया।

साथ ही सुझाव दिया देहात से लस्सी लाकर केवल वही पिलाओ एक दो दिन में ही रोगी को आराम अनुभव होने लगा। उसे लस्सी कल्प करने की राय देकर विदा किया। घर जाकर उसने गो दूध की दही जमा लस्सी (मट्ठा) बना उसी पर २१ दिन पूरे किये। प्रातः पेडू पर मिट्टी की पट्टी लगाता दिन भर लस्सी पीता इतने ही प्रयोग से उसका भयंकर आँव का रोग हट गया और स्वस्थ हो अन्नादि का आहार कर सबल हो गया और वर्षों जिया। आस-पास के देहातों में उसके कारण बड़ी ख्याति फैल गई कि गोविंदलाल जो मरणासन्न हो रहा था और अनेक इलाज कर हार चुका था वह इस प्रकार ठीक हो गया।

रोग का कारण व स्वरूप—हम जो आहार लेते हैं ठोस भोजन के रूप में अथवा दूध मट्ठा फल रसादि तरल पदार्थों के रूप में। जब वे ठीक से पच जाते हैं तभी शरीर पोषण के लिये विकार रहित रस व रक्त बनते हैं। शेष बचा या अपचा भाग शरीर के बाहर निकल जाता है। जब वह विकार शरीर से बाहर नहीं निकल पाता या यों कहें शरीर उसे निकालने में समर्थ नहीं होता तो वह विकृत भीतर ही सड़ने लगता है। रक्त को विकृत करना, आंतों में गैस पैदा करना अन्य अनेक कुलक्षण दिखाई देते हैं।

शरीर का पोषण तथा विकारों का बाहर निकल जाना उचित खान पान से होता है। जब हम भारी (गरिष्ठ) भोजन करते हैं, क्योंकि अधिकारी बनकर नहीं खाते, "आसक्ति गई नहीं शक्ति रही नहीं" इस सूत्र के अनुसार हमारे पाचक यन्त्र यकृत, आमाशय, छोटी आँत, ये सब कमजोर व विकृत हो जाते हैं तभी इस प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। आंव के रोग के पीछे भी यकृत की खराबी होती है उधर आँत विकृत हो जाती है। आँतों के ऊपर कफ की पतली झिल्ली होती है उससे रस चूता है जिससे भोजन पचता है। आंत की रस चोषण शक्ति जब मन्द पड़ जाती है, उधर यकृत आमाशय को पाचक रस पर्याप्त नहीं मिल पाते तब आहार ठीक से न पच (आम) कच्चा रह जाता है जिसकी शक्ल चिकनी कफ की होती है।

ऐसी दशा में भूख कम लगती है, जीभ पर सफेद मल जमा रहता है। प्रातः उठते ही दर्पण में जीभ देखने से अन्दर की झांकी दीख पड़ती है। तब पेट में दर्द होकर टट्टी आना यह मुख्य लक्षण होता है। मरोड़ होकर ही टट्टी आयेगी। जब रोग बढ़ जाता है तब कंप-कंपी देकर ज्वर होना, आँव के साथ खून आने लग जाना, या खाली खून के दस्त दिन रात में ५ से १० तक या बढ़ते-बढ़ते पचास तक पहुंच जाते हैं।

ऐसी भयंकर स्थिति में घबरा कर झट से दस्त बन्द करने का यत्न न किया जाना चाहिये क्योंकि यह समझ लें आंव एक विष है, विजातीय द्रव्य है, जिसका शरीर से निकल जाना ही हितकर है, उसे बन्द कर देना सदा के लिये अन्यान्य रोगों में उसे फंसा देना है। ज्यों ही दस्तावरोधक अफीम जैसी चीज दी जाती है त्यों ही हाथ पांव में सूजन होना, दमा, कोढ़, जलोदर जैसे रोग जन्म पाते हैं। अनेक सांस दमा के रोगियों के उपचार काल में देखा जैसे-जैसे पेट में से जमी पड़ी आंव उखड़कर निकलने लगी त्यों-त्यों सांस ठीक होता गया।

अन्य साधारण उपचारः—ज्यों ही मरोड़ देकर टट्टी आने लगे त्यों ही अपने आहार को अति हल्का कर दो। पक्वान्न तो दूर रहे रोटी दूध मीठा विभिन्न अन्न सभी बन्द कर दो। आहार के रूप में लौकी, तोरी, काशीफल, परवर, कच्चा पपीता, ककड़ी इस प्रकार की सब्जियाँ बिना घी के पका कर लें, कुकर में पकाना श्रेष्ठ है।

रोगी स्याना हो तो अच्छा हो उसे सब्जियों के जूस पर ही रखें। एक दो या कुछ सब्जियाँ इकट्ठी मिला लें कुकर में या वैसे पका ठंडा कर कपड़े में डाल निचोड़ें। रस निकाल चाहें तो नींबू रस भी मिला लें दिन में चार पाँच बार पीएं। ऐसी दशा में नीचे लिखी वस्तुएं विशेष लाभ दिखाती हैं : —

ईसबगोल की भूसी (छिल्का) तीन माशे से ६ माशे तक अवस्थानुसार दें। भूसी को यों ही लेकर ऊपर से ठण्डा ताजा पानी पी लें। मीठा मिलाकर भी ले सकते हैं। ईसबगोल ले पानी में भिगो पिलाएं। कच्चा बेल उबाल व भून कर प्रयोग में लें।

ताजा बेल मिले अन्यथा सूखी बेल का गूदा पानी में भिगो दें मसल छान कर पियें। सौंफ ६ माशे, किशमिश डेढ़ दो तोले पीस खिलाएं। बेल की हरी पत्तियाँ पीस मुनक्का या किशमिश मिला चटनी बना सेवन करें। त्रिफला चूर्ण ६ माशे में ३ माशे के लगभग गुड़ की शक्कर मिलाकर ठण्डे पानी से लें। यह चूर्ण अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होता है। विकृत विष रूप आँव भी निकल जाती है। ऐंठन भी दूर हो जाती है। रोगी बड़ा लाभ अनुभव करता है।

आँव के आरम्भिक रोग में अथवा पुरानी बिगड़ी हुई आँव की दशा में उपवास करना हितकर है, उपवास काल में गर्म पानी पिएं ताजे या जरा कुनकुने पानी का एनिमा लें। पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी बड़ी हितकर है। गर्म जल पीने से चुभन न होगी। पेडू में जो प्रदाहात्मक उभाड़ की दशा चल रही है उसे मिट्टी की पट्टी शांत कर देगी। आँव का पुराना रोगी इतने दिन पोषण के अभाव में जो क्षीणता

का अनुभव करता है अब यदि वह टिक कर कुछ दिन मट्ठा कल्प करले तो कल्प में सारे शरीर के साथ आँतों को पूरा विश्राम मिल जाये।

चिन्तन का एक प्रकार—यह आँव का रोग क्या है ? पाचक यन्त्रों का थक कर सत्याग्रह कर देना, विश्राम की कामना करना। वे थके हैं अनुचित या अधिक आहार के प्रयोग से। ऐसी स्थिति में उन अंगों को विश्राम दें, साथ ही जो विकार भीतर पड़ा है उसे निकाल दें।

हमारा चिकित्सा का वह सूत्र दोहरायें–"**व्रत प्रायश्चितायां सर्व-रोग निराकरणम्**" व्रत एवं प्रायश्चित के द्वारा सर्व रोगों का इलाज हो जाता है। सब खाना छोड़ दें केवल आहार के रूप में सब्जियों का जूस लें, मोसम्बी जैसे फल का रस, खीरा, ककड़ी, गाजर जैसी कच्ची सब्जियों के रस पिये जाने चाहियें। रस निकालने के लिये गेहूँ छानने वाली लोहे की छलनी को उल्टा कर नीचे के खरदुरे भाग से कस कर कपड़े में डाल निचोड़ कर पियें। रस में नींबू रस भी मिला सकते हैं। इस प्रकार व्रत का अंश भी निभेगा। उसके साथ ही मिट्टी की पट्टी पेडू पर करें। साधारण स्थिति हो तो दिन में दो तीन बार मिट्टी पट्टी करें। रोग तीव्र दशा में हो तो अधिक बार मिट्टी पट्टी करें। मिट्टी भीतर की आँव को उखाड़ने में सहायक होगी। प्रातः मिट्टी की पट्टी के बाद ताजे पानी में नींबू रस मिला एनिमा लेना विशेष हितकर होगा। मट्ठा का एनिमा ऐसी स्थिति में अधिक लाभ पहुँचाएगा। इस प्रकार मिट्टी की पट्टी, एनिमा और रसाहार किया तो देखते २ असीम लाभ दिखाई देगा। रात में सोते समय एक पतला लम्बा वस्त्र लें जिसे पेट व कमर पर लपेटा जा सके। उसे ठण्डे पानी में भिगो निचोड़ पेट व कमर पर लपेटें ऊपर एक ऊनी कपड़ा लपेट दें जो रात भर पेट पर लिपटा रहे। इससे पेट के भीतरी अंगों की अच्छी मरम्मत होगी। केवल

नींबू रस मिले उबले जल को दिन भर लेना अथवा २ तोला चावल या साबूदाना पीस १ सेर पानी में उबाल नींबू रस, नमक मिला पीना।

इन प्रयोगों से आठ दस दिनों में ही विशेष लाभ अनुभव होगा उसके बाद चाहें तो पेट पर गर्म ठन्डा सेक कर यकृत, आमाशय, आँतों को सक्रिय व सबल बनाया जा सकता। दस पन्द्रह मिनट इस प्रकार सेक किया जाना चाहिये। जब देखें रोग की दशा ठीक हो गई तब क्रम से लौकी सब्जी तथा अन्य सब्जियाँ खायें। रायता बना खायें सेव जैसा फल खायें। जब फल सब्जी ठीक से पचने लगे टट्टी ठीक आने लगे तब धीरे २ थोड़ी मात्रा में अन्न आरम्भ करें। जौ के आटे की रोटी सर्वोत्तम है। रोटी की मात्रा पहले २ एक बार व थोड़ी ही हो। इस भाँति इस भयंकर रोग से निश्चित मुक्त हो सच्चा स्वास्थ्य प्राप्त कर सकेंगे। हर दिशा में सफलता प्राप्ति के लिए ऋषि के उस सूत्र का स्मरण बना रहे—

"स तु दीर्घकाल नैरन्तर्य सत्कारासेवितो दृढ़ भूमिः"

बिना उकताए लम्बे समय तक निरन्तर आदरपूर्वक प्रयोग करें।

भले ही यह पेचिश का रोग हठीला है, थकी मांदी आंतों का रोग है, पर यदि अब आप उन्हें न थकायें विश्राम देने का सोच लें तो विजय निश्चित है। बस जब तक रोग सर्वथा सदा के लिए विदा न हो जाये तब तक अन्न न लें, आँतें भीतर ही भीतर आराम भी पा लें स्वयंकी मरम्मत भी करलें इस दृष्टि से सुपाच्य रसाहार शाकाहार को ही चलने दें, आरम्भ में आठ २ आने भर ईसबगोल थोड़े से पानी में कुछ घण्टे भिगो दिन में दो तीन बार सेवन करें। इससे आंतों की जलन में आराम मिलेगा। कच्चा भुना बेल, पक्का बेल गूदा, पक्का केला, कच्चे केले की सब्जी, जौ का उबला पानी ये सब पथ्य हैं जहां तक बने इनसे लाभ उठायें।

कभी भी भारी दुश्पाच्य भोजन न करें। जब वह नहीं पचता तो आंव के रूप में परिणत हो जाता है। जैसे ही आमाशय से भोजन सरका पक्वाशय में आया इस प्रकार छोटी आंत से सरकता हुआ बड़ी आँत की ओर बढ़ने लगता है। आँत जहां भोजन सरकाती है वह जल का शोषण भी करती रहती है। वैसी दशा में जो व्यक्ति जल पर्याप्त मात्रा में नहीं पीता उधर जल शोषण क्रिया से जल सोखा जाता है तब मल कड़ा होने लगता है। कड़े मल को निकालने में आँत को अधिक श्रम करना पड़ता है। उस श्रम से आंत में सूजन सी हो जाती है। शौच से छिलने की दशा पैदा हो जाती है। पहला रूप प्रदाहात्मक आँव का होता है वही आगे बढ़ खूनी आँव का रूप ले लेती है, टट्टी की हाजत बार २ होती है, थोड़ी सी आँव मरोड़ देकर निकलती है। भख बन्द जीभ मैली हो जाती है।

संग्रहणी चिकित्सा

पेचिस (आँव) के सम्बन्ध में जो कारण बताया गया वही सारा इस रोग में भी है। इसमें दस्त अधिक आते हैं। पाचक यन्त्रों आँतों को सबल करने हेतु वही चिकित्सा करनी होगी जो पेचिश पीड़ा में बताई गई है।

ठन्डे पानी में नींबू रस मिला एनिमा से धीरे २ पानी चढ़ाया जाये। दिन में दो तीन बार २-२ घन्टों का ठन्डी पट्टी का पेडू पर लपेट, रात भर भी गीली पट्टी का लपेट।

गरम ठन्डा पेडू नहान इसकी मुख्य चिकित्सा है। पांच मिनट गर्म टब में बैठें, २-३ मिनट के लिये ठन्डे पानी में बैठना। इस प्रकार तीन बार इसे दोहराना चाहिए। इस प्रयोग से पेट पीड़ा भी हटेगी, पेट के सम्पूर्ण अवयव स्वस्थ सबल हो जाते हैं।

विशेष ध्यान रहे यदि रोगी की आँतों से खून आ रहा हो वैसी

दशा में गरम-ठन्डा टब का प्रयोग नहीं करना चाहिए। ऐसी स्थिति में दिन में तीन चार बार मिट्टी पट्टी दी जानी चाहिये। ठन्डे पानी में पर्याप्त समय के लिये पेडू नहान हितकर है।

नींबू रस मिला पानी दिन भर पीना चाहिए ताकि पेशाब के द्वारा विकार निकले। विकार परिवर्तन करने के विचार से ही सप्ताह में एक बार सारे शरीर को (वाष्प स्नान) पसीना दिलाना चाहिये। रोगी अधिक कमजोर न हो तो सारे शरीर में भीगी चादर का लपेट १-१ घन्टे के लिये।

सब्जियों के रस में नींबू रस मिला पीना चाहिये। सोयाबीन का दही इस रोग में बड़ा हितकर है। भोजन व औषध दोनों काम हो जाते हैं।

संग्रहणी में चमत्कारी औषधि

जब संग्रहणी को असाध्य दशा जान पड़े, रोगी अत्यन्त निर्बल हो जाए, प्राकृतिक उपचार की सुविधा न दिखाई पड़े तब जायफल आधा, चूर्ण कर, अफीम ४ रत्ती ले एक अनार में छेदकर भर दें, ऊपर से एरंड तैल से चुपड़ कर एरण्ड पत्ते लगा कंडे की आग में कुछ देर पकने दें। पत्तों पर आध इन्च मोटी मिट्टी तह के रूप में लगा दें ताकि उसके लाल होने पर अनार के पकने की सूचना भी मिल जाये छिलका भी न जले। मिट्टी हटा, पत्तों को हटाकर गरम २ अनार को पीस लें छिलके व बीज व दवा समेतही, मटर समान छोटी २ गोलियां बना लें, प्रातः सायं एक-एक गोली चावल के धोवन के साथ दें। अन्य पथ्य सेवन पूर्व लिखित विधि से करें।

दो चार दिन या एक सप्ताह का उपवास कर मट्ठा कल्प कर लेना चाहिए।

मट्ठा कल्प विधि - कम से कम तीन दिन अथवा पांच दिन या सात दिन का पूरा उपवास करें पश्चात् मट्ठा आरम्भ करें। आध छटांक मट्ठा हर दो घन्टे पर पीयें।

दिन	दो घन्टे बाद	मात्रा
१	,,	आध छटांक
२	,,	३ तोला
३	,,	३।। तोला
४	,,	४ ,,
५	,,	५ ,,
६	,,	६ ,,
७	,,	७ ,,
८	डेढ़ घन्टा बाद	७ ,,
९	,,	८ ,,
१०	,,	८ ,,
११	,,	९ ,,
१२	,,	१० ,,
१३	,,	११ ,,
१४	,,	११ ,,
१५	,,	१२ ,,

इस प्रकार दो दिन बाद एक तोला बढ़ाते जाएं इतने पर भी यदि भूख अधिक लगने लगे तो तीन सप्ताह पूरे हो जाने पर हर घन्टा पर भी मट्ठा ले सकते हैं। इस क्रम को एक मास चालीस दिन अथवा इससे भी अधिक दिन तक प्रयोग करें। इतने दिन मट्ठा सेवन करने से उदरस्थ अवयव नवशक्ति व स्फूर्ति सम्पन्न हो जायेंगे। शरीर विकार रहित शुद्ध रक्त पूर्ण हो जाएगा।

जब कल्प पूर्ण करना हो उस दिन प्रातः ३ तीन मात्रा लेकर फिर तीन घन्टे तक कुछ न लें। उसके बाद कुछ लौकी या तोरी पका दही मिला सेवन करें। तीन घन्टे तक फिर कुछ न लें, उसके बाद सब्जी व दही लें।

दूसरे दिन २ मात्रा मट्ठा की लेकर तीन घन्टे बाद उबली सब्जी

फल व दही लें। चार घन्टे बाद फल सब्जी व दही लें। पांचवें दिन भी दो मात्रा मट्ठा लें, चौथे दिन की भांति करना होगा। छठे दिन दोपहर में दो तोले जौं या गेहूँ का दलिया नमकीन बना सब्जी दही संग लेना। सायं को फल सब्जी व दही। बस इस क्रम से शनैः-शनैः मट्ठा बन्द करते हुये दही के साथ अन्न की मात्रा को बढ़ाते जाएं क्रमशः पूर्ण भोजन पर आ जायें।

मट्ठा बनाने की विधिः—दूध को उबाल दिला मध्यम आग पर रख दें, उस पर मलाई आ जाएगी उसे उतार लें, दूध जमाने योग्य हो जाय तब किसी खुले पात्र में डाल कर जामन (जोरन) लगा ढांक कर रख दें। यह ध्यान रहे जिस पात्र में दही जमानी है उसमें गर्म दूध डाल ठण्डा करें ताकि वह पात्र भीतर से गर्म हो जाय। जामन लगाने के बाद कुछ देर तक तापमान बना रहे। ऋतु के अनुसार तापमान बनाए रखने के लिए कम्बल आदि से लपेट सकते हैं। आजकल प्लास्टिक के लिफाफे इस बात को अच्छी प्रकार कर सकते हैं, प्लास्टिक लगा कर रख दें, बाहर की ठण्डक का प्रभाव न पड़े।

समझने की बात है सदैव खुले पात्र में जमाएं, दूध की सत्ता मोटी न होने पाए। तब दही मीठी बनी रहेगी, जहाँ अधिक दूध हुआ सत्ता मोटी हुई नीचे से खटास आती जाएगी। रात में दूध थोड़ा ही जमाएं ताकि सवेरे अधिक देर तक लेने में खट्टी न हो जाए। सवेरे पुनः दूध जमा दें। इस प्रकार दिन रात में तीन चार बार दूध जमाना चाहिये ताकि हर बार दही मीठी मिलती रहे। दही को बिलो लें, दही के बराबर ही पानी डालें, पहले तीन दिन इस प्रकार पानी की मात्रा रखें, बाद में दही से आधा पानी मिलाएं।

पानी की अपेक्षा भी यह कहीं अच्छा होगा लौकी या वैसी किसी सब्जी को कस उबाल कर ठण्डा कर निचोड़ उस सब्जी के रस

को मिलाएं। खीरे की ऋतु हो तो खीरे का कच्चा रस ही मिलाया जा सकता है। गेहूँ छानने वाली चंलनी जो नीचे से खुरदरी हो उस पर खीरे को कसें, निचोड़ कर रस निकाल मिलाएं। बना हुआ मट्ठा भी खट्टा न हो जाए इसके लिये मट्ठे को किसी खुले पात्र में रख किसी दूसरे पात्र में पानी ठन्डा डाल उसमें रख पतले कपड़े को गीला कर ढाँक दें। इस प्रकार मट्ठा मीठा बना रहेगा। यह ध्यान रखें खट्टे मट्ठे से बचें।

भूख बढ़ी जान पड़े तो हर घन्टे पर मट्ठा लेना आरम्भ कर दें। मात्रा भी उसी क्रम से बढ़ाते जाएं। इस प्रकार यदि महीना चालीस दिन कर गये तो बहुत बड़ा कल्याण हो गया। रोग गया, निर्बलता गई, ताजगी आई, नव चेतना व नई स्फूर्ति आई। शरीर नव निर्माण के साथ ही नया साहस, धैर्य, विवेकशील मन बन जाएगा।

"कब्ज या कोष्ठबद्धता"

बड़ी आंत में मल पड़ा रहता है। पेट साफ हो गया ऐसा नहीं लगता। रोज टट्टी (शौच) जानें पर खुलकर नहीं होती। जिन्हें रोज शौच होता ही नहीं उनकी बात तो पृथक् रही।

बहुत से व्यक्ति यह कहते सुने जाते हैं कि हमें कब्ज नहीं रहता जबकि कब्ज के लक्षण उनमें पाए जाते हैं।

केवल एक या दो बार टट्टी जाना ही पर्याप्त नहीं। क्या आप उतने से कोई माप तौल कर पाते हैं कि जितना निकलना चाहिये था उतना निकला? फिर यह भी बात है कि यदि आप ऐसे खाद्य खाते हैं कि जो बराबर आंतों में लेई सी बन चिपकते रहते हैं तो भी आप शौच जाते हुए भी कब्ज के रोगी हैं। कब्ज के रोगी के ये लक्षण माने जाते हैं—

पाखाना साफ न होना, सुस्ती छाई रहना, पेडू कठोर, पेट भारी रहना, सिर में भारीपन या दर्द रहना, नींद ठीक न आना तथा भूख भी खुल कर न लगना।

चौबीस दिन की भयंकर कब्ज की अद्भुत चिकित्सा

सुन कर गप ही जान पड़ेगी, पर वस्तुतः सत्य है, झूठ बोलने का कोई मतलब नहीं, पच्चीस दिन हो गए टट्टी नहीं आई, खा रहा है और जी भी रहा है, अब सुनें पिता के शब्दों में कहानी।

आदरणीय महात्मा जी ! प्रिय अनिल की कहानी यों है कि पहले दो दो दिन तक फिर चार चार दिन तक इसे टट्टी न आती। जब हमें पता लगा इधर उधर भागने लगे। मेरठ के प्रसिद्ध डाक्टर का १५ दिन इलाज चला, साबुन व ग्लैसरीन के एनिमे लगाए, लगभग चार सौ रुपये व्यय हुए। निराश हो मैडिकल कालेज का इलाज भी किया, १५ दिन में ५०० रु० के करीब खर्च किए पर कोई लाभ न देख राजधानी की शरण ली। दिल्ली आल इण्डिया मैडिकल इन्स्टीट्यूट के प्रसिद्ध डाक्टर से इलाज कराया। आश्वासन तो दिए गए पर लाभ कुछ भी न हुआ। चोटी के डाक्टरों से निराश हो दिल्ली भोगल के एक बहुत बड़े राज वैद्य की शरण में गए जहां रोगियों की लम्बी कतार लगी रहती है। उनकी बताई कीमती भस्में ३० व ५० रुपये मूल्य की एक एक दिन ले गए। बताए अनुसार दूध में खूब बादाम रोगन पिलाया गया। बड़े धैर्य से चलते गए, छः मास इलाज चला। हमारे धैर्य की सीमा आ गई, थक से गए। उधर अनिल ने हाथ टेक दिए, बोला अब मेरा कोई इलाज न कराएं। डाक्टरों के कहने से टट्टी, पेशाब टैस्ट आल चैक अप कराया पर कहीं कुछ पकड़ में न आया। इधर कब्ज को स्थिति बिगड़ती जा रही है। चौदह दिन तक टट्टी नहीं। सारे प्रयोग फेल, एनिमे बेकार हो गए।

वैद्य जी ने तो आंतों का पैरेलाइसिस ही घोषित कर दिया था। आश्चर्य की बात तो यह कि प्रातः दो कप दूध, पराठे, दोपहर दो रोटी भाजी, रात्रि रोटी सब्जी बदस्तूर खा रहा है पर टट्टी का नाम

नहीं। जोर देकर बार २ टट्टी जाने के लिए कहा बीस, बीस बार टट्टी में जाए वैसे ही वापिस लौट आए। डाक्टरों के कहने पर पांच बार एक्सरे भी कराए पर वही ढाक के तीन पात।

आँखों के आगे तारे दिखाई देते, सिर चकराता, कमजोरी, पेट दर्द, पेट फूलना, रंग पीला पड़ गया जबकि डाक्टरों के टैस्टों में कुछ नहीं आ रहा, न इलाज से कुछ लाभ हो, उल्टा मिसल मशहूर वही हो रहा है—

"मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों ज्यों दवा की"

आखिर २५ मई ७५ रविवार पूर्णिमा को आश्रम पर पहुंचे। २५ दिन हो गए थे टट्टी हुए।

पेट का सेंक कर मिट्टी पट्टी व एनिमा दिया गया। उस दिन आंवले के पानी का एनिमा था उससे २ बार टट्टी गया। विश्वास हुआ हमारा संकट टला। किसी दिन खट्टे मट्ठे का, पालक रस का बदल बदल कर एनिमे होने लगे। प्रातः मुनक्का अंजीर का नाश्ता दोपहर में सलाद, सब्जी, भूना चोकर, खरबूजा रस। रात्रि में रोटी, सब्जी यह आहार दिया गया। आश्रम नियमानुसार यह सामान्य उपचार व आहार था जिससे पांच दिन में ही टट्टी स्वतः आने लगी। केवल १५ दिन ही विधिवत इलाज चला हां काफी दिन तक दूध घी नहीं दिया गया अखिल पूरा ठीक हो गया। आज दिनांक १७ जुलाई ७६ को हर प्रकार से स्वस्थ, रंग चमकता है, वजन बढ़ रहा है खूब खाता पीता प्रसन्न है।

मैं मेरा परिवार आपके, आप की पद्धति के हृदय से आभारी हैं।

आपका—
सीताराम आनंद
फलमंडी, घन्टाघर, मेरठ

चिंतन का एक प्रकार—अखिल की कब्ज इतनी पेचीदा क्यों बनी? जिसने चोटी के डाक्टरों के व मूर्धन्य वैद्य जी की उच्चतम

बहुमूल्य चिकित्सा को भी फेल कर दिया। उधर आश्रम में चल रहे सामान्य उपचार द्वारा ही आशातीत लाभ हो गया न कोई टैस्ट ही हुआ ना ही विशेष चिन्ता युक्त चिंतन ही तब भी पांच ही दिन में गाड़ी लाइन पर आ गई।

मेरा एक प्रसिद्ध वाक्य है:—भूल रूपी नींव पर रोगों की दीवारें खड़ी हैं उस पर विभिन्न पैथियों के महल खड़े हैं। आप जरा साहस व संयम से भूल रूपी नींव को खिसका दें बस फिर क्या रोग रूपी दीवारें गिर पड़ेंगी। उस पर बने सभी पैथियों के महल भी धराशायी हो जाएंगे।

डाक्टर वैद्य के चिंतन में आया कि आंतों में खुश्की है इसे घी दूध दिया जाना चाहिए ऐसा मान कर ही बादाम रोगन दूध में दिया जाने लगा, परिणाम उल्टा हुआ, लीवर व स्टमक कमजोर पड़ने लगे; खाए गए, आहार का पाचन ठीक न हुआ व आँव बन आँतों में चिपकता गया जिसने दर्द करना, पेट फुलाना यह सब किया। इधर हमने एकदम उसके विपरीत दूध घी सर्वथा बंद कर दिया। उधर एनिमा भी दिया तो चिकनाई का कास्ट्रायल व ग्लैसरीन का जब कि इधर खुराक में खुरदरी व सुपाच्य चीजें, एनिमा भी शोधक अतः परिणाम भी अनुकूल रहा।

ठीक पचे हुए भोजन के शुद्ध मल के लक्षण

जब पाचन क्रिया ठीक काम कर रही होती है साथ ही बड़ी आंत का मल निष्कासन कार्य भी ठीक हो रहा होता है तब बढ़िया पचे हुए अन्न का जो मल बनता है उसका स्वरूप यह है कि शौचालय में जाने से पहिले सामान्य हाजत होती है। उसमें भी दर्द या अधिक दबाव नहीं होता। शौचालय में बैठने पर एक लम्बे आकार व भूरे वर्ण का लम्बा बंधा हुआ सुड्डा, न बहुत कठिन (जिसे गुदा से बाहर आने में ही बड़ी कठिनाई हो, गुदा में पीड़ा हो, फटने लगे) न अति नर्म हो, एक या दो तीन चार क्रमशः आसानी से हो जांय। गुदा में अंगुली

फेरने पर भीतर मल चिपका हुआ शेष न जान पड़े। आँत में हल्का-पन सुखानुभूति सी जान पड़े। गुदा के बाहर भी मल चिपका न रहे मानो धोने की भी आवश्यकता न जान पड़े। शौच के समय न कोई शव्द हो। न मल पर कोई आंव सफेदी चिपकी हुई हो। ठीक ऊंट के मल के समान न बहुत सख्त न बहुत नर्म। इस प्रकार की टट्टी एक या दो बार ठीक खुल कर हो जाती है तो समझो कि आदर्श स्थिति है पाचन की, पेडू की, बड़ी आँत की।

शरीर में एकीकरण व बहिष्करणः—हम जो कुछ खाते पीते हैं, पाचन प्रणाली द्वारा उसको (प्रचूषण होता है, तदनन्तर सात्मीकरण) चूसने वा शरीर में एकीकरण की क्रिया होती है। आहार का जो भाग शेष बच जाता है उसके लिये दूसरी आवश्यक क्रिया होती है बाहर निकालने की क्रिया (बहिष्करण)। जहाँ कहीं कोई चीज घुलमिल जाती, फिट बैठ जाती है वह तो ठीक। दूसरी बची चीज बेकार कूड़ा प्रतीत होती है जिसे वहां से हटा दिया जाता है। हमारे शरीर में खाये गये आहार से आगे रस रक्त, धातु निर्माण आदि सात्मीकरण क्रिया के साथ जो अवशेष मल की स्थिति होती है उसे शरीर अपनी प्रवृत्ति के अनुसार अन्दर से मल मूत्र नाक थूक आँख का मल पसीना वा दुर्गन्ध वायु के रूप में शरीर से बाहर निकालता रहता है। विकार निकलने की क्रिया का कितना महत्व है इससे प्रतीत होता है कि कोई भी मनुष्य आहार के विना कितने दिन या सप्ताह निर्वाह कर सकता है, पर कुछ घण्टों के लिए भी मल वा पेशाब का बन्ध लग जाय, मलावरोध वा मूत्रावरोध की दशा में कितनी परेशानी अनुभव करता है। जब तक वे अवरोध दूर नहीं हो जाते चैन नहीं पड़ती।

कब्ज को रोगों की नानी कहते हैं। अनेक रोगों की जननी या नानी मानी जाती है। आँतों में स्थान २ पर रसशोषक ग्रन्थियाँ हैं। उनका स्वभाव है वे सदा आहार के रसों को चूसती रहती हैं पर

जब मल बाहर न निकल वहाँ रुका रहता है तो वे अपने सहज स्व-भाव से मल में से रस चूस २ कर रक्त में मिलाती रहती हैं। इस प्रकार वह रक्त विषाक्त हो जाता है। वह विष टाइफाइड, हृदय के विभिन्न रोगों का कारण बनता है। यह कब्ज ही जानलेवा रोगों का जन्मदाता बनता है। अपेंडीसाइटिस, गठिया, कैंसर, मोतियाबिंद, ब्लडप्रेशर, संधिप्रदाह जैसे भयंकर रोग कब्ज रूपी महावृक्ष के फल हैं।

कब्ज चिकित्सा—अच्छा हो आप कब्ज के कारणों को जानलें कारण ज्ञान से कार्य सरल हो जायेगा। क्या यकृत तिल्ली तो बिगड़े हुए नहीं हैं ? यदि ऐसा है तो इन्हें ठीक करें, कब्ज का उपचार हो गया। क्या निकम्मे रहते हैं या केवल दिमागी काम करते हैं उतने से संतुष्ट हैं ? शरीर से श्रम नहीं करते तो शारीरिक श्रम करने लगें। उपजाऊ श्रम करें ज्यादा अच्छा अन्यथा थोड़ी दौड़ लगायें। दौड़ के समय पेट को खूब हिलने दें। सैर, आसन, या अन्य व्यायाम करना आरम्भ कर दें।

भारी भोजन पुरोठे वा पूड़ी के ही प्यारे हैं तो उन्हें बदल दें। चाय काफी के पियक्कड़ हैं तो उन्हें कम कर दें। पानी कम पीते हैं तो दिन में खूब पानी पीने की आदत बनाएं। सब्जी नहीं भाती तो सब्जी खाने का शौक पैदा करें। सब्जी का अर्थ भी ठीक से समझें। कुछ मौसम के फल खाने की आदत डालें।

हापुड़ एक परिवार में गया तो छोटे से बड़े तक को रोगी पाया। छोटे-छोटे बच्चों की आंखों पर चश्मे चढ़ रहे। किसी का टाइफाइड में अमुक अंग बेकार किसी को कोई रोग दूसरे को दूसरा। जब मैंने उनके भोजन का निरीक्षण किया तो रात्रि के समय पुरोठे तथा सब्जियों में दो सब्जियाँ एक मिर्च मसालेदार खूब छौंकीं आलू की और दूसरी अर्वी की। नमूने के रूप में एक-एक चम्मच मांगा खाकर देखा तो उतना भी खाना कठिन हो गया इतनी मिर्चें पड़ी थीं।

पता नहीं वे बच्चे व बड़े कैसे खा लेते ? जिन घरों में खाने के नाम पर पुरोठे व पूड़ियां बनती हैं सब्जी के नाम पर एक साथ चुनी हुई आलू अर्वी की मिर्च मसालेदार सब्जियां बनती हैं क्यों न रहे वहाँ कब्ज वा अन्य-२ रोग ।

अब वैसे कब्ज को दूर करने के लिगे लोग लेते हैं दवाएं, जो स्वभावतः गर्म वा खुश्क होती हैं–बवासीर, धातु का पतलापन, स्वप्न-दोष, आँतों में खुश्की भर जाती है । आंतों की मल निकालने की स्वाभाविक क्षमता नष्ट हो जाती है । पहले कब्ज का एक रोग था अब दवा लेने का एक नया रोग और लग गया । दवा के बिना टट्टी नहीं आती ।

चिकित्सा के रूप में तो मैं पृथक से भिन्न-२ क्रियाएं लिखूँगा उसमें आपको योग्यता भी जान पड़ेगी । एक चिकित्सा चार्ट मन को रुचिकर होगा । ऐसा लगेगा हाँ कुछ उपचार है । तब फिर मैं पहले कुछ सीधी सरल विधि ही दर्शा दूं यदि यह भी आपके मन को भा जाए । बस कब्ज का सरल इलाज है—श्रद्धा वा विश्वास ले प्रकृति की ओर लौटें । खाना वही खाएं जैसा प्रकृति ने रचा है हरे ताजे गेहूँ, चना, मटर, मूंग-उड़द, ज्वार, मकी, बाजरा खाना है बस खेत में बैठ बालियाँ तोड़े और खाएं । आप कहेंगे सर्वथा असंभव अरुचिकर अस्वादु । चलो भून कर खाएं रिवाज भी है चने, ज्वार, मकी भून कर खाते हैं ।

गेहूं, चने, मूंग मूंगफली भिगो दें कुछ घंटे भीगने के बाद निकालदें थैली में टांगें, अंकुरित भी हो जाने दें । अब उन्हें स्वादिष्ट बनाने हेतु छौंक भी लें थोड़ा पकते ही बेहद स्वादिष्ट बन जायेंगे नमक, जीरा, धनिया, हल्दी, हरी मिर्च रुचि अनुसार मिला लें भर २ पलेटें खाएं अथवा वैज्ञानिक युग के प्रवाह में बहने के कारण चाय, काफी, डबल रोटी, बिस्कुट, मिठाईयों के नाश्ते ले लेकर दांत समाप्त कर लिये हैं तो इन्हीं अंकुरित चीजों को मिला खिचड़ी बनाएं । खिचड़ी भी एकान्न, द्विअन्न या पंचान्न की मिश्रित खिचड़ी बनाएं उसमें अंकु-

रित मूंगफली तो होगी ही साथ ही हरा नारियल कस कर मिला दें। सारे परिवार का यही मुख्य भोजन हो पूर्णान्न खिचड़ी या अंकुरित जीवितान्न खिचड़ी खाने का रिवाज डालें। खिचड़ी को यों ही निगलते न जाएं खूब चबायें, रस बना-२ पिएं। बिना दांतों वाले घोट पीसकर खाएं। कभी रुचि परिवर्तन करना हो तो दलिया नमकीन बनाएं। उसी में सब्जी भी डाल दें।

ठीक इसी प्रकार सब्जी में रुचि बनायें। खेत में बैठ जाएं मूली, शलजम उखाड़ें खाएं, गाजर, पालक, भिंडी, धनिया पत्ते तोड़ते जाएं खाते जाएं खेत में से निकालें पेट में डालें। अब संभव असंभव को आप देखें कितना कैसा कर सकते हैं ? केवल मेरे हार्दिक भाव को समझें। मैं चाहूंगा प्रकृति-पक्व पक्की कच्ची सब्जी बिना आग पर दोबारा चढ़ाये पकाये हमारे उदर के अन्दर चली जाएं। पूरी कच्ची या कुछ पकाई, गलाई तो पेट में जाये ही, जितना संभव हो।

मेरी माता जी सत्तर वर्ष के लगभग की आयु में जब कि मुंह दांतों से हीन हो रहा है, चबाने का साधन नहीं रहा, फिर भी कच्ची सब्जियां कस कर सलाद बना नित्य दोपहर भोजन के समय खातीं और अनुभव सुनाती कि यदि मैं सलाद न लूं तो कब्ज हो जाता है।

इस प्रकार कच्चे, अंकुरितान्न, कच्ची सब्जियां उनके सलादादि का आहार हो, हाथ पांव से श्रम करने की भावना हो, ईश्वरदत्त इन साधनों का उपयोग करें। उद्योग धंधे में उनका उपयोग हो इतना ही प्रकृति की ओर लौटने का भाव बना लें फिर देखें वर्षों का कब्ज दिनों में विदा होता है। पर मैं मानता हूं मेरे लिये लिखना जितना सरल है उतना मुझे व आपको करना कठिन है। यदि लिखना व बोलना व्यवहार में आजाए, आचरण का अंग बन जाये तो मानव महान् वन जाए। यही कमी है जितना मानता है जितना बोलता उतना करता नहीं, कर पाता नहीं। बोला जाता है करने के लिये। चलो लिख दें बोल दें। काश लिखते-२ या बोलते पढ़ते कुछ भीतर भी उतरने लग जाए, जीवन का अंग बन जाए।

हां तो दूसरा प्रकार होगा—प्रातः भ्रमण जाने के पूर्व सर्दियों में गरम पानी में एक नींबू रस मिला नमकीन बना पीते जाएं। गर्मियों में ताजे पानी में। लौटने पर मुनक्का १५-२० दाने, अंजीर सूखी ३-४ दाने, खुरमानी ४ इन्हें रात्रि में धो मुनक्का के बीज निकाल थोड़े पानी में भिगो दें प्रातः ऋतु अनुसार गरम कर या ठंडे पानी में नींबू रस मिला कर पी लें ऊपर से मुनक्का वगैरह खालें। अंजीर खुरमानी न मिलने पर केवल मुनक्का का प्रयोग करें। कब्ज के लिये सुन्दर प्रयोग है। आंतों, आमाशय व यकृत के लिये हितकर है। है मंहगा कुछ तो सुनते ही उपेक्षा से छोड़ देंगे पुस्तक को ही।

एक अन्य सस्ता सरल प्रयोग है **चोकर की खीर**। घर में गेहूँ के आटे का चोकर (चापड़ या बूर) होता है उसे लें एक तोला या और अधिक। यदि दूध पीते हैं तो एक पाव में २ तोला के लगभग चोकर डाल आग पर पका लें सुन्दर खीर बन जायगी। यदि दांत ठीक हैं (क्योंकि बहुधा देखा जाता है आंत रोगी तो दांत रोगी) मीठी खीर खाना चाहते हैं तो थोड़ा गुड़ शक्कर जैसा मीठा डाल लें या खजूर ही मिला लें, चाहें कोई अन्य मेवा मुनक्का किशमिश आदि मिलालें। इसी का प्रातराश कर बच्चों को खिलाएं। कहने को चोकर की खीर, पर इसे ही जितना चाहें स्वादिष्ट सुस्वादु बनाएं। दोपहर में भोजन के समय या अन्य किसी समय रात्रि अथवा सायंकाल को।

चोकर बनाने के अन्य कार्य—चोकर को साफ कर लें, जरा सा घी का हाथ लगाएं, कड़ाही में डाल पर आग पर हल्का सा भून लें, ठंडा कर गुड़ शक्कर मिला कर डिब्बे में भर कर रखें। जब कभी नाश्ता करते है तभी थोड़ा निकाल कर खाएं खूब चबायें ऊपर से दूध, छाछ, मट्ठा पानी जो भी पीना हो, पियें। गुड़ शक्कर से मीठी न करना चाहें खजूर धो सुखा छोटा-छोटा काट मिला दें। किशमिश मुनक्का जैसी चीजें मिलाएं। सूखी पंजीरी सी बन जायेगी।

अथवा उसी मीठी पंजीरी को सूखा न खाते हुए गीला तरल बनाकर खाना चाहें तो ऋतु का कोई फल उसी में मिलालें। फलों का

रस ही मिला लें जैसे–१. भुने हुए चोकर में आम का रस मिला खायें। २. खरबूजे का रस ३. तरबूज रस मिला लें। ४. बेल के दिनों में बेल का गूदा निकाल पानी मिला छान चोकर में मिला खाना आंतों को सबल स्वस्थ बनाने का सुन्दर ढंग है। ५. गाजर को कस कर रस निकाल उस रस में मिला खायें। ६. पपीता गूदा में या कपड़े से छान रस में मिला सेवन करें। ७. केले को मसल कर उसमें चोकर मिला खाएं। इतने सारे नमूने पेश कर दिये, इसी प्रकार अब आप अपनी बुद्धि से अन्य नमूने तैयार कर सकते हैं। मीठा चाहें फल मिलाएं, ८. नमकीन चाहें पकाई सब्जियों के रस मिलाएं। मनभाया स्वादिष्ट खाद्य तैयार कर लें। अथवा

९. चोकर को भून ऊपर बताए किन्हीं फलों के रस में भिगो धूप में सुखा, सूखा चूर्ण सा बना रख लें, जब कभी रुचि अनुसार सेवन करें। उस सुखाए चोकर में कोई मेवा मिलाकर रखें सुन्दर स्वादिष्ट चूरमा बन जाएगा। दिन में एक दो बार इच्छानुसार सेवन करें।

१०. इस प्रकार बनाए हुए चोकर में उस से आधी मात्रा में ईसबगोल की भूसी मिला सकते हैं। भीतर जमीं आंव को भी चोकर वा भूसी ईसबगोल दोनों निकाल देंगे। आंतों की रूक्षता को भी दूर कर देगें।

अथवा

११. भूसी की सम मात्रा में खशखश (पोस्तदाना) को कूट कर मिलाएं इस प्रकार इन तीनों का मिश्रण, १ चोकर २ ईसबगोल भूसी वा ३.खशखश सुन्दर रहेगा। निरन्तर कुछ दिन के सेवन से जहां आँतें विकार रहित हो जाएंगी वहां सबल एवं स्वस्थ हो जाएंगी।

जैसे चोकर के विविध प्रकार बताए इसी प्रकार बेल (बिल्व) का सेवन भी हितकर है। बिल्व का गूदा जहाँ आँतों में चिपके आँव मल को उखाड़ बाहर लाएगा वहाँ उन्हें सबल बनाएगा बंधी

हुई टट्टी लाने का ढंग हो बना देगा । ऐसा शौच होगा मन प्रसन्न हो जाएगा ।

बेल का प्रयोग

यदि वैसाख ज्येष्ठ का मास हो तब तो उन दिनों आपको पका बेल मिलेगा, उसका गूदा सहज में ले सकते हैं । गूदे को पानी में घोल छान कर सेवन करें । छिलके के साथ चिपका गूदा तो वैसे ही खरोंच कर खाएं मीठा लगेगा । रोज सायं तीन चार बजे ठंडाई के रूप में बेल का शर्बत बना पिया जा सकता है । मीठा मिलाना ही हो तो शहद, गुड़ या शक्कर मिलाएं । (दाना चीनी नहीं)

अन्य प्रयोग—जिन दिनों पका बिल्व न मिले उन दिनों कच्चे को ले पानी में साबित ही डाल उबालें नर्म हो जाने पर फोड़ गूदा निकाल प्रयोग में लाएं । दूध, दही, मट्ठा मिला स्वादिष्ट बना सकते हैं । कुछ दिन तक निरन्तर नियमित बेल के प्रयोग से बड़ा लाभ होगा ।

२—बेल के स्थान पर बेल के पत्ते ले धो सुखा कर चूर्ण करें । मुनक्का बीच में कूट माजून सा बना लें या गोलियां बनाएं कुछ शहद मिला सकते हैं । गुलाब फूल भी सूखे कूट मिला सेवन करें ।

आंतों की प्रवृत्ति बदलने का ढंग—अभी तक ऊपर कब्ज के संबंध में जो योग दिये गए यदि आंते उन से भी लाभ नहीं प्राप्त कर पाती अत्यंत सुस्त हो चुकी हैं; उनकी संकोच-प्रसार की क्रिया ही जाती रही है, वैसी दशा में प्राकृतिक चिकित्सा के पूर्ण प्रयोग द्वारा उनकी प्रवृत्ति का बदलें— चिकित्सा कार्यक्रम यों बनाएं :—

(१) प्रातः गुनगुने पानी में कटि स्नान कर, शक्त्यनुसार भ्रमण वा कुछ पेट के योगासन वा पेट की क्रियाएं । तदन्तर रात के भीगें २० मुनक्का, २ अंजीर, २ खुरमानी के जल में नींबू रस मिला पेय का प्रयोग करें । दो घंटे बाद पेट का गर्म-ठंडा सेंक कर पेड़ू का गीली पट्टी का लपेट एक घंटे के लिए । दोपहर मोटे चोकर वाले आटे की रोटी, पकी सब्जी वा सलाद । ४ घण्टे बाद प्रातः की भांति कटि

स्नान वा भ्रमण सांय के आहार में केवल फल-सब्जी। रात में पेडू पर मिट्टी की पट्टी किंवा कपड़े की गीली पट्टी का लपेट। ऐसे एक सप्ताह कर बाद में दूसरे सप्ताह एनिमा चार्ट का प्रयोग करें। एनिमा के बाद गरम पानी की थैली को गीले कपड़े में लपेट कर पेट पर पौन घंटा के लिए रख दें। शेष क्रम वैसा ही रखें रोटियां कम कर दें। साथ में खरबूजा, संतरा, बेर जैसा कोई मौसम का फल दिया जाना चाहिये।

अथवा

ऋतु के अनुसार पेडू पर १. गर्म या ठण्डी मिट्टी पट्टी एक घण्टा दें। २. एनिमा चार्ट। ३. मुनक्का वाला पेय। ४. प्रातः सायं पेडू नहान। रात्रि में गीली लपेट या मिट्टी पट्टी। केवल पकी सब्जी वा सलाद पर ही रख। दूसरे समय भी फल सब्जी दें। सप्ताह के बाद चोकर-दार रोटी या दलिया एक समय शामिल कर दें।

अथवा

एक दिन जल पीकर उपवास करें, दो दिन फल सब्जियों के रसों पर रहें। गाजर का रस लेना, पालक बथुआ जैसी भाजियों का रस विशेष लाभप्रद है। रसाहार के बाद एक सप्ताह पर्यन्त फल सब्जियों का आहार लें। साथ ही एनिमा चार्ट भी हो। फलाहार के दिनों कटि स्नान सम्भव हो तो लें। फलाहार के बाद प्रातः मुनक्का का पेय, एक समय रोटी-सब्जी, सलाद दही, दूसरे समय फल दूध। फल सब्जी की मात्रा अन्न से दूनी रहे। उसके बाद धारोष्ण दूध, चोकर-दार आटे की रोटी, फल सब्जियों का नियमित आहार। पेडू रर मिट्टी वा गीली पट्टी का लपेट।

अपनी दिनचर्या को सुन्दर बना लें, प्रातः उठ ऋतु अनुसार गर्म या ताजा पानी पी शौच जाना, खूब तेजी से सैर भ्रमण, कुछ हल्की हल्की दौड़ शुरू कर दें। लम्बी सांस लेना, पेट के कुछ आसनादि।

नाश्ता लेना हो तो सब्जी या फल का रस, मुनक्का का पेय अथवा अमरूद, मूली, गाजर सब्जियों का केवल सलाद।

जिन्हें दूध उपलब्ध हो साथ ही भूख भी हो भूख जगाने का श्रम भी चल रहा हो वे दूध एक उफान का या धारोष्ण लें। सप्ताह में एक दिन उपवास किया जाए। उस दिन केवल पानी में नींबू रस मिला सेवन करें। पूरे दिन का उपवास न हो तो केवल साँय चार बजे एक समय ही फल वा सब्जियों का आहार लिया जाना चाहिए।

भोजन के आध घंटा पूर्व पाव भर गुनगुना पानी पीना हितकर है चाहें आधे नींबू का रस मिला लिया जाए। भोजन के समय जल सर्वथा न पिएं अथवा अत्यल्प।

कब्ज के रोगी के लिए बालू के प्रयोग को लाभप्रद देखा गया है अनेक प्राकृतिक चिकित्सा प्रयोगियों ने लाभ प्राप्त किया है। नदी की बालू ले, दिन में दो तीन बार चुटकी २ पानी के सहारे लेनो होती है। अथवा पालक या मूली के पत्तों का रस निकाल बालू भिगो गोलियां बना छोटी २ गोलियां दो तीन पानी की सहायता से निगलना।

पीली बोतल का सूर्यतप्त जल (सूर्यामृत) २॥ तो० की मात्रा दिन में तीन-चार बार प्रयोग करना हितकर है। सूर्यनमस्कार किये जाने चाहिएं। ज्यों ही प्रातः जागें, खुले खाट पर पड़े २ पेट की सूखी मालिश करें दाएं से बाएं को हथेलियों से हल्का-हल्का मर्दन करें दस बारह मिनट।

चिंतन का प्रकार—सोचना तो यह है आंतों की क्रिया क्यों गड़बड़ाई ? यदि आहार में (गुरुपाक) भारी पदार्थ रहे तो उन्हें बदलें पराठे, पूड़ी के स्थान पर सादी रोटी लें, मैदे की खाद्य वस्तुओं ने बिगाड़ा है तो अब साबुत अन्न पूर्णान्न का सेवन करें। चोकर का व्यवहार करें। यदि सूखे घाट नौका लगाई हैं, रूक्षान्न रूखे पदार्थ

खाए गए हैं आंतों में खुश्की छा रही है तो अब थोड़ा सुध लें। तिल भिगो पीस चटनी बना खजूर जैसा मीठा फल मिला सेवन करें। कम पानी पिया गया तो अब नियम से खूब पानी पियें। आराम कुर्सी पर आराम ही किया है शारीरिक श्रम नहीं किया तो अब चाह कर श्रम करें, कुछ दौड़ें तेज भ्रमण-सैर करें, पेट की कसरते करें। अधिक आहार करने की बुरी लत से पेट विगड़ा है तो अब आहार को माप कर संयम से लें।

इस प्रकार का चिंतन रोगी ने स्वयं करना है उसका हल भी स्वयं रोगी ने ही करना है। स्वचिकित्सक बनता है, पराणेक्षी नहीं। प्राकृतिक योगचिकित्सा आपको श्रमी वनाना चाहती है, वह श्रम चाहती है श्रम समय मांगता है जबकि अन्य चिकित्साएं रु० माँगती हैं। कुछ क्रियाएं ऐसी ही हैं जो बड़े से बड़े राजा महाराजा को भी स्वयं करनी होती हैं—नींद, भूख-प्यास, टट्टी पेशाब की हाजत तगड़ा होने के लिए श्रम वा भ्रमण सैर कसरतादि इन सब के लिए दूसरे की अपेक्षा नहीं की जा सकती, स्वयं ही ये क्रियाएं करनी होती हैं। ठीक ऐसे ही सच्चे स्वास्थ्य प्राप्ति के लिए स्वयं ही संयम वा श्रम अपनाने होते हैं। शान्ति व प्रसन्नता पाने के लिए ध्यान व दान भी स्वयं ही करना होगा।

अजीर्ण (बदहज्मी, मन्दाग्नि—अग्निमांद्य, अंग्रेजी—डिस्पेप्सिया)

भोजन ठीक से न पचना, खट्टी डकारें आना, पेट फूलना, मीठा-२ दर्द होना, गले व कलेजे में जलन होना, रात में सोते समय या अन्य समय भी मुंह में पानी आना, जी मिचलाना, दिल की धड़कन, घबराहट, दिमागी परेशानी, टट्टी पतली होना, कुछ दिन कब्ज फिर एक दिन तीन-चार इकट्ठे दस्त हो जाना, भूख न लगना। मुंह में साबुन की झाग-२ सी जान पड़ना आदि चिन्ह अपच में होते हैं।

अजीर्ण स्वयं तो कोई शीघ्र ही मारात्मक रोग नहीं है कि झट-

से किसी की मृत्यु हो जाये परन्तु यह अनेक मारात्मक रोगों का उत्पादक हो जाता है। बहुत समय तक अजीर्ण रहने के बाद ही (यक्ष्मा) टी० बी०, विभिन्न प्रकार के स्नायविक रोग, यकृत तथा गुर्दे संबंधी रोग उत्पन्न हो जाते हैं। क्योंकि शरीर का पोषण खाए गए पदार्थ के ठीक से पच कर शरीर में आत्मसात होने पर ही निर्भर करता है अन्यथा शरीर के विभिन्न अंग कमजोर ही बने रहेंगे। कमजोर अंग विजातीय द्रव्य के आश्रय स्थान बनेंगे। तब अपच रोग स्वयं मारात्मक न होकर भी अनेक मारात्मक रोगों का जनक हो जाता है।

कारणः—अधिक मात्रा में खाना, जल्दी-२ खाना, बहुत देर में पचने वाले भारी पदार्थ खाना, भोजन के तुरन्त बाद काम में लग जाना। भोजन के बाद ही सो जाना, मीठे का अधिक प्रयोग, चाय काफी आदि का अतिसेवन आदि कारण कहे जाने चाहियें। मेरे दोनों सूत्र—अविवेकासंयमयोः योगः रोगाणाम् कारणम्। तथा आसक्ति अशक्त्योः समन्वयः रोगाणाम् कारणम्। नासमझी व बदपरहेजी रोगों का कारण है अथवा आसक्ति का योग रोगों का कारण है शक्ति रही नहीं आसक्ति (खाने की लालसा) गई नहीं यह है रोगों का कारण।

वस्तुतः हम अपने दांतों से अपनी कब्र खोदते हैं। बहुत समय तक जब आहार संबंधी भूलें बनी रहती हैं, तब परिणाम स्वरूप शरीर में अनेक दूषित पदार्थ इकट्ठे हो जाते हैं, जब वे पाचक यन्त्रों पर अपना प्रभाव डालते हैं, तभी पुराना अजीर्ण रोग बनता है।

अजीर्ण उपचार क्रम

सर्व प्रथम सब रोगों की चिकित्सा का सूत्र स्मरण करें—"व्रत-प्रायश्चित्ताभ्यां सर्वरोगनिराकरणम्" व्रत एवं प्रायश्चित के द्वारा

सभी रोगों का इलाज व्रत लें। उन सब वस्तुओं के त्याग का, जो रोग के कारण-भूत बने हैं, दृढ़ संकल्प करके चिरकाल के लिये छोड़ दें, जल लेकर विधिवत् संकल्प लें—इतने समय तक मीठे का त्याग, पक्वान्न का त्याग, चायादि का त्याग, अमुक मात्रा में आहार का त्याग आदि।

इसके साथ ही करना है अपनी भूलों के प्रति प्रायश्चित—पाप-प्रक्षालन जो भी अतिमात्रा में मीठे का सेवन किया, पक्वान्न चायादि विकारी पदार्थों के परिणाम स्वरूप शरीर में जो विषाक्त-स्थिति बन गई है उसका शीघ्रातिशीघ्र संशोधन। जिसका प्रकार है प्रसन्नता पूर्वक नाक भौं सिकोड़ कर नहीं कड़वे द्रव्य का श्रद्धा से सेवन। आरोग्यामृत का सेवन करें। सेवन विधि—प्राकृतिक उपकरण विधि में देखें।

इसके साथ ही तीन-चार बातें मुख्य रूप से करनी हैं—(१) एनिमा चार्ट द्वारा छः-सात दिन तक उदर शुद्धि। (२) सारे पेट पर दिन में दो बार गरम ठंडा सेंक पन्द्रह-पन्द्रह मिनट का। संभव हो दो टब हों तो गरम-ठंडे टब में बैठा जाए एक साथ। पहले ३ मिनट गरम पानी भरे टब में, तुरन्त बाद ही ठंडे पानी के टब में १ मिनट के लिए, इस प्रकार चार-पाँच बार एक समय में। एनिमा के पूर्व गर्म-ठंडा पेट का सेंक विशेष हितकर है।

आहार लेने के पूर्व गर्म पानी में नीबू रस मिला आध घंटा पूर्व पीना। भोजन के तुरन्त बाद रबड़ की थैली में गरम पानी भर कर या बोतल में ही गर्म पानी भर उदर की सेंक पौन घंटा तक। इससे रक्त बहाने वाली नलियां फैलती हैं, प्रचुर मात्रा में पाचक रस निकलने के कारण आमाशय की परिपाक क्षमता भली प्रकार बढ़ती है।

ऐसे रोगी की त्वचा, रूक्ष निस्तेज हो जाती है अतः कुछ दिनों तक सूर्यस्नान या भाप कुछ मिनट ही देकर ठंडे पानी की मालिश किंवा तौलिया स्नान दिया जाना चाहिये। सप्ताह में एक दिन पूरे

शरीर का गीला लपेट दिया जाये, चादर के भीतर पिंडलियों के बीच तथा बगल में गर्म पानी की बोतलें सजा दें, ताकि तेजी से पसीना आजाए। ऐसा करने से रोमकूपों द्वारा विषाक्त पदार्थ बाहर निकलते हैं। रक्त नलियां दोषमुक्त होने लगती हैं। विकार ने आंत को ही एक मार्ग बना रखा था इस प्रकार के उपचार द्वारा उस मार्ग का परिवर्तन करना है, रोमकूप खुलने से रोग की दिशा बदल जायेगी।

दिन में भोजन के अतिरिक्त समय में थोड़ा-थोड़ा पानी पियें "मुहुर्मुहुवारिपिवेद भूरि" बार-बार थोड़ी मात्रा में जल पीना चाहिये ताकि प्रकृति पेशाब के मार्ग से विकार को बाहर निकाले।

रोगी को प्रतिदिन मालिश करना विशेष हितकर है। मालिश के समय नाभि के चहुं ओर दाएं से बायें ओर को मलें हल्के हाथ से। उदर की मालिश बड़ी हितकर होती है। खाली समय में पेट को गीली लपेट दें।

इन सारे उपचारों का पूरा लाभ उठाने का सुन्दर प्रकार होगा विधिवत् उपवास। यह तो आप मान ही रहे हैं जो कुछ खाया जा रहा है वह केवल आदतन। न तो भूख निवृत्ति के लिये ना ही शारीरिक आवश्यकता के लिये। शरीर को खाया लग नहीं रहा, ना ही खाने के लिए भूख ही लग रही है, फिर खाया ही क्यों जाये। छोड़ दें खाना और फिर वही खाएं जिसे पचाएं उतना ही, जिस से रस रक्त बनाएं। साधारण सी बात है पहले दो दिन का रसाहार कर तीन दिन का उपवास तो कर ही जाएं।

हैजा (संस्कृत–बिसूचिका, अंग्रेजी-कालरा)

यह एक तीव्र रोग महाभयंकर मारक रोग है। अजीर्ण के परिणामस्वरूप यह होता है। जिस अजीर्ण में सुई चुभाने जैसी पीड़ा करती हुई वायु स्थित हो उसे विसूचिका-हैजा जानें। जैसा कि लिखा है—

सूचिमिव गात्राणि तुदन् संतिष्टतेऽनिलः।
यस्याजीर्णेन सा वैद्य विसूचीति निगद्यते॥

अन्य लक्षणों के साथ पीड़ा का मुख्य रूप यह बताया कि सूई चुभने जैसा दर्द होना। पीला पतला दस्त, बाद में चावल के धोवन के समान पतला सफेद दस्त, बार-बार कै, मतली, प्यास, उदर-शूल, भ्रम, शरीर में विशेषकर जोड़-२ में दर्द, ऐंठन और पीड़ा, जम्हाई, विवर्णता, हृदय और सिर में पीड़ा, शरीर का ऊपर से ठन्डा होना, शरीर पीला पड़ जाना, आंखों का भीतर गड्ढे में धंस जाना। कभी-कभी साथ में ज्वर भी रहना है।

ऊपर बताई गई लक्षणों की श्रेणी को मुख्य तीन भागों में बांट सकते हैं—

(१) आक्रमण अवस्था—साधारण पतले दस्तों के साथ कमजोरी जान पड़ती है, मामूली कै भी होती है।

(२) पूर्ण विकसित-अवस्था—पूर्ण वेग के साथ दस्त और कै, हाथ पैरों में ऐंठन (बांयटे), प्यास, बेचैनी, और आंखें भीतर धंसना। पेशाब बन्द हो जाना।

(३) शीतांग-अवस्था—इस भयानक दशा में रोगी का शरीर बर्फ के समान ठंडा हो जाता है, नाड़ी छूट जाती है, ललाट पर पसीना आता है, दस्त और प्यास की अधिकता के कारण कै अधिक होती है। जब यह भयंकर दशा होती है तब शीघ्र मृत्यु हो जाती है। दांत, होठ, नख काले पड़ जाते हैं।

सुधार की दशा—ज्यों ही रोग में परिवर्तन होता है तो सुधार की दशा आती है—(१) कुछ देर शान्त रह कर रोगी का शरीर गर्म होने लगता है। पेशाब की थैली में पेशाब जमा होने लगता है या थोड़ा पेशाब हो जाता है।

इस रोग में अधिक दस्त होने के कारण मूत्र बनकर मूत्राशय में नहीं आ पाता और साथ ही भीतरी गर्मी से वस्तिस्थान शुष्क हो जाता है। इसलिये जब तक पेशाब होना पुनः चालू न हो जाए इसे अच्छा हुआ न समझें।

हैजा के भेद :—कै, दस्त एक साथ हो गये, अन्यान्य लक्षण भी दिखाई दिये इतने से भयभीत हो जाने की बात नहीं। यों तो अकेला भय ही आंतों की स्थिति को बिगाड़ने का बहुत बड़ा कारण बन जाता है। अतः हैजा का नाम सुनते ही रूप देखकर विवेक करना है कौन सा हैजा है।

(१) अजीर्ण से होने वाला हैजा—सामान्य हैजा माना जाता है। सभी लक्षण आकर भी चले जाते हैं रोगी ठीक हो जाता है। एक दो दिन की भूल या असंयम नहीं, चिरकाल से खानपान की भूलों के परिणाम स्वरूप चला आ रहा अजीर्ण और उस अजीर्ण के कारण शरीर में जो विजातीय द्रव्य संचित हुआ रहता है, जब कोई बाह्य निमित्त गर्मी या गर्म आहार भारी भोजन मिला कि उस संचित मल में उफान आ जाता है। तब वह विकार शरीर के अन्य भागों से चल-कर उत्सर्ग मार्गों विशेषकर पेडू की ओर बड़ी तीव्र गति से जाने लगता है, साथ ही (मेदे) आमाशय में उफान की दशा होती है, यही हैजा कहा जाता है। दूषित जल, दूषित फल वा दूषित खाद्य इसे बनाने में सहायक होते हैं। ऐसा हैजा अधिकतर गर्मियों के दिनों में होता है। गर्मी अधिक होने से खाना जब ठीक नहीं पचता, खाने वाले बरात में पकवान खाते ही हैं। वैसे लोगों को प्रायः हैजा होता है।

(२) भयंकर कठिन कीटाणुजन्य हैजा—कीटाणु जनित हैजा अतिभयंकर होता है, घन्टे में रोगी को मार देता है। ६ से १० घन्टे के भीतर ही प्रायः रोगी की मृत्यु हो जाती है जबकि सफल उपचार नहीं होता। कै वा दस्त के लिये रोगी को जरा भी बल नहीं लगाना पड़ता, विना इच्छा और तकलीफ के वमन होते हैं। शरीर की गर्मी एकदम कम हो जाती है। एक दो दस्त होने से ही रोगी अत्यन्त दुर्बल हो जाता है। ऐसा हैजा प्रायः रात्रि के पिछले प्रहर में होता है। ऐसे हैजे के कारण कीटाणु को 'कामा' नाम से कहा जाता है। भले ही इस प्रकार के कीटाणु इस रोग के कारण माने जाते हैं, तो

यह भी मानना होगा ऐसे कीटाणु भी वहीं तेजी से पनपते हैं, जहां पहले ही विजातीय द्रव्य संचित होता है।

(३) तीसरे प्रकार का हैजा—इसे ड्राइ कालरा, सूखा हैजा कहा जाता है। इसमें शरीर की बढ़ी हुई गर्मी के फलस्वरूप कै, दस्त और पेशाब बंद हो जाता है। इच्छा होने पर भी नहीं होते। पेट फूल जाता है, बेचैनी और घबराहट बढ़ जाती है। शरीर में और विशेष रूप से जोड़ों में ऐंठन होने लगती है। कभी कभी ऐसी हिचकी आने लगती है जो दम टूटने के साथ ही टूटती है। इस प्रकार हैजे वाले शरीर के भीतर के मलों को बाहर निकलना कठिन हो जाता है, इस कारण बड़ी परेशानी से प्राणांत होते हैं।

तात्कालिक उपचार

ऊपर हमने हैजे के तीन भेद पाये, उन तीनों के लिये सर्वप्रथम उपचार है—वमन और एनिमा। सेर डेढ़ सेर गुनगुना पानी लें, थोड़ा नमक मिला रोगी को पिला दें और कंठ में अंगुली डाल वमन करा दें। एनिमा जल में नींबू का रस या (पोटाशियम परमेगनेट) लाल, दवा दो-तीन कण अथवा नीम पत्तियों का उबला पानी किसी एक का एनिमा करवा दें। दिन में तीन चार बार एनिमा करवा दें।

उपचार रहस्य—ऊपर बताए वमन और एनिमा को सुन प्रायः सभी चौंक जाएंगे, यह कैसा उपचार रोगी को पहले ही वमन वा दस्त हो रहे हैं उन्हें बंद करना चाहिये न कि बढ़ाना। प्रत्यक्ष में रोगी वा परिचारक सभी ऐसा ही सोचेंगे वा चाहेंगे पर थोड़ा चिंतन करें यदि अजीर्णजन्य हैजा है, तो मेदे में वा आंतों में एक सड़ांद हो रही है, उफान आ रहा है, उफान ला-२ कर प्रकृति उस विकार को बाहर उड़ेलना चाहती है, उसकी इस चेष्टा को समझें और सहायक बन जायें। जिस काम को उसने रह रह कर थोड़ी-२ देर बाद करना है और जिसका प्रभाव रोगी के मन पर बुरा पड़ता है उसे आप एक

बार कर दें। सड़ांद, उफान कम हो जायेगा। रोगी चैन पायेगा। सड़ने वाला विकार एक ही बार में ढेर सा बाहर हो जायेगा। ऐसे ही मान लो 'कामा' नामक हैजे का कीटाणु जल, फल, अन्य खाद्य वस्तु अथवा वायु द्वारा रोगी के मेदे में गया वहां वह तेजी से पनप रहा है पर ज्यों ही वमन व एनिमा करते हैं तो उस कीटाणु की बढ़ती संतति को रोक देते हैं।

सूखे हैजे में तो इन दोनों उपचारों के द्वारा आप विकार को शरीर से बाहर करने में कृतकार्य हो जाते हैं। इसलिये निर्भय हो रहस्य को समझ विश्वासपूर्वक दोनों प्रयोग करें। विश्वास के लिये योग्य तर्क वा युक्ति की बड़ी अपेक्षा होती है, अतः उसे भी अब ठीक से समझें। बात यों है हैजे में आंतों का स्वाभाविक खट्टा रस समाप्त हो जाता है इसलिये सफेद दस्त होते हैं। नीबू की खटाई उस रस को उत्तेजित करती है। वस्तुतः शरीरस्थप्रकृति विकार को बाहर करने में तुली हुई, उस जहर का निकल जाना ही हितकर है, उसे दबाने का तो कोई अर्थ नहीं।

वमन व एनिमा के द्वारा शरीर का यथेष्ट विष एवं हैजा के अनगिनत जीवाणु बाहर निकल जाएंगे और शरीर हल्का मल रहित हो जायेगा। सूखे हैजे में तो थोड़ी-२ देर बाद बार-२ एनिमा देना चाहिये।

वमन-एनिमा के बाद रोगी को गर्म जल पिला कर वाष्पस्नान कराना चाहिये अथवा उष्णपाद स्नान करा दिया जाये। पसीने के तुरंत बाद १० मिनट का कटिस्नान देना चाहिये। पैरों को गर्म पानी में रखते हुये टब से निकाल कम्बल ओढ़ा लिटा देना चाहिये ताकि शरीर में पुनः गर्मी आ जाये। इसी उदरस्नान की क्रिया को दोहराते रहें अथवा हर १० मिनट पर पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी रखी जानी चाहिये। बहुधा मिट्टी की पट्टी देते ही पेशाब उतरने लगता है। इन उपचारों को करते हुए यदि रोगी को ज्वर आ जाये तो समझो कि खतरा टला।

ऊपर बताये उपचारों से यदि दस्त बंद न हो रहें हो तो रोगो के पेट को गर्म सेंक देकर पेड़ू नहान या मूत्रेन्द्रिय स्नान करा दें १० मिनट के लिए या टब के अभाव में मिट्टी पट्टी ही रखें, साथ ही रोगी को गरम कपड़ों में लपेट लिटा दें अथवा एक नम्बरी ईंट आग में गरम कर ऊनी वस्त्र में लपेट गुदा के नीचे रख दें। थोड़ी देर बाद रोगी को आध घंटा के लिये मूत्रेन्द्रिय स्नान करा दें। बाद में गरम कपड़ों में लपेट गरमी लाने का यत्न करें। इस क्रिया को आवश्यकतानुसार कई बार करना चाहिये।

हाथ पांव की ऐंठन दूर करने के लिये गर्म पानी में डूबो रखें बाद में निकाल, सहने योग्य गरम पानी में भिगो निचोड़ उसमें लपेट ऊनी वस्त्र लपेटना चाहिये अथवा सूखी मालिश।

ठंडे हाथ पांव की दशा में भी ऊपर बताई विधि करनी चाहिये। कमजोरी अधिक जान पड़े तो पीठ को सेंकना चाहिये। पेट में दर्द को हटाने के लिये तथा पेट के अफारा को हटाने के लिये पेट को सेंक कर भीगी पट्टी का लपेट दे ऊनी वस्त्र लपेट दें।

पानी को खूब औंटा लिया जाये पहले-२ गरम-२ जल पीना चाहिये। नीबू रस व प्याज रस मिलाकर, बाद में इच्छानुसार गरम-ठंडा जैसा चाहें औंटाये हुए जल को पीते समय बरफ में रख ठंडा कर पियें। जब तक दशा सुधर न जाये नींबू, प्याज जल के अतिरिक्त कुछ न लें। तीन दिन नीबू जल पर उपवास बाद में संतरा रस दिया जाये, पानी ढेरसा पिलाया जाना चाहिये। शनैः-२ हल्के सुपाच्य आहार की ओर आया जाये। यदि संभव हो तो योग्य डा० की सहायता से शिरावेध द्वारा ग्लूकोज का पानी चढ़वा देना चाहिये। ग्लूकोज का पानी स्वाभाविक मिश्री का पानी होता है, कोई जहरीली दवा नहीं है। हैजा की एक सफल चिकित्सा है।

वैज्ञानिक विद्वान मानते हैं हैजे में कै वा दस्तों द्वारा शरीर का जलीय पदार्थ सब निकल जाता है। जल का अंश कम होने के कारण

खून बहुत गाढ़ा हो जाता है। रक्त गाढ़ा हो जाने से सारे शरीर में चक्कर लगाना कठिन हो जाता है। रक्त-संचार के अभाव में शरीर के अवयव ठंडे पड़ने लगते हैं। गर्मी कम होते-२ रोगी प्राण त्याग देता है। तब सर्वोत्तम चिकित्सा यही है गाढ़े रक्त को पतला किया जाये। हाथ की धमनी द्वारा रक्त में जल मिलाकर रक्त को पतला किया जाता है। ग्लूकोज का चढ़ाना इस दिशा में सफल प्रयोग माना जाता है।

यदि ये सारे उपचार न किये जा सकें तो वमन कराने के बाद अर्क कपूर लेकर ५ से २० बूंद तक चीनी में मिला हर ५-५ मिनट पर देना पड़े दें। घंटा या फिर दो घंटा के अन्तर से दें। अर्क कपूर लेकर पानी न पिएं। अर्क कपूर एक साथ हैजा, गर्मी, दस्त, कै, पेट दर्द पर प्रभाव दिखाता है।

अमृतधारा ५-७ बूंद चीनी बताशे में डाल खिलाएं। अमृतधारा को स्वयं तैयार कर लें—कपूर, फूल पिपरमिण्ट तथा अजवायन सत् बराबर मात्रा लेशीशी में डाल मुंह बंद कर दें, थोड़ी देर में अमृत-धारा बन जायेगी।

यदि पास में बहता जल हो, तालाब, नदी हो तो रोगी को उस में बैठा या लिटाकर एकाध घंटा रखना हैजे का सफल प्रयोग है।

हैजे से बचने के उपाय

यों तो सामान्य रूप से नियमों का पालन सदैव किया जाये, विशेषरूप से हैजे के दिनों में अवश्य ही ध्यान रखें।

(१) अजीर्ण कभी न होने दें। (२) जहां हैजे का रोगी कै, दस्त करता हो उस मल को सावधानी से जला देना चाहिये अन्यथा वहां श्वास लेने से बचें। कीटाणुओं के प्रवेश का भय है ही। (३) भीड़-भाड़ मेले-ठेले में समझ सोचकर खाने की चीजों का प्रयोग करें। (४) सड़े-गले फल वा सब्जियों से बचें, बासी खाद्यों से बचें। (५) ऐसे कुएं का पानी प्रयोग में न लें जिसके आसपास गंदगी हो या जिसका

पानी गंदा हो। (६) गर्मी के दिनों में एक बार में अधिक पानी न पियें। (७) जब लू चलती हो तो बिना पानी पिये कड़कती धूप वा लू में बाहर न निकलें। जब वैसी धूप वा लू में बाहर जाना हो तो जेब में प्याज साथ में रखें। (८) भोजन के बीच अधिक पानी न पीकर अधिक आवश्यक जान पड़े तो थोड़ा जल पियें, भोजन के एक घंटा बाद ही जल पीना आरम्भ करें। (१०) भोजन ठूंस-२ कर न किया जाये। जो भी आहार लिया जाये वह सादा ताजा एवं सुपाच्य हो। (११) प्रतिदिन प्रातः ऋतु अनुसार ताजे ठंडे या गरम जल में नीबू का रस मिला पीना हितकर है उस से रक्त शुद्ध बना रहता है। प्याज, पौदोना, नींबू की चटनी सेवन करना हितकर है। (१२) खुली साफ शुद्ध हवा वा धूप में रहना। (१३) सोने वाले स्थान में हवन करते रहना चाहिये, हवन की पवित्र कीटाणुनाशक गैस से शुद्ध बनाए रखना, अथवा समय २ पर नीम-पत्तियाँ, गोरखमुंडी, गूगल जैसी वस्तुएं जलाकर शुद्ध वायु करते रहना चाहिये। (१४) ज्यों ही हैजे की जरा सी सूरत दिखाई दे तब से लेकर पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्ति तक सदैव भारी दुष्पाच्य भोजन से बचते रहना।

निषेधात्मक ध्वंसक विचारों से सदैव बचे रहें—भयभीत न हों, दृढ़ता एवं विश्वास व आशा से काम लें क्योंकि अकेला भय ही रस-वाहक नस-समूह को सुखा देता है। रक्त प्रवाह मंद हो जाता है। जीवन धारा सुस्त हो जाती है। डर शरीर के प्रत्येक पुट्ठे को निकम्मा कर देता है। रक्त प्रवाह पर बडा गहरा प्रभाव पड़ता है। भय हमारा महान् शत्रु है। भय और चिंता दोनों ही हमारे भीतर संदेह और शंका की सृष्टि करते हैं जिनके कारण हमारा जीवन कंटकाकीर्ण हो जाता है। संदेह से सब चीजें विकृत रूप धारण कर लेती हैं।

जलोदर में उपवास का चमत्कार

सन् ६० की बात होगी, समालखा जि० करनाल में श्री रामसिंह

जी ने एक रोगी को हमारे आश्रम में ला प्रविष्ट किया। श्री रामसिंह जी ने स्वयं ही अच्छे अनुभवी प्राकृतिक चिकित्सा में दृढ़ आस्था रखने वाले थे पर अपने काम में व्यस्त रहने के कारण स्वयं रोगियों के प्रयोग करने में पूरा समय न दे सकते थे। मेरे पास जब वह देहाती जलोदर का रोगी लाया गया तब उसके पूर्व वह एक दो बार पेट में से पानी निकलवा चुका था। मेरे लिये यह पहला नया रोगी था। केवल सिद्धांत ज्ञान के आधार पर ही मैंने उसे स्वीकार किया, या श्री रामसिंह जी का साहस वा अनुभवी सुझाव था। प्राकृतिक चि० के प्रयोग चले, गर्म-ठंडा सेंक, मिट्टी की पट्टी, शाक फलाहार खाट पर उल्टा लिटाकर पेट को भाप दिलाना आदि। इन सबके अतिरिक्त एक विशेष प्रयोग चल रहा था। वह था (गव्य) गोमूत्र वा गौ का मट्ठा सममात्रा में मिलाकर पिलाना। उसका क्रम था प्रथम दिन ३ तोले गो मूत्र तीन मट्ठा मिला पिलाया गया, दूसरे दिन ४-४ तोले दोनों चीजें, तीसरे दिन ५-५ तोले, इस प्रकार क्रम से तोले २ की मात्रा से बढ़ाया जा रहा था। इन सारे प्रयोगों द्वारा कुछ सामान्य अन्तर आया जो सन्तोषजनक न था। तब प्राकृतिक चिकित्सा के ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया जाये अर्थात् उपवास करने का सुझाव श्री रामसिंह जी प्रा० चि० भक्त ने दिया। पर मुझे साहस नहीं हो रहा था ऐक कमजोर रोगी को उपवास कराया जाये। पर श्री रामसिंह जी का सुझाव था। रोगी बड़ी बहादुरी से बोला— "कोई बात नहीं मुझे उपवास करायें यदि शरीर छूटता है तो छूट जाये, मेरा बाप यहां है ही ले जाकर श्मशान में फूंक देगा आप न घबरायें।" उसकी दृढ़ता देख मैंने स्वीकृति दे दी। रोगी तो वर्षों से तंग आया हुआ था, जीवन का रस ही समाप्त हो गया था। उपवास कराया गया, संभवत; एक सप्ताह का उपवास हुआ कि रोगी का पेट पिचक कर सामान्य रूप में आ गया। उसके बाद रसाहार फल-

शाक का आहार भी चला जबकि लोगों को संदेह था, कहते थे क्या हुआ उपवास से पेट पिचक गया तो ज्यों ही खाना आरम्भ होगा तब पेट पुनः बढ़ने लगगा। हमने देखा कितने दिन तक हमारे आश्रम में रहा फल-शाकाहार किया पर कोई विपरीत परिणाम नहीं देखा। घर जाने पर भी उसे वैसे आहार का सुझाव दिया गया बहुत दिन तक।

जलोदर या (ड्राप्सी)—जब बहुत समय तक अजीर्ण बना रहता है, फलस्वरूप यकृत, पित्ताशय, गुर्दे और दिल कमजोर हो जाने के कारण अपना काम ठीक नहीं करते, रक्त ही नहीं बनता। दूसरी ओर शरीर में जो रक्त पहले मौजूद होता है वह भी शरीर स्थित विजातीय द्रव्य को अधिकता के कारण पिघल कर पानो हो जाता है, जो शरीर के किसी भाग के तन्तुओं या गह्वर में जमा होकर शोथ बन जाता है। यह जल संचय शरीर के किसी भी भाग में हो सकता है पर जब यह उदर में जमा होता है तब इसे जलोदर (उदर में जल होने से) कहा जाता है पेट में काफी पानी हो जाने से वह फूल जाता है। रोग की बढ़ी दशा में मुंह हाथ वा पैरों में शोथ हो जाता है। ज्वर भी रहने लगता है।

उपचार—जैसा कि मैंने जलोदर के रोगी का उदाहरण दिया सारे उपचार किये जाने पर भी कोई विशेष लाभ न देखा, जब उपवास कराया तभी पूर्ण लाभ पाया। अतः शक्त्यनुसार पूर्ण उपवास बिना पानी पिये रहा जाये तो पहले एक दो दिन पानी भी न पिया जाये, बाद में नींबू रस पानी पर उपवास पांच-सात दिन। उपवास के बाद फल वा सब्जियों के रस, मट्ठा गौ का हो तो बहुत अच्छा, दही का पानी। गोमूत्र में सममात्रा मट्ठा मिला लिया जाये प्रतिदिन थोड़ी-२ मात्रा बढ़ाते जायें उसी में या पृथक से नौशादर एक दो रत्ती मिला लें।

खाट पर औंधा लिटा, पेट पर भाप से पसीना दिला मिट्टी का

पलस्तर पौन घंटे से एक घंटे तक। धूप में पेट को रख, पीले कांच का प्रकाश दस पन्द्रह मिनट के लिये।

मकोय का रस पिलाना, शाक खिलाना, मकोय पीस गर्म कर पेट पर लेप करना हितकर है। दूध को फाड़ कर उसका पानी पिलाना अधिक मूत्रल होता है।

चिंतन का एक प्रकार—जबकि जिगर, गुद, आंतें ठीक काम नहीं करते तब कुछ दिन के लिये इन्हें कोई काम नहीं दिया जाये, ऐसा भोजन न दिया जाये जिसे पचाने में श्रम पड़े। साथ ही मिट्टी की पट्टी द्वारा मल को ढीला कर साप्ताहिक एनिमा क्रमशः लें, आंतों में चिपके मल को निकाल दिया जाये। पेट पर पसीना दिला त्वचा को सतेज कर दिया जाये ताकि वह अपने भीतर के विकार को रोमकूपों की राह से पसीना बाहर निकालने में सक्षम हो जाये। आलूबुखारे का रस देना चाहिये, ताजे न मिलें तो सूखे पानी में भिगोकर उनका रस दें। उसी में सूखे आंवले भिगोकर दिया जाना चाहिये। जब दशा सुधर जाये तो नियमित भ्रमण कुछ योगासनादि का अभ्यास करना चाहियें ताकि पेट के अवयव ठीक काम करने लगें।

पेट दर्द

यों तो पेट दर्द, सिर दर्द या शरीर से किसी अन्य भाग का दर्द अपने आप में रोग नहीं है, किसी छिपे रोग का सूचक है। दर्द के रूप में वह आकर प्रकट करता है कि शरीर के अमुक भाग में विकार संचित है, विजातीय द्रव्य इकट्ठा हो चुका है। उस दर्द द्वारा सूचित किये जाने पर भी यदि आप नहीं चेते, केवल उस दर्द को ही दूर करने का ढंग स्वयं या डा० से मिलकर निश्चित कर लिया, एस्प्रो एस्प्रीन या वैसी अन्य औषधियों के साथ ताल मेल बैठा लिया तो निश्चित जानें आपने एक भयंकर रोग को निमन्त्रित कर दिया। आप ने केवल सूचक को संदेश-वाहक को ही हटाया न कि मूल रोग को

जिसकी सूचना लेकर वह सामने आया था। इसलिये हम रोगी क्यों बने रहते हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में सूत्र है -

"भोगवाद—औषधवाद समन्वये शारीरिक दुःख स्थैर्यम्"

भोगवाद औषधवाद का तालमेल ही शारीरिक दुःखों का कारण, रोगी बने रहने का कारण है और इसी ताल-मेल मिलाने में ही आज का प्रसिद्ध चिकित्सक सफलता पाना चाहता है। मेरा दमा, मेरा गठिया, ब्लड प्रेशर वा डायब्टीज अमुक इन्जैक्शन अमुक गोली से काबू में बना रहता है। बस इतने में सन्तुष्ट है रोगी। इस मेल मिला देने में ही कुशल व मशहूर हो रहा है डाक्टर। बस हो गया इलाज दवा खाते चलो जीवन की गाड़ी चलाते चलो। अमुक गोली या दवा से हो गया विवाह, उसके बिना जीवन चलने का नहीं, वह जीवन संगी बन गया।

पेट दर्द के कारण—(१) पाकस्थली या आंतों में सूजन व घाव होना। (२) पेडू में बहुत दिनों से विकार एकत्र होने से। (३) पाकस्थली (मेदे) में या आंतों में गैस (वायु) भर जाने से। (४) आमाशय वा आंतों में घाव—आमाशय के घाव उसकी भीतरी दिवारों पर होते हैं जिन्हें (गैस्ट्रिक अल्सर) कहते हैं। इन घावों के कारण पेट में धीमा २ दर्द बना रहता है जो भोजन करने के बाद बढ़ जाता है। अथवा किसी को खाने के पूर्व ही बिना खाये खाली पेट होता है कुछ खा लेने के बाद ठीक हो जाता है। नाभि में थोड़ा ऊपर भीतर की ओर यह दर्द होता है, दबाने से बढ़ता प्रतीत होता है। मतली वा कै की प्रवृत्ति होती है। कै हो जाने पर रोगी को कुछ आराम मिलता है। कभी-२ खून की कै भी होती है जिसका रंग कुछ काला होता है।

इसी प्रकार जब दुष्पाच्य भारी आहार लेने पर नहीं पचता, आंव बन जाती है, वह भी दर्द का कारण बनती है।

यों तो रोग को ठीक से समझ लेने पर उसका ठीक समझदारी

से उपचार होना चाहिये। भले ही तात्कालिक उपचार से वेदना को हटा दिया जाए, पर स्थायी चिकित्सा चिरकाल तक चलनी चाहिये।

सामान्य रूप से साधारण आकस्मिक होने वाले पेट के दर्दों को दो भागों में विभक्त कर दें, एक नाभि से ऊपर मेदे से सम्बन्धित दर्द दूसरा नाभि से नीचे आंतों में होने वाला दर्द।

मेदे में होने वाले दर्द में प्राय: दुष्पाच्य आहार अथवा उससे तैयार हुई वायु कारण बन रही होती है। जब ऐसा कारण दिखाई दे तब नींबू रस गर्म पानी में मिला नमक मिला पिलाने से दर्द में आराम आएगा। अथवा सोडा बाईकार्ब खाने वाला सोडा भी मिलाकर पिलाएं। थोड़ी अजवायन पीस नमक मिला खिलाएं या नींबू रस पानी संग पिलाएं। ऐसे ही अमृत धारा देकर लाभ पा सकते हैं। इस प्रकार के किसी पाचक चूर्ण जैसे हिंग्वाष्टक, लवणभास्कर या अन्यान्य चूर्णों से। पर यदि इन चूर्णों व औषधियों से आराम आता न दीखे तो बढ़िया प्रकार यह होगा कि गर्म पानी कर नमक मिला खूब ढेर सा पिला कर गले में अंगुली डाल वमन करा दें, पानी बाहर आयेगा, वह अपने साथ दर्द के कारण उस दुष्पाच्य आहार को भी बाहर कर देगा जो वहाँ पड़ा-सड़ रहा था वायु बना रहा था। वमन करने के बाद चाहें तो गर्म नमकीन या नींबू रस मिश्रित जल पियें।

त्रिफला वा राई मिला गर्म पानी के साथ देने से दर्द ठीक होगा अथवा एक तोला जामुन सिरका पानी मिलाकर पिलायें।

इसी प्रकार यदि नाभि प्रदेश या नीचे आँतों में दर्द हो रहा है तो हलासन करा दें अर्थात् लेटकर या टांगों को ऊपर उठा सिर की ओर ला पृथ्वी पर तुरन्त टिका दें। जितनी देर रुक सकें रुकें एक बार या दो-तीन बार ऐसा करने से तुरन्त लाभ होगा। इस प्रकार दर्द का कारण वह विकार आंव या अन्य वायु वहां से सरक जायेगी दर्द ठीक हो जायेगा।

एक महिला जिसे रात भर नाभि के नीचे के प्रदेश में दर्द बना

रहा देहात था, कोई अन्य डा०, वैद्य हकीम न था। जो सामान्य उपचार किये कोई लाभ ही न हुआ, सवेरे ज्यों ही मेरे पास लाई-गई बस केवल हलासन कराते ही तुरन्त दर्द दूर हो गया।

पेट में कहीं भी दर्द हो केवल पेट की बात ही क्या शरीर के किसी भाग में दर्द हो रहा हो अन्य किसी उपचार के काम न करने पर अथवा उपलब्ध न होने पर केवल जलोपचार ही अपना चमत्कार दिखाता है जिसका प्रकार है गरम ठंडा सेंक। जब विजातीय द्रव्य उद्दीप्त हो स्नायुओं पर अपना अनावश्यक दबाव डाल रहा होता है तभी दर्द प्रकट होता है। कभी-२ तो केवल ठंडे पानी में भीगी पट्टी लगाने से अनावश्यक गर्मी दूर हो जाती है। दर्द दूर हो जाता है अथवा शैत्य से प्रभावित स्थान केवल पानी में भीगी पट्टी के बार-२ सेंक से ही ठीक हो जाता है या एक बार गरम दूसरो बार ठंडा क्रमशः गरम फिर ठंडा बराबर समय के लिये अथवा गरम ठंडा आध समय के लिये किये जाने पर दर्द देखते-२ ठीक हो जाता है। गरम-ठन्डे प्रयोगों से ज्यों ही रक्त संचार तेज हो जाता है स्थिर विकार उखड़ जाता है।

केवल गरम-ठंडे सेंक से भयंकर पेट दर्द हटा

संभवतः सन् १९३७ की बात होगी वाराणसी में मीरघाट पर उदासीन संस्कृत विद्यालय में श्री स्वा० योगन्द्रानंद जी के पेट में कितने दिनों से दर्द चल रहा था। दर्द चौबीसों घंटे बना रहता था। क्या कारण था ? क्यों दर्द बना हुआ था इस सब का तो ज्ञान नहीं, यह भी नहीं पूछा डाक्टर ने क्या कहा। केवल नये ज्ञान का अभिमान था। संस्कृत अध्ययन के साथ ही साथ प्राकृतिक चिकित्सा का विद्यार्थी बना हुआ था। प्रयाग के प्राकृतिक चिकित्सालय से लौटकर गया, देखा अपने साथी को मुर्झाया चेहरा खिन्न बदन, पूछने पर जाना कितने दिन हो गये हैं पेट दर्द ही ठीक नहीं हो रहा। मुझे तो

अपने नूतन ज्ञान का बड़ा अभिमान था मैं समझ रहा था यही सर्वश्रेष्ठ ज्ञान वा उपचार है। मैंने बड़े विश्वास से कहा एक घंटे के भीतर दर्द ठीक हो जायेगा, यदि घटे में काबू न आया तो फिर जो कुछ आप सब को जचे करें। मैंने सामने घड़ी रख ली और लगा अपने विश्वास के बल पर गर्म-ठंडा सेंक करने. पौन घंटा हो पाया, मैंने पूछा तो जवाब मिला अब दर्द नहीं है। जिस दर्द को ठीक करने के लिये डाक्टर ने कितने दिन तक अनेक प्रयोग किये और ठीक नहीं हुआ वह केवल पौन घंटा के गर्म-ठंडे सेंक से ठीक हो गया।

पाकस्थली में घाव

हमारे शरीर की बाहरी त्वचा पर जैसे घाव हो जाते हैं वैसे ही पेट की भीतरी दीवार में जब घाव हो जाता है तब पाकस्थली का घाव कहा जाता है। यों तो सामान्य रूप से दर्द बना ही रहता है पर पेट खाली रहने की दशा में दर्द बढ़ा प्रतीत होता है, क्योंकि घाव के ऊपर जो स्नायु रहते हैं वे जब पाकस्थली के पाचक रस के संस्पर्श में आते हैं तब विशेष वेदना होती है। पाकस्थली में (अम्लत्व) खटास जितनी अधिक होगी वेदना भी उतनी अधिक होगी। नाभि के कुछ ऊपर छाती की हड्डी समाप्त हो जाने पर उस स्थान में दर्द होता है।

उपचार—साप्ताहिक अथवा रोगी कमजोर हो अर्ध साप्ताहिक एनिमा का प्रयोग कर पेट को बिल्कुल साफ कर लेना चाहिये तथा भविष्य के लिये भी ध्यान बना रहे कि पेट साफ रहा करे। इस विचार से दस्तावर औषधि का प्रयोग भूल कर भी न किया जाये। दस्त लाने वाले चूर्ण व दवायें अधिक घातक सिद्ध होती हैं। एनिमा केवल पेट को साफ ही नहीं करता अपितु भीतर के विष को धोकर बाहर निकाल देता है।

दूसरा मुख्य उपाय है पेट को पर्याप्त सेंक कर ठंडी पट्टी। दो तीन बार गर्म पट्टी का सेंक कर या गर्म रबड़ थैली ५-७ मिनट के

लिए रख एक मिनट के लिये ठंडी पट्टी का प्रयोग करना शीघ्र लाभ दिखाता है।

उल्टी आने से परेशानी होती है, अतः बर्फ चूसने से बर्फ का ठंडा पानी धीरे-धीरे सीप-सीप कर पीने से उल्टी रुकेगी। पर यदि इतने से उल्टी न रुके तब पेट पर कुछ तह की अच्छी ठंडी पट्टी रखकर विपरीत उसके पीठ की ओर रीढ़ पर गर्म सेंक दें, उल्टी बंद होने में शीघ्र लाभ होगा।

जिस रोगी को भोजन करने के बाद वमन होती है उसे आहार देने से पहले विशेष प्रकार से पेट की पट्टी करें, विशेष लाभ होगा। एक पतला कपड़ा लें उसे भिगो निचोड़ पेट व कमर के चहुं ओर लपेटें, उसके ऊपर रबड़ की गर्म थैली या कांच की बोतल में गर्म पानी भर रखें ऊपर ढांक दें। आध घंटे के बाद गम थैली को हटा दें, कपड़ा भीगा लिपटा रहने दें आध घंटे तक। बाद में उसे हटा जो आहार देना हो दें।

कांच निकलना

कब्ज रहने के कारण साथ ही गुदा की मांस-पेशियाँ कमजोर पड़ जाने के कारण शौच के समय जरा सा जोर लगाने पर ही गुदा का अन्तिम भाग बाहर निकल आता है जिसे अंगुलियों से पुनः भीतर करना होता है, यही कांच निकलने का रोग है।

उपचार—पेडू या गुदा पर दिन में दो बार मिट्टी की पट्टी रखें। कब्ज न रहे ऐसा आहार दिया जाना चाहिये। आटे में भी कुछ चोकर मिला कर सेवन करें अथवा चोकर को दूध में पका खीर बना किशमिश खजूर या फिर मीठा मिला खिलाएं। प्रातः शौच होने के बाद विपरीत करनी कराएं। विपरीत करनी—सीधे लेट कर पैर टांगें ऊपर उठा कर कुछ देर रखें दीवार के सहारे या वैसे ही। एक दो मिनट से आरम्भ कर ५-७ मिनट का अभ्यास कर लें।

हरी बोतल के सूर्यतप्त तेल की कपड़े की बत्ती गुदा मार्ग में

प्रवेश कर रात भर रखें। हरी वा नीली बोतलों का सूर्यामृत जल सममात्रा में मिला आध-आध छटांक की आठ मात्रा पीनी चाहियें।

बवासीर (अर्श या पाइल्स Piles)

मलद्वार के भीतर या बाहर जो शिराएँ हैं उनके फूलने या सूजने का नाम है बवासीर। गुदाद्वार के बाहरी बलि जब फूलती है तब बहिर्बलि की बवासीर और जब अन्तर्बलि फूली रहती है तब अन्तर्बली बवासीर कहलाती है। आरम्भ में भीतर अथवा बाहर खुजली अथवा जलन होती है, कभी दोनों नसों में एक साथ ही। खुजली वा जलन वाली जगह मटर सम या कुछ बड़ी गांठ हो जाती है जिन्हें मस्से कहते हैं जो आगे चलकर बढ़ जाते हैं। जब ये मस्से फूटते हैं तो खून निकलता है। इस प्रकार खूनी बवासीर तथा बादी बवासीर दो भेद माने जाते हैं। खूनी बवासीर प्रायः अन्तर्बलि की होती है। बादी बवासीर में बेहद दर्द होता है। कभी दोनों प्रकार की बवासीर एक साथ भी रहती है। भीतरी बवासीर मलद्वार के भीतरी भाग में एक इंच के भीतर रहती है जिसका ठीक पता भी नहीं लगता। मल त्याग के समय जब कभी काले रंग का खून बाहर आ जाता है, आगे चल इतना रक्त आने लगता है कि शरीर में रक्तहीनता ही दीख पड़ती है।

गुदा में शंख

चक्र के भीतर नाभि के पास चार अंगुल में तीन चक्र हैं। ऊपर के चक्र का नाम प्रवाहिणी है। यह मल, वायु आदि को बाहर निकालता है। बीच का चक्र मल वायु को छुड़ाता है। नीचे के चक्र की बवासीर साध्य, बीच की कष्टसाध्य, तथा भीतर ऊपरी चक्र में हो तो असाध्य मानते हैं।

बवासीर का कारण :—शरीर की विकृत दशा, जिसमें यकृत की विकृति, पेट का खराब होना, रक्त का दूषित हो जाना, साथ ही

कब्ज का होना । मुख्यतः शरीर अपने विकार का संशोधन करने के लिये मलद्वार को मुख्य रूप से साधन के रूप में अपनाता है तभी यह रोग होता है । यह एक सभ्य समाज का मुख्य रोग है क्योंकि जहां रक्तशोधक श्रम नहीं है, भारी आहार है, जहाँ बैठक अधिक है, शरीर से काम लेने की प्रवृत्ति नहीं है फिर वह चाहे साधक कोटि का व्यक्ति ही क्यों न हो । आहार का सम्यक् ज्ञान नहीं, उदर शोधक आहार नहीं लिया जाता । सुस्वादु, दुष्पाच्य हलुवा खीर, पक्वान्न, तली हुई चीजों के नाश्ते, पूड़ी पुरोठे, व्रत के नाम पर कूटू सिंघाड़े के फलाहारी पक्वान्न आदि के कारण कब्ज रहने लगता है । बैठक उसमें सहायक होती है । बराबर कब्ज के कारण आंतों में सड़न से गर्मी बढ़ जाती है, फलस्वरूप आंतों की झिल्ली कमजोर पड़ जाती है । वायु की प्रतिलोम गति हो जाती है । गुदा के पास की नसों के अंतिम छोर में दूषित रक्त इकट्ठा हो जाने से धीरे-धीरे (वदगोश्त) मस्सों की सृष्टि हो जाती है । हम अपने चिंतित सूत्रों के अनुसार कहेंगे—**"अविवेका-संयमयो योगः रोगाणाम् कारणम्"** आहारादि सम्बन्धी अविवेक और संयम रोगों का कारण है या—

"आसक्ति-अशक्त्योः समन्वयः रोगाणाम् कारणम् ।"

पचाने की शक्ति रही नहीं पर अधिक मात्रा में स्वादु आहार की आसक्ति गई नहीं—यह रोगों का कारण है। ये दोनों सूत्र अच्छे-अच्छे विद्वानों और साधकों में भी घटते हैं ।

अस्तु मुख्य कहे जाने वाले कारणों कब्ज, उदरविकृति, यकृत-दोष, रक्तदोष आदि के पीछे भी कुछ कारण कहना चाहिये । इनके बाद निमित्त कारण तो न जाने क्या-क्या बन जायेंगे उन्हें गिनाने, सुनने सुनाने में हमारी आस्था नहीं, जिनके साथ रोगारंभ की कहानी को जोड़ दिया जाता है ।

उपचार—ऐसे ही चिकित्सा के संबंध में जो कुछ लिखा जायेगा वह तात्कालिक लाभ की दृष्टि से शमनोपाय बताया जायेगा उसे ही

पूरी-२ चिकित्सा न मान लें। ऐसे भयंकर रोगों की चिकित्सा है "जीवन परिवर्तन"। अपनी चर्या आहार वा आहार के पीछे भी विचारपरिवर्तन। जब तक संयमी जीवन न बन जायेगा तब तक बवासीर की सफल चिकित्सा हुई न मानें। जो कारण ऊपर बताए गए हैं और उन कारणों के पीछे भी जिस कारण की ओर इशारा (इंगित) किया गया है उसे समझें व दूर करने का प्रयास करें बस वही सफल चिकित्सा है।

भले ही पाठक मेरे इस कथन के तात्पर्य को ठीक न समझते हुए पूर्णतया सहमत न हों। विपरीत इसके वे अनेक प्रत्यक्ष उदाहरण पेश करेंगे अमुक ने आप्रेशन कराया उसकी बवासीर चली गई। वापिस कभी उसने वह कष्ट देखा ही नहीं। साधारण लोगों की क्या कहूँ अच्छे २ चिकित्सकों ने हाथ टेक दिये और लिख दिया कि इसकी सफल चिकित्सा आप्रेशन ही है। श्री वैद्यनाथ धाम के योग्य सम्मान्य चिकित्सक वैद्यराज पं० रामनारायण शर्मा अपने "आरोग्य प्रकाश" में लिखते हैं :—"बवासीर की सर्वोत्तम चिकित्सा यही है कि योग्य डाक्टर द्वारा सब मस्से कटवा कर निकलवा दिए जाएं।" मैं आप्रेशन चिकित्सा को चिकित्सा ही नहीं मानता। आप्रेशन तो एक झुंझलाई हुई क्रिया ही कही जा सकती है। किसी को हम अपनी बात समझा नहीं पाते, समाधान नहीं करते, बस झुंझला कर दो तमाचे जड़ देते हैं उसे चुप करा देते हैं। आप थोड़ा सोचें तो सही जो बवासीर के कारण बताए गए, वे आप्रेशन कराने के साथ समाप्त हो गए क्या? रक्त शुद्ध हो गया, जिगर ठीक हो गया, पाचन प्रणाली ठीक हो गई क्या? कब्ज दूर हो गया? आपका आलस्य दूर हो गया क्या? खाने की आसक्ति व असंयम हट गया क्या? फिर उन सब कारणों के रहते हुए कैसे आप मान बैठे कि बवासीर चली गई। बीज भूमि में पड़ा ऋतु की इन्तजार कर रहा है। ज्यों ही वर्षा आई कि बीज उगा।

बवासीर के मस्से कटवाकर निश्चित होने वाले रोगियों को देखें

भयंकर दिल के रोग, हाई ब्लडप्रेशर, भयंकर अवसाद और आगे चलकर लकवा, भयंकर लकवे के आक्रमण में मृत्यु, कैसे आप समझ बैठे कि बवासीर ठीक हो गई ? हां बवासीर अपने द्वारा रोगों की परम्परा स्थिर कर शायद अपने नाम वा रूप में जाती हुई किसी-२ ने देखी। आवश्यक नहीं कि बवासीर आप्रेशन के बाद उस रूप में न लौटती हो। प्रायः वह रोना बना ही रहता है। आए दिन किसी न किसी रूप में शिकायत बनी रहती है।

ऐसा मैं मानता हूँ समझ लो पुण्यकर्मों के परिणामस्वरूप एक सुअवसर आगया। रोग के तमाचे लग चुके थे. उधर आप्रेशन हुआ, इधर मन बदला। आप्रेशन ने तो पहले अपराधों से बने रोग को काट दिया, इधर बदले हुए मन ने संयम को अपना कर भूलों को विदा कर दिनचर्या को सुन्दर बना दिया। तब मुझे यह मानने में संकोच नहीं कि आप्रेशन सफल रहा। घाटे का सौदा नहीं। अब आप बवासीर के कष्ट से अथवा अन्य रोग परम्परा से मुक्ति पा जाएंगे। अस्तु इस विवेचन के बाद आप चाहेंगे कष्ट दूरकारी तात्कालिक उपचार।

बवासीर के कष्ट निवारक तात्कालिक उपचार—

पुनर्नवा (सांठ) की जड़ पानी की सहायता से पीसकर लुगदी बना कर गुदा पर बांधने से तुरन्त पीड़ा शांत होती है।

बट की जटा को जला कर राख में एरंड तैल मिला गुदा पर रखें अथवा गेंदे की पत्तियां पीस कर गरम कर लुगदी टिकिया बना बांधने से शांति मिलेगी। अथवा बादी बवासीर में प्याज को पीस कर घी में भूनकर थोड़ा लाल कर पान के पत्ते पर रख कर गुदा पर बांधें।

अथवा– पत्ते सहित मूली पीस कर (कुचलकर) नींबू रस मिला गुदा के भीतर रखें। कहते हैं १५ दिन के प्रयोग से मस्से भी गिर जाते हैं। अथवा कच्चे पपीते का दूध रूई में लगा गुदा में रखने से लाभ होता है। नींबू रस सीरिंज द्वारा गुदा में चढ़ाना हितकर होता है।

खुजली वा दर्द की परेशानी में जोंक लगवा कर गंदा खून निकलवा देने से भी लाभ होता है।

अथवा प्रातः ताजे दूध में या गर्म किए ठंडे दूध में नींबू रस मिला पीने से तीन चार दिन में ही लाभ दिखाई देता है।

छोटी हर्रें १ छटांक ले गौ के घी में भून पीस चूर्ण कर उसमें आंवलासार गधक १ तोला मिला रखें, ६ माशे (एक चम्मच) चूर्ण ले रात में गौ दूध के साथ सेवन करें इससे शौच साफ होगा, वायु की अनुलोम गति होगी। पेट साफ रहने से बवासीर को बड़ा लाभ होगा अथवा फिटकरी का फूला बना एक माशा ले छाछ (मट्ठा) से प्रातः सवन करें।

अथवा गहरी नीली वा पीली शीशी का जल आधा-२ मिला, आधी छटांक की मात्रा से दिन में चार बार लें। मस्सों पर नीला प्रकाश डालें। पीली बोतल का जल तैयार कर उसका एनिमा लें।

खूनी बवासीर में हल्की नीली आस्मानी या हरी शीशी का जल लें।

अथवा रीठा का छिलका जलाकर भस्म वना १ माशा की मात्रा शहद संग सेवन करने से खून आना बंद हो जाता है। रीठे का छिलका पीस मक्खन मिला गुदा के मस्सों पर बांधें, जलाकर मक्खन संग खाना, कच्चा लगाना।

अथवा करेले के दिनों में रात को करेले एक छटांक के लगभग कस कर आंध पाव पानो में भिगो दें, प्रातः निचोड़ कर पीने से शीघ्र खून बंद हो जाता है। उसमें पीपल के एक दो पत्ते पीस कर मिलाना भी हितकर है।

ये सब छोटे-२ टोटके लिख दिये, और भी दो चार लिख सकता था पर उचित नहीं जाना। ऐसे नुस्खे तो आप भी जानते होंगे। जिस किसी भी नुस्खे से आप चाहें लाभ प्राप्त करें। इसे पूर्ण चिकित्सा मत मान बैठें। लाभ प्राप्त कर लें, रोग की बाढ़ में रोक लगा लें, उसके

बाद शांत मन से उत्साह पूर्वक विवेक और धैर्य को मिला सफल चिकित्सा के लिये दृढ़ संकल्प हो जायें।

हमारे उस मूल सूत्र का स्मरण करें—

"व्रत-प्रायश्चित्ताभ्यां सर्वरोग निराकरणम्"

अपथ्य वस्तुओं का व्रत करें, उनके न सेवन का दृढ़ संकल्प करें, पूर्वकृत भूलों का प्रायश्चित करने के लिये रक्तशोधक वस्तुओं का सहर्ष श्रद्धापूर्वक सेवन आरंभ करें। तात्कालिक कष्ट हरण के लिये तो यदि संभव हो एक एनिमा लेकर पेट साफ कर लें, उसके बाद ही गरम पानी में ८-१० मिनट के लिये पैरों को रखें तत्पश्चात् गरम पानी में भीगा वस्त्र निचोड़ पैरों पर लपेट ऊनी वस्त्र से लपेटें। घंटा भर इस प्रकार रखना चाहिये। रक्त आना भी बंद होगा, इस प्रयोग से रक्त प्रवाह पैरों की ओर आजायेगा। इस भांति दो तीन दिन तक ऐसा करें, दिन में दो तीन बार किया जाना चाहिये। एनिमा का साप्ताहिक प्रयोग जारी कर दें। दर्द की अवस्था में चूतड़ पर विशेष रूप से क्रिया करनी है। सर्वप्रथम गुदा द्वार पर गरम ठंडा सेंक करें, चार पांच पट्टी करने के बाद पैर की लपेट तथा चूतड़ पर ठंडी पट्टी का लपेट करें। अधिक दर्द की दशा में हर दो घंटे पर ऐसा करने से दर्द व खून दोनों बंद हो जायेंगे। सूजन की दशा में कुछ चूतड़ को ऊंचा रख, विश्राम करें। खूब ठन्डे पानी में भीगी पट्टी गुदा द्वार पर दबा कर रखें गरम होते ही बदलते जायें। बर्फ का टुकड़ा गुदा के भीतर डाला जा सकता है, शीघ्र ही प्रवाह को बंद करेगा। मिट्टी की पट्टी बार-२ गुदा पर रख लाभ प्राप्त करें। बवासीर व कांच बाहर निकल आये हों तो चूतड़ को ऊपर रखते हुये विश्राम करें।

बड़ी सावधानी से कांच भीतर कर दें। सर्वांगासन या शीर्षासन से तुरन्त ही बाहर आया हुआ भाग भीतर चला जाएगा। तात्कालिक प्रयोगों द्वारा जैसे ही आप दर्द, जलन वा रक्त प्रवाह को काबू कर

लें उसके बाद ही नियमित रूप से पेड़ू वा गुदा पर मिट्टी की पट्टी रखते हुए एनिमा साप्ताहिक क्रम द्वारा उदर को साफ कर लें, साथ ही पेड़ू-नहान प्रति दिन एक या दोनों समय लेने लगें। कटिस्नान के बाद कुछ योगासन करें जैसे हलासन, सर्पासन, उत्तानपादासन, शीर्षासन, सर्वांगासन। भोजनोपरांत १५-२० मिनट के लिये विशेष-रूप से घुटने मोड़कर पैरों के भार वीरासन से बैठना विशेष हितकर है। मल सरलता से आने लगे इसके लिये ईसबगोल की भूसी पानी के संग एक चम्मच प्रतिदिन लें।

शौच होने के बाद गणेशक्रिया द्वारा मल मार्ग को भीतर से शुद्ध कर लेना चाहिये। दाएं हाथ की मध्यमा अंगुली को गुदा में प्रवेश कर घुमाना होता है। भीतर के मल को अंगुली से साफ करते हुए धो देना होता है। इस क्रिया से मल शुद्धि होती है, वह स्थान सक्रिय हो जाता है। गुदा व मस्सों को भाप दें, मिट्टी पट्टी करना हितकर है। सप्ताह में सारे शरीर को गीली चादर का लपेट करना है। मास में दो बार भाप स्नान सारे शरीर का। शुद्ध वायु में खड़े होकर कुछ व्यायाम योगासन करें ताकि चूतड़ की ओर एकत्रित हुआ रक्त सारे शरीर में प्रवाहित हो जाय।

अपने आहार में से पुरोठा, पक्वान्न, मिर्च मसाले व दालें हटा दें। कोई व्यसन न रहने पाए। अभक्ष्य मांसादि तो बहुत दूर गए।

सुन्दर नियमित दिनचर्या बना लें। प्रातः नीम-गिलो का जल पी भ्रमण को जाएं, वापिस आ मिट्टी पट्टी एनिमा टबस्नान, मुनक्का. अंजीर का नाश्ता या मूली कसकर थोड़ी गरम कर खाएं या कोई भी मौसम की सब्जी लें। नीम-गिलो के स्थान पर करेले के दिनों में करेले का पानी लिया जाए। प्रातः अन्य कोई नाश्ता न लें। दोपहर में चोकर समेत आटे की रोटी वा पर्याप्त सब्जी, अनुकूल जान पड़े तो सलाद। रात्रि में केवल मौसम के फल व सब्जी। महीनों इस प्रकार चर्या से शरीर को दोषमुक्त एवं शुद्ध रक्त युक्त बना दें। बस बवा-

सीर गई, साथ ही गए आलस्य प्रमाद, जाड़ा गर्मी, हड़फुटन। नवस्फूर्ति नूतनचेतना की अनुभूति होने लगेगी। बहुत अच्छा हो एक बार सात या दस दिन का उपवास कर कल्प मट्ठा या गाजर शंतरे के मौसम में ऐसे रसों पर, बाद में फल सब्जियों पर ही रहा जाए।

चिंतन का एक प्रकार—जो दर्द या रक्त प्रवाह इन्जैक्शन या किसी गोली के जरा सा मुंह में डालने से मिनटों में हट सकता है उसके लिये एक-एक घंटे की पट्टियां लगानी, मिट्टी में शरीर व कपड़ों का सानना कौन पसन्द करेगा ? आज के वैज्ञानिक युग में ये सब बेकार व्यक्ति के प्रयोग जान पड़ते हैं। बात यों है लोगों ने सम्यक् चिन्तन करना ही छोड़ दिया। छोटे-छोटे प्रयोग करते, बीमार होते और चंगे होते दस वर्ष गुजर गए। जीवन की गाड़ी लड़खड़ाते हुए चलाते २ अभी भी पता नहीं और कितने साल ऐसे ही लग जाएं पर रोग न जाएगा। परन्तु जब संयम की बात आती है तो कतराते हैं, बहाने बनाते हैं, समय नहीं। दस वर्ष रोगी बने रहना मंजूर पर दो चार महीने या दस महीने संयम निभा स्वस्थ हो जाना नामन्जूर। विज्ञान ने दवाओं तथा आप्रेशनों ने हमें असंयम की ओर बढ़ाया है। आलसी प्रमादी बनाया है। सुविधा नाम पर हमें साहसहीन खोखला कर दिया है। देखने में शरीर मोटा दीखता है पर उसके मन में साहस नाम को नहीं है। संयम से बेहद घबराहट है।

तप, संयम वा श्रम की भूमि में ही सुख के बीज बोए जाते हैं इसे भूल गए। सुख मन का मुख्य विषय है, सुख के लिये मन को निर्मल बनाएं। मन के निवास स्थान शरीर को श्रम की साधना से दृढ़ बनाएं। श्रम के कामों में रस लें।

पेट के कीड़े

क्या छोटे क्या बड़े सभी के पेट में कीड़े पाए जाते हैं। वे कीड़े भी विभिन्न प्रकार के होते हैं। मुख्यतः तीन प्रकार के माने जाते हैं:—

(१) सूत जैसे छोटे-छोटे कीड़े। ये छोटे कीड़े छोटे बच्चों में मुख्यरूप से पाए जाते हैं। बच्चे रात को सोते-सोते दांत चबाते हैं, नाक के अग्र भाग को अथवा गुदा द्वार को बार-बार खुजलाते हैं। सांस के साथ दुर्गन्ध आना, पाचन की विकृति, पतले दस्त, कै, बुखार आना ये सारे चिन्ह होते हैं। ये छोटे कीड़े दल बांधकर मलद्वार के पास निवास करते हैं। बड़ी उम्र वालों के भी पाये जाते हैं। इन्हें चुन्ने भी कहते हैं।

दूसरे प्रकार के कृमि—केंचुए जैसा लम्बा और पतला कीड़ा छोटी आँत में रहता है। कभी-कभी पाकस्थली की राह से चढ़कर मुंह से निकल आता है। इसके चिन्ह होते हैं—पेट में दर्द, नींद में चौंकना, नाक व गुदा में खुजली, पेट फूलना, बेहोशी, कभी भूख व कभी अरुचि, कमजोरी, शरीर का जीर्णशीर्ण होना, मुंह में पानी आना, कभी-कभी कै होना। इस कीड़े की लम्बाई चार से १२ इंच तक होती है।

तीसरे प्रकार के कृमि—फीते जैसा लम्बा कीड़ा एक बार में एक ही होता है। इसकी लम्बाई १ से २ फीट तक होती है। दूसरे प्रकार के कृमि के लक्षण पाए जाते हैं।

कीड़ों की उत्पत्ति के कारण—कब्ज बना रहना, मीठे का अधिक सेवन, मन्दाग्नि, गले सड़े फल सब्जियों का खाना, सड़ी मछली मांस का सेवन। सीधी सी बात है बाहर हम देखते हैं जहां कहीं बहुत दिनों से कूड़ा कचरा पड़ा होता है पड़ा-पड़ा सड़ता है तब उसमें कृमि पैदा होते हैं। ठीक वैसी दशा पेट व आंतों की होती है। तभी कृमि पैदा होते हैं, पेट में सड़ांद, रक्त में सड़ांद। यदि पेट साफ हो, रक्त साफ हो तो बाहर के फल सब्जी व जल से पहुंचा हुआ कृमि भीतर पनप ही नहीं सकता।

उपचार—स्वयं ही समझकर उपचार-चित्र तैयार करें। करना है पेट को साफ व रक्त को शुद्ध, तीसरा ध्यान रखना है कि वे स्वयं

संतति सहित बाहर आ जाएं। यदि कहीं अण्डे दे रखे हों तो वे भी समाप्त हो जाएं। यों तो साप्ताहिक एनिमा क्रम ही एक सुन्दर प्रकार है जिसमें यह चिंतन समाया हुआ है। मट्ठा, नीम के एनीमे ही कीट घातक हैं पर विशेष एनिमा है लहसुन प्याज का अथवा राई का। साथ ही गुड़ या शीरे का एनिमा। पहले मीठे का एनिमा दें ताकि मीठे के लोभी कीड़े उसे खाने के लिये एकत्र हो जाएं। पानी के निकलते ही सारे कीड़े भी साथ ही बाहर हो जायेंगे। उसके बाद लहसुन प्याज व राई के एनिमे उनके लिए मारक हो जायेंगे। नीचे से ये प्रयोग हुए। मुख की ओर से भी इसी सिद्धान्त से प्रयोग करें। थोड़ा गुड़ जैसा मीठा खिला लिटा दें। मीठे के कारण कृमि मेदे में इकट्ठे हो जायेंगे। १५ मिनट के बाद १ माशा खुरासानी अजवायन का चूर्ण ताजे पानी के साथ खिलायें। छोटे बच्चों को थोड़ी मात्रा में दें। कीड़े गुदा द्वारा मर कर निकल जायेंगे। अथवा गुड़ खाकर १५ मिनट विश्राम के बाद कबीला या बायबडिंग का चूर्ण गरम पानी के साथ खिलाएं। तीन माशे से एक तोला तक की मात्रा होनी चाहिये।

इतना करने के बाद आप मधुर त्याग का व्रत ४० दिन का कर लें, साथ ही नीम गिलो प्रायश्चित के रूप में लें, कुछ दिन फलाहार पर बिता दें बस कट गई जड़। नियम से कसरत कर शुद्ध वायु सेवन से रक्त को शुद्ध कर लें।

नारू जैसे कीड़े के लिये विशेष रूप में उस स्थान पर जहां मुंह बना रहा होता है अमरबेल पीसकर लेप करने से वह बाहर आ जाता है। बांस के कोमल अंकुर को पीस, पुलटिस बनाकर बांधने से भी नारू बाहर आ जाता है।

मधुमेह [डायब्टीज]

जब पेशाब के साथ मधु जैसा चीनी जैसा पदार्थ निकलने लगता है तब उसे मधुमेह (डायब्टीज) कहते हैं। इसमें पेशाब की मात्रा बढ़

जाती है, २४ घन्टे में ४ सेर से लेकर २० सेर तक पेशाब होता है। यों तो बिना चीनी आए भी पेशाब की मात्रा बढ़ती है जिसे बहुमूत्र या मूत्रातिसार कहा जाता है। बहुमूत्र जब किन्हीं विशेष कारणों से होता है जैसे वर्षाऋतु में ठण्डे पानी वाले पदार्थ सेवन करने से, भीगने से तो वैसा बहुमूत्र व मधुमेह दो पृथक-२ हो जाते हैं। स्नायुदौर्बल्य के कारण, मानसिक उत्तेजना भी बहुमूत्र में कारण बनती है। जब शरीर के रोमकूप बन्दप्राय रहते हैं, शरीर से पसीने के रूप में तरल मल नहीं निकल पाता तब वह रोम कूपों की बजाय गुर्दे में जमा होकर पेशाब के रास्ते बाहर बहुमूत्र के रूप में निकलने लगता है। दूसरा मुख्य रूप है मधुमेह। जब वह बढ़ जाता है तब अनेक लक्षणों से पता चलने लगता है—सिर दर्द, कब्ज, भूख की अधिकता, त्वचा खुश्क होना, खुरखुरापन, प्यास की अधिकता, शरीर क्रमशः अशक्त होता जाता है या सूखता है। शरीर के तन्तुओं के क्षीण हो जाने के कारण प्रायः फोड़े निकलते हैं, जहरबाद हो जाता है। दृष्टि की कमी, पीठ का फोड़ा, जहाँ रोगी पेशाब करेगा वहीं चींटियां मक्खियां एकत्र हो जायेंगी। ज्यों ही कोई फोड़ा निकला या चोट लगी, घाव हुआ कि शीघ्र अच्छा ही नहीं होता। रक्त में चीनी अधिक होने के कारण घाव ठीक होने की प्राकृतिक क्षमता नष्ट हो जाती है।

मधुमेह [डायब्टीज] रोग का कारण:—शर्करा जाति के (कार्बोहाइड्रेट) खाद्य रोटी चावलादि अन्न व अन्य पदार्थ जो हम खाते हैं पचने के बाद वे शरीर में चीनी के रूप में परिणित हो जाते हैं। यह चीनी शरीर के पेशी समूह (मसल्स) और तन्तुओं (टिशूज) में दग्ध होने के फलस्वरूप शरीर में ताप व शक्ति उत्पन्न करती है। जब शारीरिक गड़बड़ी के कारण पेशी समूह व तन्तुओं में चीनी को शोषण करने की क्षमता नष्ट हो जाती है तब चीनी रक्त में जमा होने लगती है और अन्त में पेशाब के साथ बाहर निकल जाती है।

वैज्ञानिक विश्लेषण से कहा जाता है कि पेन्क्रास नामक ग्रंथि जो

रसस्राव करती है जब वह रसस्राव ठीक नहीं हो पाता तभी चीनी का शोषण करने की क्षमता नष्ट हो जाती है। पेन्क्रास ग्रंथि से द्रवित रस 'इन्सोलीन' नाम से कहा जाता है। इस कारण इस रोग में पशुओं से प्राप्त किया रस मानव शरीर में प्रवेश करा लाभ पहुँचाया जाता है। चीनी पचाने वाले तंतुओं की एक सीमा है। स्वस्थ व्यक्ति एक बार में एक पाव से अधिक चीनी नहीं पचा पाता। पर जब अधिक आहार लिया जाता है तथा वह भी शर्करा जातीय, साथ ही पृथक से चीनी का प्रयोग अधिक मात्रा में होता है, शरीर में पचाने वाले तंतुओं की शक्ति क्षीण हो जाती है वैसी दशा में चीनी मूत्र मार्ग से बाहर आने लगती है। इस कारण कहा जाता है क्लोम यंत्र को अत्यधिक श्रम करने के कारण दुर्बलता आती है। ऐसे ही मानसिक अशांति, दुश्चिता, दुर्भावना आदि दुर्बलता के कारण बन जाते हैं। यह दुर्बलता विकार-संग्रह से ही आती है और विकार-संग्रह अनुचित आहार से होता है।

रोगों के कारण में हमारा सूत्र है—**आसक्ति-अशक्त्योः योगः रोगाणाम् कारणम्**

पचाने की शक्ति रही नहीं, खाने की आसक्ति गई नहीं, यह रोगों का कारण है। अपनी शक्ति को देखते हुए न खाना रोगों का एक मुख्य कारण है।

"मधुमेह का सफल उपचार"

इलाज के नाम पर चलने वाली क्रियाएं तो थोड़े दिन ही चलेंगी पर मुख्य चिकित्सा है पथ्यापथ्य विवेक। पथ्यपालन अपथ्य का परित्याग यदि वह सधा तो पूर्ण विजय अन्यथा इस जीवन व्यापी रोग से छुटकारा पाना दस बीस दिन के उपचारों द्वारा न हो पाएगा इसलिये सर्वप्रथम रोगचिकित्सा का हमारा सूत्र स्मरण करें—

"व्रतप्रायश्चित्ताभ्यां सर्वरोग निराकरणम्"

अपथ्य न सेवन करने का व्रत लें, साथ ही पूर्वकृत अपराध के

परिणाम को निर्मूल करने हेतु प्रायश्चित करें।

व्रत करें चालीस दिन अथवा पूर्ण रोगनिवृत्ति पर्यन्त मधुर त्याग व्रत, किसी भी प्रकार से मीठा सेवन नहीं करेंगे। साथ ही खजूर मुनक्का अंजीर किशमिश खुरमानी जैसे मीठे फलों का भी त्याग करें। मांस मछली अंडा चाय काफी शराब तम्बाकू जैसी वस्तुओं का सर्वथा त्याग, ६-७ घंटे से अधिक सोने का त्याग, दिन में सोना, चिन्ता घबराहट क्रोधादि मानसिक विचारों का त्याग। अखरोट, साबूदाना, चावल, आलू, काजू जैसे तैलीय मेवे या श्वेतसार प्रधान आहारों का त्याग।

प्रायश्चित स्वरूप रक्त को शुद्ध करने के लिये--नीम-गिलो का सेवन अथवा अभाव में रसौत का सेवन। तीन माशे काली जीरी चूर्ण प्रातः दूध के साथ।

मधुमेह में उपचार क्रम—(१) प्रातः नींबू रस पानी में मिला पीकर भ्रमण के लिए जाना। यथा सम्भव तेजी से शुद्ध वायु में घूमना वह भी नंगे पांव। वापिस लौट—(२) वमन क्रिया, ढेर सा पानी पी गले में अंगुलि डाल बाहर निकाल देना। कुछ विश्राम कर नीम गिलो, या केवल नीम पत्तियाँ अथवा रसौत १ माशा पानी संग। एक सप्ताह बाद—गुड़मार बूटी, जामुन के पत्ते, बेल के पत्ते, मकोय के पत्ते, आम के पत्ते कूट पीस छान प्रातः सायं ६-६ माशे पानी के संग लेना। अथवा केवल जामुन के या बेल के तीन-तीन पत्ते पीस चटनी बना लेना। (३) मिट्टी की पट्टी रख एनिमा चार्ट चलाना। (४) कटिस्नान शक्ति अनुसार। बाद में शुद्ध वायु में कुछ आसनादि करना या खड़े होकर व्यायाम क्रियाएँ। कच्ची सब्जियों का सलाद नींबू मिला। धूप में बैठ सरसों के तेल की मालिश करने से त्वचा की रुक्षता नष्ट होती है। सिर को पानी से भिगोकर धूप में बैठ सूर्यस्नान कर ठण्डे पानी से स्नान करना विशेष हितकर है। सप्ताह में एक बार सारे शरीर की चादर लपेट एक घंटे के लिये। स्नान के समय सर्वप्रथम

मेरुदण्ड रीढ़ पर ५ मिनट के लिये ठंडे पानी की धारा छोड़नी चाहिये। बाद में स्नान ठंडे जल से करके हथेलियों से मल-मल कर शरीर के जल का सुखाना अत्यन्त हितकर है। ठंडे पानी में स्नान करने से देह में यथेष्ट आक्सीजन शोषित होता है और रक्त में स्थित अतिरिक्त शर्करा का बहुत कुछ अंश दग्ध होकर देह के काम में आने लगता है। यदि रोगी अधिक अशक्त हो तो कुनकुने पानी से पहले पहल नहाए, बाद में क्रमशः तापमान घटाता जाये। स्नान के अभाव में तौलिया भिगो कर निचोड़ दिन में दो बार मलमल कर त्वचा को पोंछ कर साफ कर देना हितकर है।

इन सब क्रियाओं के साथ पाचन-शक्ति की वृद्धि का ध्यान रखना है जिसके लिये दिन में दो बार समूचे पेट पर गरम ठंडा सेक १५ मिनट के लिये करना आवश्यक है रात में पेट व कमर का लपेट करना चाहिये। शरीर का तापमान ठीक बनाए रखने के लिए उचित गर्म वस्त्र धारण करें। कभी ठण्ड लग जाय तो उष्णपाद स्नान द्वारा शरीर को शीघ्र गर्म कर दिया जाय। उष्णपाद स्नान द्वारा अथवा नीम पत्तियों से या केले अथवा एरण्ड के पत्तों से ढांक कर सूर्यस्नान कराना चाहिये, मास में तीन बार।

मधुमेह में अनुकूल भोजन—यह ध्यान रखते हुए कि यकृत, क्लोम आमाशय कमजोर हैं अतः स्वतः इस बात का ध्यान बना रहे कि भोजन सुपाच्य एवं अल्पमात्रा में हो, साथ ही क्षार धर्मी हो। अन्नों में जौ की रोटी सर्वश्रेष्ठ है, जौ चना सम भाग मिला रोटी बनायें। सब्जियों में करेला, मेथी, खीरा, कच्चा पपीता, परवल, बन्द गोभी, चौलाई, लौकी, तुरई, सेम, प्याज व धनिया की पत्ती। यदि अंकुरित किए हुए मूंग चने का सेवन किया जाए तो बहुत ही अच्छा, उन्हें जरा सा आग पर पका लें।

फलों में काले जामुन विशेष रूप से सेवन योग्य हैं। वैसे भी ऐसे रोगी को अधिक पानी पीना चाहिए, हर घंटे पर पानी पी सकता है।

यदि अस्वाभाविक रूप से अत्यधिक प्यास लगे तो गरम पानी थोड़ा-थोड़ा सीप-सीप कर पीना चाहिये। मट्ठा का प्रयोग रोगी के लिये हितकर है। ताजे आंवले का रस थोड़ा शहद मिलाकर लेना विशेष हितकर है।

पत्ती वाली सब्जियों के पत्तों का रस नींबू मिलाकर लेना मुख्य पथ्य है। ठंडे पानी का स्नान व दिन में पर्याप्त पानी पीना विशेष हितकर है, इससे तन्तुओं की जीवनी शक्ति यथेष्ठ बढ़ती है, जिससे इकट्ठी हुई शर्करा तन्तुओं द्वारा भली-भांति दग्ध हो सकती है। वस्तुतः शरीर में दहन क्रिया का अभाव ही अनेक प्रकार के रोग हैं। जब आमिष जातीय प्रोटिड पदार्थों की दहन क्रिया भली-भांति नहीं होती तब परिणाम स्वरूप वातव्याधि गठिया होता है, पर जब चर्बी जातीय पदार्थों का दहन भली-भाँति नहीं होता, तब स्थूलता और शर्करा जातीय पदार्थों के दहन के अभाव में (डायब्टीज) मधुमेह होता है।

विवेक से काम लें – मधुमेह का रोगी शर्करा जातीय पदार्थ छोड़ क्षार प्रधान शाक-सब्जियों का आहार ग्रहण करे यह आदर्श है पर इस आदर्श की ओर धीरे-धीरे आए, सहसा भोजन का परिवर्तन न कर दे। मिठाईयाँ, पकवान; दालें तो पहले झटके में ही बन्द कर दे। चावल का अभ्यासी चावल के स्थान पर धीरे-धीरे हाथ से पीसे आटे की रोटी लेने लगे। चावल की अपेक्षा रोटी में कम अम्लता है। उधर दूध छोड़ देना है, दूध में शर्करा अधिक पाई जाती है। उसके स्थान पर दही ली जानी चाहिये अथवा यथेष्ठ मट्ठे का प्रयोग किया जा सकता है।

आहार शास्त्रियों का चिंतन है शर्करा जातीय आहार सहसा छोड़ देने से शरीर में चर्बी अधिक दग्ध होने लगती है जिससे रक्ताम्लता उत्पन्न हो सकती है। (आचार्य पी० सी० राय खाद्य विज्ञान) ऐसे रोगी को केला खाने का परामर्श भी दिया जाता है, अच्छा

सुपक्व केला पथ्य व औषधि है। दो चम्मच मधु भी सलाद में मिला अथवा ताजे आंवले के रस में दिया जाना चाहिये। चीनी की मात्रा पेशाब में अधिक न हो तो थोड़ा-थोड़ा आलू भी लें। कुछ मात्रा में चर्बी जातीय खाद्य लेने आवश्यक है जिसमें नारियल प्रधान खाद्य है। ऐसे ही बादाम पीस या घिसकर लिया जाना चाहिये, थोड़ी-थोड़ी मात्रा से आरम्भ करें। जिन फलों में चीनी का अंश कम, अम्ल अधिक हो वे सभी अच्छे हैं—सभी प्रकार के नींबू, अनानास, काला जामुन, टमाटर, अनार आदि। इसी प्रकार दूध में भीगे चने वैसे ही चबाएँ या थोड़ा मधु भी संग में मिला सेवन करें।

सर्वोत्तम उपचार—पूर्वकथित आहार वा चिकित्सा विधियों से मल निकल जाने से मलावरण से शरीर व मन हल्के हो गए। अब सहज ही यह साहस किया जा सकता है कि एक उपवास कर लें। उपवास के प्रकरण में दिए प्रकार को ध्यान से पढ़ें, उपवास में शोधक क्रियाएँ—वमन, एनिमा, नेति क्रिया करते चलें। जितने दिन का साहस हो पांच सात या दस दिन का। बस फिर क्या विजय ही विजय है। उपवास के बाद दो तीन दिन रसाहार पर रहकर मट्ठे का प्रबन्ध हो तो कर लें मट्ठा कल्प। मट्ठा इस रोग में अत्यन्त हितप्रद है, शीघ्र ही चमत्कार दिखाएगा।

मट्ठे के अभाव में कुछ दिनों तक कच्ची पक्की तरकारियों के रस व तरकारियाँ ही लें। एक दिनचर्या बना लें। प्रातः नीम गिलो या चार पत्तियों का बनाया चूर्ण अथवा केवल बेल जामुन पत्तियों का रस या चटनी लेनी है। दोपहर में सब्जियाँ पकाकर व कच्चा सलाद, साथ ही सन्तरा मोसम्बी टमाटर अनानास आदि फल लें। उसके बाद फिर आगे चलकर जौ के आटे की रोटी एक समय। जौ के अभाव में जौ चना अथवा गेहूँ भी मिलाएँ। तीसरे पहर केवल मट्ठा वा शाम को सब्जियों का रस लेकर निर्वाह करें। इन सारे प्रयोगों से शरीर में चीनी को दग्ध करने की योग्यता तन्तुओं में बढ़ेगी, पेशाब में चीनी की मात्रा भी कम हो जायेगी।

"आरोग्यम् चापि परमं व्यायामादुपजायते"

व्यायाम से सुन्दर आरोग्य प्राप्त होता है यह मान भ्रमण, दौड़ना, आसनादि करें।

अन्तिम निवेदन—धन्यवाद दें उस प्रभु को, प्रसन्न हों, सबक लें, रोग से जीवन बदलें। भोग से योग की ओर आएँ। प्रातः ही कुछ जप-ध्यान करें ताकि मन निर्मल हो। उसमें राग-द्वेष ईर्ष्यादि की वृत्तियां जो प्रायः मानसिक उद्वेगों का कारण बनती हैं वे दूर हों। एक मिनट क्रोध का आवेश शरीर में भीषण तूफान लाता है। अम्ल-तत्व को बढ़ा देता है। शारीरिक यन्त्र में जंग लग जाती है। बीमारी को भगाने के लिए मानसिक परिवर्तन की आवश्यकता है। इस महान् सिद्धान्त के दो पहलू हैं—(१) दृढ़ प्रतिज्ञा, (२) अनुभूति। दृढ़ प्रतिज्ञा—बीमारी के विरुद्ध युद्ध करने के लिये दृढ़ प्रतिज्ञ हो जाएँ। अनुभूति—प्रतिज्ञा के बाद निश्चय पूर्ति हेतु साधन जुटाना चाहिए। अनन्त शक्ति के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित करना अनुभूति है।

नियमित भ्रमण, कुछ दौड़, आसनादि का जीवन में समावेश। अच्छे ग्रन्थों का स्वाध्याय कर मस्तिष्क को सुन्दर रचनात्मक उत्साही विचारों से भर दें। सप्ताह में एक दिन अर्धोपवास केवल एक समय कुछ मौसम की फल-सब्जी लेना। मास में दो दिन पूर्णोपवास। उप-वास से बचे अन्न आहार का दीन दुःखी रोगी के प्रति दान जो घटे सो बटे।

अन्य रूप से दान देना। विद्वान अतिथि का सत्संग व सेवा। आहार का नाप तोल कर लेना। आहार-विहार शयन जागरण विश्राम सब में नियमितता, बस फिर क्या, रोगी योगी बन गया।

बहुसूत्र

इसमें पेशाब में चीनी तो नहीं आती है केवल पेशाब ही अधिक होता है। यह रोग उतना भयंकर नहीं होता जैसा मधुमेह। इस कष्ट के रहते हुए भी वर्षों तक मनुष्य जीता है। मस्तिष्क और मेरु-

दण्ड के भीतर स्नायुयन्त्र की विकृति के कारण ही यह रोग होता है। किसी-किसी को माता-पिता के द्वारा ही यह विकार मिलता है। कारण चाहे जो भी हो यह ठीक है कि इस रोग में गुर्दे को अधिक काम करना पड़ता है। शरीर की त्वचा निष्क्रिय बन जाती है। अतः उपचार में मुख्य दृष्टि रखनी होती है—स्नायुयन्त्र की मरम्मत के साथ ही साथ त्वचा को सजीव बना किडनी का अधिकांश कार्य चर्म द्वारा पूरा कराना। सारे शरीर को दोष रहित कर सबल बनाना। ज्यों ही हम शरीर को विकार रहित कर पाते हैं, त्यों ही शरीर स्वतः ही बाधा दूर होते ही विधिवत् मरम्मत कर लेता है क्योंकि उसे ठीक कर लेने की सारी व्यवस्था व योग्यता उसमें है।

उपचार - पेट को एनिमा द्वारा साफ कर लें। पेट का लपेट भी उसे साफ बनाये रखने में बड़ा उपयोगी सिद्ध होता है। इसमें मुख्य उपचार है भीगी चादर का लपेट सारे शरीर का सप्ताह में दो बार एक-एक घंटा के लिये। इसमें कम्बल के भीतर शरीर के चारों ओर अनेक गरम बोतलें रखनी चाहिएं। प्रतिदिन धूप में शरीर की मालिश आधा घंटा पर्यंत कर ठण्डी मालिश करनी चाहिये।

दिन में दो समय स्नान—प्रातः स्नान के पूर्व कुछ देर धूप में बैठें अथवा रीढ़ पर गीला वस्त्र रख तीन मिनट से छः मिनट तक वाष्प स्नान कर ठन्डे जल से स्नान करना चाहिये।

दूसरे समय में सिर को ठन्डे जल से धोकर रीढ़ पर दो मिनट ठण्डा दो मिनट गरम सेक करें, ऐसा चार पांच बार कर बाद में ठण्डे जल से स्नान करें। स्नान के उपरान्त हथेली से सूखी मालिश कर शरीर को पुनः गरम कर लेना चाहिये।

रात्रि सोने के पूर्व २० मिनट का मूत्रेन्द्रिय स्नान विशेष हितकर है। समय-समय पर मूत्राशय पर गरम ठण्डा सेक करना विशेष आवश्यक है। मूत्राशय के विकृत होने से यदि बार-बार पेशाब होता है तो निश्चित ही शीघ्र लाभ होगा। इन सब क्रियाओं के साथ ही साथ

योगासनों का अभ्यास बढ़ाना चाहिये । भुजंग, शलभ, हल, पश्चिमोत्तान, मत्स्य, धनु तथा शीर्षासनादि कर स्नायु को सबल बना दें जिससे रोग का मूल कारण ही समाप्त हो जाए । आहार के रूप में कुछ दिन तक फलाहार करना विशेष हितकर है । भले ही प्रत्यक्ष में ऐसा ही जान पड़ता है जल पीने से अधिक पेशाब होगा । रोगी पानी पीना पसन्द नहीं करता फिर भी उसे खूब पानी पीना चाहिये, विशेष रूप से नींबू रस मिलाकर ।

प्रातः तिल, खजूर, खशखश को पीसकर चटनी सी बना सेवन करना विशेष हितकर है, तिलों में पेशाब कम करने की विचित्र शक्ति है एक दो तोला तिल प्रयोग करें । आधा छटांक तिल में लगभग दस ग्रेन कैल्शियम मिलेगा जो दैनिक आवश्यक आहार की दृष्टि से पर्याप्त है ।

पित्ताशय की पथरी

पित्ताशय की पथरी व उसकी वेदना एक भयंकर रोग है । अंग्रेजी में इसे "बिलियरी कालिक" कहते हैं । इस रोग में पहले पसलियों के नीचे नाभि तक मीठा-मीठा दर्द या बोझ सा मालूम होता है । कब्ज रहना, भूख न लगना, भोजन के प्रति अरुचि, पीलिया, जाड़ा बुखार आदि लक्षण होते हैं । पर जब कभी पथरी पित्ताशय से बाहर निकलने की कोशिश करती है तो पित्ताशय की नलिका जो चौथाई इंच से भी कम मोटी होती है, उसके पतले सुराख में उससे रगड़ लगने के कारण यकृत के स्थान पर अर्थात् दाहिनी पंजरी के नीचे और कभी-कभी दाएं कंधे तक हठात् असह्य वेदना होने लगती है । साथ ही शरीर भी ठण्ड से कभी-कभी कांपने लगता है । शीघ्र ज्वर हो जाना, ठण्डे पसीने आने लगना, मतली व कै होने लगना ।

पथरी जब उपचार से या अपने आप पित्त नलिका से निकलकर आंत में बाहर निकलने के लिये आ जाती है तब दर्द होना बिल्कुल

बन्द हो जाता है। प्रायः पथरी के छोटे-छोटे टुकड़े कुछ अन्तर दे दे कर निकलते हैं।

पित्ताशय नाशपाती के आकार का एक अंग है जो यकृत के दाहिने भाग के नीचे रहता है। इसी में अस्वाभाविक दशा में पथरी बनती है। पित्ताशय को अंग्रेजी में "गैल ब्लेडर" कहते हैं, और पथरी को "गैल ब्लेडर स्टोन" कहते हैं।

पथरी के कारण—अप्राकृतिक आहार-विहार, आहार में चिकनाई वाले पदार्थों की अधिकता, औषधियों का अतिसेवन, शारीरिक श्रम की कमी आदि के कारण जब शरीर रोगी होने लगता है तब सबसे पहले यकृत रोगी होता है क्योंकि पचाने के काम में यकृत का बड़ा हाथ होता है। परिणाम यह होता है कि रोगी के यकृत में तैयार हुआ पित्त विकार युक्त हो जाता है जो पित्ताशय में पहुँच कर उसमें सूजन और प्रदाह उत्पन्न करता है जिसके फलस्वरूप पित्ताशय की श्लैष्मिक कला के रुग्ण होने पर उसमें स्थित दूषित पित्त और कफ वायु से सूखकर पत्थर की भाँति कठोर हो जाते हैं जिसे पथरी कहते हैं। छोटी से छोटी पथरी सरसों के दाने के बराबर होती है और बड़ी से बड़ी अण्डे के बराबर होती है।

उपचार:—वेदना के समय गर्म सेक स्थानीय। कपड़े की पट्टी को बार-बार बदलें या गरम बोतल से सेक करना हितकर होगा। तत्काल एनिमा दे पेट साफ कर ही लेना चाहिये। सेक करने से शरीर के तन्तु ढीले पड़ जाते हैं पीड़ा कम हो जाती है। टब हो तो गरम पानी का टब स्नान दिया जाना चाहिये। व्यथा काल में हाथ व पांव को गरम बनाए रखना चाहिये।

स्थायी लाभ के लिये:—सर्वप्रथम कुछ दिन का उपवास कर लेना मुख्य बात है। पश्चात् विधिवत रसाहार व फल शाकाहार ले कुछ दिन नियमित रूप से क्रम से चिकित्सा चलाएं। प्रातः नीम गिलो, भ्रमण, वापिस नींबू जल, टब स्नान, पहले गरम पानी में १५ मिनट बैठें फिर ठण्डे पानी में १० मिनट तक। १॥ घंटे बाद रसदार फल

का रस, २ टब का प्रबन्ध न हो तो गरम ठण्डा सेक कर टब स्नान । टब भी न हो तो गरम सेक कर ठण्डे पानी से धोना अथवा पेट को भाप देकर मिट्टी की पट्टी रखना । इसी प्रकार दूसरे समय भी गरम ठण्डा सेक या सेक कर मिट्टी पट्टी ।

आहार में अच्छा हो कष्ट निर्मूल होने तक अन्न न लें, फल सब्जियां तथा गाजर, खीरा, तरबूज के कच्चे रस, मखाना, रामदाना जैसी वस्तुओं का प्रयोग । कभी-कभी एक-एक दिन का उपवास । मास में दो बार पूर्ण शरीर का वाष्प स्नान ।

इस प्रकार नियमित चर्या बना लेने पर पथरी जैसे भयंकर रोग से मुक्त हो जायेंगे । वह स्वयं ही बड़ी आसानी से बाहर हो जाएगी ।

'हस्पताल से निराश होने पर टूटी टांग ठीक हुई'

श्री स्वामी जी मैं आपकी चिकित्सा के प्रभाव व सेवा को किन वाक्यों में अदा करूं—इतना अधिक पढ़ा हुआ भी नहीं हूं फिर भी अपनी अजीब मिसाल जरूर देना चाहता हूँ । पाकिस्तान बन गया, कुरुक्षेत्र में कैम्प लगा हुआ था, किसी प्रकार जीवन बसर कर रहे थे । जामुन के पेड़ से गिरा टांग टूटी नसें फट गईं । हस्पताल में सिविल सर्जन महोदय ने टांग का पलस्तरल गाया । महीने बाद खोला तो पस आ रही थी । दुबारा एक महीने का पलस्तर लगाया । सिविल सर्जन साहब का खुराक पर जोर था इसलिए हर रोज कोई न कोई मीठी चीज बन कर आती कभी खीर कभी हलुआ कभी फिरनी, सब्जी में भी घी पुरोठा आदि चल रहे थे । दूसरा महीना पूरा होने पर जब पलस्तर खुला टांग की वही दशा । इस पर सिविल सर्जन साहब झुँझलाकर बोले तुम खुराक नहीं खाते, टांग ठीक कैसे होगी । मैंने खुराक सुनाई दूध भी लेता हूँ । साथ में ये सारी चीजें खाता हूँ पर उन्हें तसल्ली नहीं हुई । बोले जब तक मीट अण्डा शोरवा न लोगे ठीक नहीं हो सकते । उनके कहने पर मैंने वे सब भी लिये पर हालत में कोई फर्क न आया । आखिर मैंने सुना कि वे टाँग काटने की सोच रहे हैं । इसी बीच मेरे सौभाग्य से बहन जी आपको ले गईं । आप

देहात में ले आए और तीन दिन बाद ही आपने उपवास करा दिया। दस दिन का उपवास करा रसाहार दे साथ ही भाप मिट्टी की पट्टी एनिमा आदि के इलाज ने जादू का असर दिखाया। इक्कीसवें दिन पट्टी खोलने पर पस आना बंद हो गया। कहां दो महीने से ज्यादह हस्पताल में रहने पर कोई फायदा न हुआ बल्कि टांग कटने की नौबत आ गई, वहां आप के पास इक्कीसवें दिन में ही पस बंद हो गई। उसके बाद तो आप के बताये उसूलों पर चलकर मैंने नया जीवन ही पाया।

दूसरी बार भी आपने मुझे फिर नया जीवन दिया जब सन् ७३ में अधिक मीठा खाने से मेरी टांग में फोड़े हो गए। टांग की हालत ऐसी बन गई जैसा भृंड का छत्ता होता है जरा दबाओ वहीं से सुराख बन गया, पस ही पस भर गई। रोहतक मैडिकल कालेज में जाने का सोचा पर भाई रामशरण ने साफ इन्कार कर कहा यह मैडिकल का केस ही नहीं है वहां तो एक दम आपकी टांग ही काट देंगे। यह कह वह टैक्सी से पांचली आश्रम में लाया और सचमुच मैंने दोबारा भी नया जीवन ही पाया और स्वस्थ होकर घर गया।

मुझे कहने में जरा भी संकोच नहीं जहां हम लोग यह मानने लग जाते हैं कि इस रोग में सर्जन की सर्जरी की आवश्यकता है वहां भी प्राकृतिक चिकित्सा ने बड़ी सफलता पाई बिना किसी चीर फाड़ के। कहां ऐलोपैथो की भरकम खर्चीली मशीनरी और कहां यह सरल पद्धति। इतना ही नहीं अब मेरा जीवन ही बदल्ता जा रहा है। भूलें दूर हो रही हैं। भूलें हटते ही आगे मेरा जीवन सुखमय बीतेगा ऐसी आशा है।

आपका—

रामजीदास आंवल, रोहतक (हरियाणा)

"प्रोस्टेट ग्लैण्ड की सफल चिकित्सा व अन्य अनेक चमत्कारिक लाभ"

दस वर्ष पूर्व मैं महात्मा जी की चिकित्सा का अद्‌भुत चमत्कार देख चुका था। देहरादून तपोवन आश्रम में (पैरेलैसिस) अधरंग को किस प्रकार मिट्‌टी पट्‌टी, एनिमा, ठंडे टब स्नान से केवल डेढ़ घण्टे के भीतर ही बिल्कुल चंगा कर दिया। मेरे मन पर उसका गहरा प्रभाव पड़ा। इधर पिछले वर्ष अप्रैल मास में ही विशेष रूप से मुझे अपने रोग की अनुभूति हुई जबकि सामान्य कष्ट पहले से चल रहा था। जब भी पेशाब की हाजत जान पड़े, दस दस मिनट पेशाब करने में लग जाएं, यदि पीछे कोई खड़ा हो तो पेशाब हो न हो। भाग दौड़ शुरू हुई, दिल्ली के बड़े हस्पताल सफदरजंग में प्रसिद्ध पांच टीके लगे। बैक्टीन खाई। उनस रत्ती भर भी लाभ न हुआ, उसके बाद सपेमन (Speman) की ६, ८ गोलियां प्रतिदिन खाने लगा, निरन्तर सात महीने तक गोलियां खाई गईं, कुछ लाभ भी जान पड़ा। पेशाब करते समय ऐसा लगता जैसे कुछ पेशाब रुक गया हो आखिर मुझे महात्मा जी का स्मरण आया। डाक्टरों ने अपने टैस्ट व प्रयोगों से यह सिद्ध कर ही दिया था यह प्रोस्टेट ग्लैंड बढ़ने के कारण कष्ट है और इसका एकमात्र इलाज है आप्रेशन। मन ने कहा इधर का अन्तिम उपाय तो सुन लिया पर इसके पहले महात्मा जी की शरण लूं। यदि उनकी राय भी यही हुई तब ऐसा करा लूंगा। पांचली आरोग्याश्रम में आया रोग निवृत्ति का विश्वास मिला। नियमानुसार यज्ञ कर चिकित्सा शुरू हुई। प्रातः आरोग्यामृत, नेतियां, वमन, गवामृत, पेडू की भाप मिट्‌टी, किसो दिन गरम सेंक मिट्‌टी, एनिमा चार्ट चला, कटि स्नान ८ मिनट का, इस प्रकार का क्रम चला। बीच में कभी सर्वांग प्लास्टिक पसीना, कभी सर्वांग मिट्‌टी का लेप, कभी-२ गरम टब;

टंडा टब इस प्रकार के इलाज से भी कुछ लाभ जान पड़ रहा था फिर भी पेट की अत्यंत विकृत दशा देख महात्मा जी ने उपवास आरम्भ कराया। अनेक विकृतियों को देखते हुए उन्हें साफ करने के लिये उपवास भी आगे बढ़ता गया, इक्कीस दिन पूरे कर शरीर विकारों को साफ हुआ देख तब कहीं दो-दो तोले फलों का रस पानी मिला मिलने लगा, वह भी तीन घंटे के अन्तर से, लगभग दस बारह दिन रसाहार पर रहा। क्रमशः रस की मात्रा बढ़ती गई, भूख खूब लगने लगी तब सब्जी फल मिलने लगे। बहुत दिनों बाद चोकर मिले आटे की थोड़ी-थोड़ी रोटी आरंभ हुई। **आज की दशा**—अब प्रातः हल्का व्यायाम कर भीगी मुनक्का व नींबू व फल का नाश्ता लेता हूँ, दिन में रोटी सब्जी फलादि। शरीर में चुस्ती है। काम करने में मन लगता है। पेशाब की कोई तकलीफ नहीं है, अच्छी गहरी नींद सोता हूँ। अच्छी भूख लगती है। हर एक खाने वाली सादी सी चीज रुचती है।

अन्य चमत्कारिक लाभ—वर्षों से छाती में सांय-सांय की आवाज होती थी जैसे दमा वालों को होती है। जमा हुआ कफ आता था। चश्मा लगाये बिना लिखना पढ़ना कठिन था। आज बिना चश्मे के लिखता पढ़ता हूँ। कफ गई छाती साफ हो गई। पर्याप्त स्फूर्ति आ गई। दवाओं से पिंड छूटा। आप्रेशन का भय टला। शरीर शोधन की सरल पद्धति का ज्ञान पाया। दवाओं में बहते धन को बचाया।

रामदयाल
पूसा गेट, दिल्ली

(प्रोस्टेट—PROSTATE) पुरुष ग्रन्थि की सूजन

बुढ़ापे में जैसे नस नाड़ियों में, जोड़ों में कड़ापन आ जाता है, वैसे ही पेशाब को एक भारी शिकायत हो जाती है। किसी को पेशाब बूंद-बूंद आता है, किसी को रुक जाता है, किसी को पेशाब में जलन होने लगती है। किसी को रात भर पेशाब आता रहता है। रात में सात आठ बार पेशाब के लिए उठना पड़ता है। भले ही इन कष्टों के अन्य कारण भी हैं पर सबसे बड़ा कारण प्रोस्टेट ग्रन्थि का बढ़ जाना है।

प्रोस्टेट ग्रन्थि (PROSTATE GLANDS)

पुरुष ग्रन्थि :—यह ग्रन्थि नाभि प्रदेश के नीचे जननेन्द्रिय से सम्बन्धित एक ग्रंथि है। गुदा में अंगुली डाल कर दबाने से बढ़ी हुई ग्रन्थि का पता चल जाता है। मूत्राशय (Bladder) से निकलती हुई मूत्रनली वहीं पर है। पुरुष ग्रन्थि का बहुत सा हिस्सा मूत्रनली के नीचे तथा कुछ हिस्सा इस नली के ऊपर भी होता है। पुरुष ग्रंथि मूत्रनली को इस प्रकार घेरे रहती है जिस प्रकार अंगूठी अंगुली के चारों ओर रहती है। आयु बढ़ने के साथ पुरुष ग्रन्थि भी परिमाण में बढ़ने लगती है। भले ही इस सम्बन्ध में कुछ डाक्टरों का मतभेद है, फिर भी फ्रांस के डाक्टरों का यह कथन 'अधिक उपयुक्त है कि पुरुष ग्रन्थि (PROSTATE) का शोथ केवल एक स्थान विशेष ही रोग नहीं है; अपितु वृद्धावस्था में हर अंग में कठोरता आने लगती है। नस-नाड़ियाँ सभी कठोर हो जाती हैं। समस्त शरीर में धमनी काठिन्य हो जाता है। इसी का प्रभाव प्रोस्टेट (Prostate) पर भी पड़ता है। पर मैं तो वृद्धावस्था के साथ धमनी काठिन्य या नसनाड़ियों की कठोरता को बुढ़ापे के साथ नहीं (जोड़ता) जोड़ना चाहता। जिन लोगों ने अपने युवाकाल में जीवन को संयम से चलाया है और

बराबर किसी प्रकार का भी व्यायाम करते रहे हैं उनकी नस-नाड़ियों में इस प्रकार की कठोरता आना स्वाभाविक नहीं है। डॉक्टर लेली के कथनानुसार असंयमी तथा व्यायाम न करने वाले लोगों के शरीर में ही एक प्रकार का भूरे रंग का फारन मैटर ("विजातीय द्रव्य") उनकी नस-नाड़ियों में जमता रहता है वही अकड़ाहट व बुढ़ापे का भी कारण होता है।

प्रोस्टेट के बढ़े हुए के चिह्नः—एक सामान्य चिह्न तो यह है कि बच्चे की पेशाब को धारा सीधी आगे की ओर गिरती है। जब पेशाब की धारा सीधी आगे को न जाकर नीचे पड़े मानो गुरुत्वाकर्षण से नीचे की ओर गिर रही है तो समझें कि कुछ गड़बड़ है। ऐसे ही जब पेशाब अधिक बार आने लगे। यों वर्षा के दिनों में ठण्ड लगने पर, या रस-प्रधान आहार लेने पर भी पेशाब की मात्रा बढ़ जाती है वह एक पृथक् बात है। जब किन्हीं विशेष कारणों या विशेष दिनों ऐसा न होकर स्वाभाविक सा हो जाता है तभी समझते हैं कि प्रोस्टेट बढ़े हैं।

प्रोस्टेट GLAND की और भी अनेक विकृतियां हैं, जो कि एक अच्छे समझदार विशेषज्ञ डाक्टर का विषय है। हमें उस गहराई में नहीं जाना चाहिये, भले ही वह कितनी प्रकार की विकृतियां हों। हमारे आगे बताए जाने वाले उपचार उन सब विकृतियों में प्रभाव-कारी सिद्ध होंगे। यह बात तो अलग है, कि कोई विकार बढ़ गया है और भीतर ही उसके कोई जख्म हो गया है उसे ठीक होने में समय तो अवश्य लगता है, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यह चिकित्सा निश्चित प्रभावकारी होगी। जब यह रहस्य रोगी के हृदय में बैठ गया कि उदर-विकार ही सब रोगों में मूल कारण है तब सबसे पहले पेट को साफ करने का ही प्रयास करना चाहिये। मल का दबाव जो उस पर पड़ रहा है वह हल्का हो जाए। मल के दबाव को दूर करने के लिए "एनिमा" ही सबसे निरापद ढंग है। पांच सात रोज तक विधिवत् एनिमा चार्ट जो अन्यत्र दिया गया है उसको कर लेना

चाहिये। एनिमा की समुचित व्यवस्था न होने पर उदर शुद्धि कर लेनी चाहिये। वह विधि भी हमने अन्यत्र दे दी है। मुनक्का, गुलाब के फूल, अमलतास और सनाय जैसी चीजों का सौम्य विरोचन भी उदर-शुद्धि के लिये ले लेना चाहिये। कष्ट दूर करने के लिये तात्कालिक सफल प्रयोग होगा मूत्रेन्द्रियस्थान के ऊपर भाप और मिट्टी की पट्टी। इतना करते ही बहुत बार देखा कि रोगी को खुलकर पेशाब आने लगा। इसके साथ ही ठीक उसके साथ नीचे की ओर कमर के नीचे भी मिट्टी की पट्टी रखनी चाहिये। उन दिनों आहार में बार-बार नींबू, पानी और फलों का रस जो भी मौसम के फल हों जैसे:— तरबूज का रस, सन्तरे का रस पानी मिलाकर, अनार, सेब, मौसमी, खीरा, नाख, नाशपाती आदि फलों को बारीक कद्दूकस से कसकर निकाला जा सकता है। अधिक खाने की इच्छा हो तो उबली हुई सब्जी व ठोस फल भी लिया जा सकता है। रोगी की यदि अधिक पीड़ायुक्त स्थिति नहीं है तो अच्छा हो कि उसे दीवार के सहारे से ३-४ मिनट का सर्वाङ्गासन या हलासन करवा दिया जाए। इतना करने में भी यदि रोगी असमर्थ हो तो चूतड़ों के नीचे कोई मुलायम गद्दा या तकिया रख कर थोड़ा सा ऊँचा कर देना चाहिये। "उड्डियान बन्ध" भी ऐसे रोगी को बहुत लाभ पहुँचाएगा जिसकी विधि यह है—

उड्डियान बन्धः — घुटनों पर हाथ टेक कर झुक कर खड़े होकर सांस को बाहर निकाल कर पेट को भीतर की ओर सटायें, इस प्रकार बार-बार सांस का बाहर निकालना और पेट को भीतर करना "उड्डियान बन्ध" कहलाता है। उसी के साथ (उसी समय) "अश्विनी मुद्रा" भी कर ली जाए तो विशेष लाभ होगा। "अश्विनी मुद्रा" का प्रकारः—जिस प्रकार (अश्व) घोड़ा लीद करके गुदा को भीतर को संकोचता है और फिर ढीली करता है, उसी प्रकार गुदा का संकोच करना और ढीली करना "अश्विनी मुद्रा" कहलाती है। इस

प्रकार के संकोच-विकासमय व्यायाम से बहुत लाभ होता है। इसे दिन में तीन बार प्रातःकाल, दोपहर और सायंकाल बीस-बीस बार करना चाहिये।

रोग के पूर्व स्वस्थ अवस्था में यदि इस प्रकार के "संकोच प्रसारण" के व्यायाम हम करते रहें तो ऐसा रोग हो ही नहीं सकता।

"शायटिका या यम के जबड़ों से बच निकली"

श्रीमती शान्ति देवी रिटायर्ड मेजर हंसराज (देहरादून) की पत्नी भयंकर शायटिका दर्द से ग्रस्त हो गईं। सर्वप्रथम मिलिटरी हॉस्पिटल में रही, वहाँ से निराश हो के लौटीं; विभिन्न पैथियों की चिकित्सा करवाई। सबसे ऊब कर अब यन्त्र-मन्त्र, टोना-जादू, मियां मौलवी के चक्कर में पड़ीं, अन्त में मरता क्या न करता, प्राकृतिक चिकित्सा की शरण में आईं और चालीस दिन के उपचार से अच्छी होकर चलने लगीं जो इससे पूर्व खटिया पर पड़ी-पड़ी कराहती रहती थीं।

चिंतन का एक प्रकार—मेजर सा० की धर्मपत्नी को क्या रोग था इसे एक वाक्य में कहना कठिन था। टाँग में दर्द है, कोई कह दे वायु विकार, कोई कहे रीह का दर्द, शायटिका या ऐसा कोई भी नाम दे दीजिये। मैं न उससे सहमत हूं न ही उतना सुनकर संतोष ही है। सच पूछें मेरे पास तो उसका कोई नाम ही नहीं। क्या गठिया कहूँ, शरीर के ऊपर के जोड़ों में दर्द नहीं, शरीर में ज्वर नहीं। तब फिर शायटिका है क्या? किसी एक नस विशेष का दर्द नहीं। रीह या वायु कह गर्म उपचार शांति दे पाते हैं क्या? रोगी को सुला देते हैं क्या? ये सब कुछ नहीं कोई एक नाम नहीं। आप विशेषज्ञ हैं कोई नाम नहीं तो नया भी रच सकते हैं पर मेरे पास कोई नाम नहीं। जो आप कह दें नामकरण कर दें मैं स्वीकार कर सम्मान करूंगा।

आखिर फिर था क्या ? वर्षों से बिगड़ते २ पेट ने रक्त को गंदा गाढ़ा कर दिया । पेट विकारों से भरा पड़ा है । टांग में गंदा खून जम रहा है, गतिशून्य सा हो रहा है । पड़ा हुआ विकार ही दर्द का कारण बना बैठा है । पेट में खूब सड़ांद हो रही है जो दिमाग को भी परेशान किए है । न नींद है न चैन है । वैद्य, डा०, हकीम व स्पेशलिस्ट वे नामकरण के अनुसार गर्म उपचार करते हैं जिससे रोग घटने के बजाय बढ़ने लगता है ।

हमारा उपचार—नामरूप की परवाह न कर प्रकृति निर्मित उन मार्गों को शुद्ध करने लगे जिनसे विकार बाहर निकल कर शरीर को स्वच्छ निर्मल रोग रहित बना पाते हैं । विकारों के संग्रहालय पेट को मिट्टी पट्टी व एनिमा से साफ करने लगे । टांग में जमे विकार को पसीना दे निकाला जाने लगा । भीतर रक्त स्रोत को शुद्ध करने के लिए नींबू त्रिफला चूर्ण दूध का पानी जैसी चीजें दी जाने लगीं । आमाशय को विश्राम की दृष्टि से सब्जियों के रस ही आहार के नाम पर दिए गए । रक्त संचार के लिये सुहाते हाथ से तैल मालिश भी की जाती रही । यह था दृष्टिकोण निदान व इलाज के प्रति । घुटने या किसी विशेष स्थान पर गोमूत्र में भीगी मेथी पीस कर वह भी लेप की गई ।

रक्त शुद्ध करने की दृष्टि से गोरखमुंडी जैसी रक्त शोधक वस्तुओं का अर्क भी पिलाया गया । इन सबका परिणाम हुआ माता जी धीरे-धीरे ठीक होने लगीं । जब वह कुछ उठने बैठने लगीं तब पेडूनहान दिया जाने लगा । और आगे चलकर मूत्रेन्द्रियस्नान भी कराया जाने लगा । जो ठंडे पानी से भयभीत थीं आज उसे गर्म पानी ही अखरता है । सर्दी में भी ठंडे पानी का सेवन किया जा रहा है ।

———

सुजाक तथा आतशक (उपदंश)

दोनों ही रोग एक जैसे हैं। दोनों रोगों के कारण भी समान हैं। यों तो मेरी भाषा ही है—"रोग आते नहीं, बुलाए जाते हैं, बुलाए भी नहीं जाते अपितु आमन्त्रित किये जाते हैं।" अन्य रोग हलवाई की दुकानों से तथा होटलों से खरीदे जाते हैं तो ये दोनों व्यभिचार के अड्डों से खरीदे जाते हैं। आतशक, सुजाक वाली स्त्री व पुरुष रोगी का परस्पर सबंध ही मूल कारण है। अन्य तेल अचारादि गर्म पदार्थ ऐसे भयंकर रोग के जनक नहीं हैं। इन गरम पदार्थों से आने वाला उसी प्रकार कष्ट अथवा एलोपैथी की गरम विषाक्त दवाओं के सेवन करने वाले स्त्री पुरुष के भी भीतर एक प्रकार की गर्मी रहती है उसके संबंध से भी ठीक उसी प्रकार के कष्ट की अनुभूति होती है, पर वह कष्ट स्थायी नहीं होता दो तीन दिन में ही वह कष्ट अपने आप दूर हो जाता है। इसलिए इन रोगों के रोगी का ऐसे सामान्य निमित्त कारण बता अपने को पवित्र शुद्ध साबित करना कोई महत्व नहीं रखता।

दोनों के लक्षणों में भेद—सुजाक का जहर शरीर में घुसते ही २-३ दिन बाद ही रोग के लक्षण प्रकट हो जाते हैं। शुरू-२ में मूत्रनली का मुंह सुरसुराता और खुजलाता है। पेशाब लाल व गर्म होता है। पेशाब में जलन व मवाद भी आने लगता है। बाद में सुजाक की असली अवस्था उत्पन्न होती है। पेशाब करते समय भयंकर वेदना होने लगती है। सफेद पीला व हरा मवाद भी आने लगता है। रात को सोते समय जननेन्द्रिय उत्तेजित हो जाती है, जिस कारण रोगी को अत्यन्त कष्ट होता है। आगे चलकर जब रोग पुराना हो जाता है तब पेशाब की जलन कम हो जाती है केवल पीप किसी रंग का आता रहता है। मवाद के कारण पेशाब की धार कम हो जाती है

पेशाब रुक रुक कर आता है। आतशक (उपदंश) का विष शरीर में घुसने के बाद दस दिन में ही रोग के लक्षण पैदा होते हैं। पहले मसूर जैसा दाना प्रकट होता है। फिर यह दाना तीन चार फलों का आकार धारण कर लेता है। मवाद पैदा हो जाता है। धीरे-धीरे सारे शरीर में विष फैल जाता है। जगह जगह बुरी तरह के घाव पैदा हो जाते हैं जो ठीक होने का नाम भी नहीं लेते। जीवन पर्यन्त रोगी इसकी यन्त्रणा भोगता रहता है।

अन्य परिणाम—सामान्य चिकित्सा हो जाने पर बाह्य कष्टकारी चिह्नों के न रहने पर भी ऐसे रोगी के रज वीर्य में भयंकर विष भरा रहता है। प्रथम तो प्रजनन शक्ति नहीं रहती। रज वीर्य दूषित बने रहते हैं। संतान हो भी जाती है तो टिकती नहीं। थोड़े दिनों में मर जाती है। किन्हीं उपचारों से जीवित रह गई तो वह भी जीवन भर रोगी बनी रहेगी। जीवन भर निःसन्तान या रोगी संतान वाला बना रहता है।

पहचान करने का ढंग—किसी स्त्री व पुरुष को उपदंश (आतशक) है या नहीं यह जानने के लिए उसके शरीर के किसी भाग पर नींबू का रस लगा कर देखो। यदि असह्य प्रतीत हो तो समझ लो उपदंश है।

निवारण के उपाय—आयुर्वेद के प्रसिद्ध वैद्य शुद्ध किए पारे के सेवन का सुझाव देते हैं। ऐसे ही योग्य डा० भी किसी न किसी रूप में इसका सेवन कराते हैं। पर मैं कुछ अन्य सरल उपाय बताना चाहता हूं। आज तो बहुत कुछ सूझ बूझ दे सकता हूं इसके बहुत वर्ष पहले अर्थात् आज से ३२ वर्ष पूर्व नि.सन्तान पुरुष जिसकी दूसरी शादी थी संतान न होने के कारण को जब मैंने जाना कि इसे कभी उपदंश हो चुका है जिसका इलाज होने से अब प्रत्यक्ष में कोई कष्ट नहीं है। स्त्री का मासिक धर्म तथा स्वास्थ्य भी ठीक है फिर संतान न होने का आखिर कारण क्या है ? छिपा पड़ा कहीं दबा पड़ा उपदंश का विष।

सफल उपचार हुआ—उसे बताया गया एक तोला त्रिफला चूर्ण प्रातः लेना है । यह पूरा स्मरण नहीं नींबू रस मिश्रित जल संग या केवल सादे पानी संग, आहार में केवल जौ के आटे की रोटी व सब्जी। दाल चावल चाय मीठा जैसी सब वस्तुएं वंद । इक्कीस दिन तक प्रयोग का निर्देश किया गया।

परिणाम–पन्द्रह दिन तक यह प्रयोग करने का परिणाम हुआ छाती में खूब खांसी, हल्का सा बुखार, बस कुछ दिन परेशानी रही अन्ततः उससे मुक्त हो गया। कुछ समय बाद पुत्र हुआ फिर तो संतान होने का क्रम चल पड़ा, अनेक संतानें हुईं ।

सुजाक में आयुर्वेद के अनुभवी विद्वानों के सुझाव

त्रिफला जैसे उदर शोधक चूर्ण से पेट साफ कर लेने पर मूत्र का जुलाब देना हितकर होगा।

कतिपय मूत्र रेचक प्रयोग–१ कच्चे दूध में बरावर का पानी मिला मानो तीन पाव दूध तीन पाव पानी मिला भर पेट पिलाना, खुल-कर पेशाव होगा ।

अथवा २–दही की पतली लस्सी में तीन ग्राम से छः ग्राम तक जवाखार मिला पिलाएं ।

अथवा ३–ककड़ी के बीज ३ ग्राम पीस १। ग्राम कलमी शोरा मिला फांक ऊपर से दूध की लस्सी पीना मूत्रल है।

अथवा ४–कबाब चीनी का चूर्ण १॥ ग्राम फांक पर्याप्त दूध की लस्सी पीना दिन में ३, ४ बार अच्छा मूत्रल है।

अथवा ५–राल का चूर्ण १॥ ग्राम आधा लीटर मट्ठे से सेवन करना भी मूत्रल है। इन सबमें किसी एक वस्तु का सेवन पथ्य पूर्वक रहते हुए कुछ दिन निरंतर किया जाए।

इसी प्रकार के अन्य सुझाव भी हैं। चन्दन का तैल इसके लिए महौषधि मानी गई है। ४-५ बूंद चन्दन का तैल बताशे में रखकर सेवन करने से बड़ा लाभ होगा।

फिटकरी पीसकर ६ ग्राम ले पानी संग १५ दिन लेने से बड़ा आराम आएगा अथवा हरी गिलो कूट पानी में भिगो रखें उसको छान पीना।

सरल एवं सस्ते टोटकों पर एक चिंतन—अनुभवियों ने अपने अनुभव लिखे, मैंने भी उन्हें लाभ की दृष्टि से लिख दिए। लिखने वालों की भाषा है यह प्रयोग अनुभूत रामबाण हैं। निश्चित ही वह रोग रूपी शत्रु को मार देगा और रोगी पीड़ा से मुक्त हो जाएगा। ऐसा मान लेने पर भी मैं ऐसे टोटका चिकित्सा के अधिक पक्ष में नहीं हूँ क्योंकि जहां मन द्वारा पाप का प्रायश्चित नहीं किया जा रहा, जहां सयम को नहीं उभारा जा रहा, जहां तप को महत्व नहीं दिया जा रहा वह चिकित्सा सफल होकर भी सर्वथा असफल है। इस प्रकार की चिकित्सा से कोई एक पीड़ा ठीक होगी पर नई-नई पीड़ाएं बनी रहेंगी। भूल या पाप करने वाला है हमारा मन, उसको न साधा जा रहा है, न संयत किया जा रहा है, न तप में लगाया जा रहा है। उसके सुधरे बिना कैसी चिकित्सा ? तब वास्तविक चिकित्सा होगी संयमप्रधान चिकित्सा जिसमें रोग तो जड़ मूल से जाएगा ही साथ हो मन भी सुधर जाएगा। सुधरा हुआ मन उस प्रकार के पाप से विरत हो जाएगा। आश्रम में चलाई जाने वाली शोधक व संयम व प्रायश्चित्तात्मक चिकित्सा करें।

१. **प्रातः सर्व प्रथम**—जलनेति, तैलनेति, रबड़नेति, वमन करने के बाद प्रायश्चित स्वरूप अत्यंत रक्त शोधक 'आरोग्यामृत' का पान करें। तत्पश्चात् पेड़ू पर ३० मिनट के लिए मिट्टी की पट्टी, बाद में पुस्तक में दिया हुआ एनिमाचार्ट अर्थात् क्रमशः एनिमा के प्रयोग। लगातार ६-७ दिन तक शोधक कड़वे एनिमे कर लें। उसके बाद ४ बूंद चन्दन का तैल तीन माशे गुलुकोज में डाल खाएं या मुनक्का ५ दानें पीस चटनी सी बना उसमें चन्दन तैल की बूंदें डाल सेवन करें। टब की व्यवस्था हो तो शक्ति अनुसार ५-७ मिनट का कटि-

स्नान करें। कटिस्नान के ३० मिनट बाद किसी मौसम के फल का नाश्ता। दोपहर के आहार में बिना नमक मिर्च-मसाले कोई एक सब्जी या दो तीन प्रकार की सब्जियां मिलाकर बनायी जाए। सब्जी को सुस्वादु बनाने के लिए जीरे से थोड़े शुद्ध घी का छोंक लगाएं, पीसी सूखी व हरी धनिया हल्दी डालें। साथ ही मौसम की ताजी खाई जाने वाली सब्जियों का सलाद व कोई फल लें। रोटी नहीं। चार घंटे बाद किसी फल का रस व फल लें। चिकित्सा में किसी दिन प्लास्टिक चादर से अथवा कम्बल की सहायता से पसीना सप्ताह में दो बार। अनुकूल हो वैसी सुविधा हो तो केवल मिट्टी का सर्वांग लेप अथवा मिट्टी व गाय का गोबर मिला सारे शरीर का लेप कर सूखने पर स्नान। सप्ताह में दो बार ऐसा लेप हो जाए तो बहुत अच्छा। सप्ताह में दो बार गीली चादर का सर्वांग लपेट। रात्रि में जौ या मक्की के आटे की रोटी व बिन नमक वाली सब्जी। इतना कुछ दिन कर लेने के बाद केवल फल-सब्जी पर रहना तथा बाद में केवल रसाहार, बाद में ५-७ या १० दिन तक सामर्थ्यानुसार उपवास। उपवास काल में दिन में बार-बार वमन का प्रयोग तथा अन्यान्य उपचार चलाए जाएं। उपवास समाप्ति भी रसाहार, फलाहार व नियमित आहार से की जाए। इस प्रकार चलाई गई चिकित्सा से निश्चित ही रोग भी जड़ मूल से जाएगा मन भी पवित्र हो जाएगा। इस प्रकार की चिकित्सा चला साथ में किसी एक टोटके को भी चला लें। तब पहले बताए गए प्रयोग या आगे बताए जाने वाले किसी प्रयोग को करके पूर्ण लाभ उठाएं। सत्यानासी की जड़ की छाल ६ ग्राम पीस पानी संग लें। गुलाब के पत्ते ६ ग्राम लेकर रात्रि में २५० ग्राम पानी में भिगोकर रखें मल छानकर पिएं। सप्ताह भर पीने से ही पेशाब करते समय जो पीड़ा होती है उसमें बड़ा लाभ होता है। मूत्रनली में बने हुए जख्मों को ठीक करने के लिए नीम पत्तों का पानी, त्रिफला या पोटाश आफ परमेंगनेट से पिचकारी द्वारा

धोना हितकर होगा। ऐसा करना भी कठिन जान पड़े तो इनमें से किसी एक वस्तु के पानी को गिलास में भरकर मूत्रनली को भिगोकर डुबो कर रखें ८-१० मिनट के लिए।

(उपदंश) आतशक में भी ऊपर बताई गई तप:प्रधान संयम चिकित्सा करनी होगी। उसके साथ कुछ लाभकारी टोटके दिए जा रहे हैं जिन्हें कर शरीर व मन से स्वस्थ हो सकते हैं। अरीठा या रीठा (जो कपड़े धोने के काम भी आता है) इसमें विशेष रूप से प्रयुक्त होता है।

रीठे के छिलके को धूप में सुखा पीस गोलियां बनानी हैं केवल उड़द के दाने बराबर। प्रात: २ गोली लेनी हैं दही की लस्सी के साथ निरंतर एक मास तक।

अथवा

प्रात:, दोपहर व सायं आधा आधा ग्राम मीठी दही की लस्सी के संग।

अथवा

सत्यानाशी की जड़ ६ ग्राम बकरी के दूध २५० ग्राम के साथ पीस सेवन करें। जड़ को दूध संग पीस घावों पर लगाने से बड़ा लाभ होता है।

अथवा

अर्क उशबा ५० ग्राम प्रात: सायं सेवन करने से बड़ा लाभ होता है। अर्क उशबा के स्थान पर उशबा ५० ग्राम भिगो १० घंटे बाद छान बोतल में भर कर रखें। प्रयोग में लाएं।

अथवा

चोप चीनी चूर्णकर ४ ग्राम प्रतिदिन मधु संग सेवन करना लाभप्रद है। इसी प्रकार सुजाक की चिकित्सा में बताए चन्दन तैल का प्रयोग करना हितप्रद है। ऐसे रोगों के रुके विषों के प्रभाव होते हैं शरीर में गठिया या कैंसर जैसे मूंजी रोग।

धातु विकार—वीर्य संबंधी दोष के प्रकरण में सबसे पहले नं० पर स्वप्नदोष का नाम आता है। समाज में बहुत कम ही आदमी

होंगे जिन्हें यह विकार न हो। मन में स्त्रियों के हाव भाव, चित्रों के आकर्षण के संस्कार संजोए रहते हैं, बस फिर क्या है जरा सा कोई निमित्त बना शरोर के भीतर तापमान बढ़ा उत्तेजना हुई मानस चक्षुओं के सामने स्त्री का चित्र आया, उसका मिलन हुआ सामान्य दर्शन मात्र से या और आगे बढ़कर आलिंगन या चुम्बनादि स्पर्श से वीर्यस्खलन हो जाता है। तब रोगी की जाग खुलती है। यह सारा बनावटी दृश्य उसके सामने घूमने लगता है। स्वप्न में यह सब विकार होता है अतः स्वप्नदोष का रोग कहलाता है। भले ही मन में स्त्रियों के प्रति प्रवल आकर्षण संस्कार के रूप में पड़े रहते हैं बस निमित्त कारण मिलते ही एक नाटक सा रचा जाता है और आए दिन एक खिलवाड़ सा बना रहता है। रोग वढ़ जाने पर तो विना इस नाटक के हो किसी भी कारण से बिना स्वप्न के ही वीर्य स्खलन हो जाएगा।

निमित्त कारण के रूप में सारा आवा ही बिगड़ा रहता है। एक ओर कब्ज आंतों में सड़ रहे मल की गर्मी, दूसरी ओर अनापशनाप खाने की लत, मीठा अधिक खाने के परिणाम स्वरूप रक्त अत्यंत विकृत हो जाता है। उधर चाट पकोड़ियां नमकीन खट्टे पदार्थ उस समय अग्नि में घृताहुति का काम कर रहे होते हैं। लोवर भी ठीक से काम नहीं कर रहा होता। लीवर में भी बिगड़ा पित्त पित्ताशय में भरा-२ अजीब गर्मी बनाए रखता है। रक्त का विकार व लीवर में पित्ताशय की भयंकर गर्मी से स्नायुसंस्थान भी अत्यंत विकृत संवेदनशील बन जाता है। इन सबके बिगड़े रहने पर सिनेमा के दृश्य, वाजार में महिलाओं के हार श्रृंगार लिबास के मोहक दृश्य दिन पर दिन उसे बढ़ावा देने लगते हैं। दस पन्द्रह दिन पर यह स्वप्न दोष हुआ तो उतना नहीं अखरता। जब वह सप्ताह में एक दो बार होने लगता है तब भयंकर स्थिति मानी जाती है ऐसा होने पर जब आगे के कुलक्षण दीखने लगते हैं।

एक बड़ी भूल—उन्हीं दिनों एक बड़ी भूल यह होती है रोगी व उसके अभिभावक भी ऐसा सोचने लगते हैं स्वप्न दोष होने से जो धातु के स्राव से कमजोरी आ रही है उसके निवारणार्थ दूध देना हितकर होगा वह भी रात को गरम किया हुआ। चीनी जैसा हल्का विष मिला ठीक सोते समय गरम-गरम या फिर ठंडा भी पिया जाता है वह तो रही सही कसर भी पूरी कर देता है। मानों बांध ही टूट जाता है। स्वप्न दोष और अधिक जल्दी जल्दी होने लगता है। कम वय के युवकों में स्वप्न दोष को बढ़ाने वाला, प्रौढ़ों को तथा और अधिक आयु वालों को खाँसी, जुकाम, कान की बधिरता, मोतिया बिंद पैदा करने वाला बनता है यह रात को भोजन करने के वाद पिया जाने वाला मीठा दूध।

स्वप्न दोष के रोगी को आगे चलकर कमर में दर्द रहना, स्मरण शक्ति की कमी, अकारण नाना प्रकार की चिन्ताओं का होना, चित्त उदास होना, पागलपन का आभास होना, बिना कारण भय होना, काम करने की शक्ति का नाश, आँखों का भीतर धस जाना, कपोलों गालों का चिपक जाना, जरा सा काम करते ही थकावट, निर्जन स्थान में रहने की इच्छा करना, हृदय का धक् धुक् करना, जीर्ण शीण होना, जीवन से निराश, कब्जियत, अजीर्ण आदि लक्षण पाए जाते हैं। यह स्थिति चिन्तनीय मानी जाती है।

सफल चिकित्सा—कुछ भी उपाय बताने के पूर्व ठीक होगा आप के मन में बैठा दूँ कि जब तक रोग के दोनों कारणों को—एक उपादान कारण दूसरा निमित्त कारण को—दृढ़ता से, संयम से दूर नहीं हटा देते तब तक ऊपर को चिकित्सा द्वारा लाभ उठाने की बात सोचना आकाश के फूल तोड़ना मात्र कहा जाएगा। केवल एक शेखी हाँकने जैसी बात होगी मैंने सकड़ों रु० खर्च कर दिए। मानों आप इतने उदार हैं, फरागदिल हैं, अपने रोग के लिए पानी की भांति रु० को बहा सकते हैं।

१–उपादान कारण है शरीर की दूषित दशा। यकृत (लीवर) में गर्मी की बहुलता, रक्त में अम्लता की प्रधानता, आँतों में मल की सडांद, मन में दूषित चिन्तन, सिनेमा में अश्लील चित्रों के देखने में अभिरुचि। २– निमत्त कारण—स्वादिष्ट भोजन का अधिक मात्रा में खाना, चाट, खट्टी, गर्म मिर्च मसाले, नमकीन गर्म रोटी खाना मीठा मिला दूध पीना, एक चीज पचे बिना दूसरा कुछ खाते रहना इन सारी बातों में संयम पालन करना होगा। इन दोनों कारणों को साहस, संयम व दृढ़ता पूर्वक हटाने का संकल्प व प्रयास करने पर आगे लिखे उपचार व टोटकों से आशातीत लाभ होगा।

प्रथम उपाय—यदि रोगी २० वर्ष या कुछ अधिक वर्ष का है तो पहला सफल प्रयोग होगा उसका विवाह कर देना। यदि मेरे बताए पहले के दोनों कारणों को दूर करने का भी प्रयास हुआ साथ ही विवाह करा दिया तो निश्चित एक चमत्कारी लाभ होगा। स्वास्थ्य की अमूल्य संपदा को नष्ट होने से बचा लेंगे।

उपादान कारण अर्थात् शरीरस्थ विकार संशुद्धि के लिए करें–पेट पर मिट्टी की पट्टी, एनिमा, कटि स्नान(पेडू नहान) के बाद कुछ योगासन जैसे उत्तानपादासन, नौकासन, पश्चिमोत्तान, हलासन, सर्वांगासन, सर्प व भुजंगासन, तथा विशेष रूप से करना है उड्डियान, साथ ही लोम विलोम, भस्त्रिका व सीतकारी प्राणायाम, कटि-स्नान के पहले पेडू के पिछले भाग कमर पर गरम-ठंडा सेक करना बड़ा लाभप्रद होगा। उससे स्नायुकेन्द्र सबल हो जाता है। बहुत ठंड न हो तो अच्छा हो रोगी प्रातः सायं दोनों समय ठंडे पानी से स्नान करे। वैसे यह सदा ध्यान रखे सोने के पूर्व हाथ पांव के भाग पिंडलियों व कोहनियों तक तथा गर्दन के पीछे व कानों को ठीक से ठंडें पानी से धोकर ही सोए। रात्रि का भोजन सोने के तीन घंटे पहले कर लिया जाए।

अपथ्य परित्याग—मेरी चिकित्सा का महत्वपूर्ण सूत्र है—

"व्रत प्रायश्चित्ताभ्यां सर्वरोग निराकरणम्" व्रत और प्रायश्चित द्वारा सभी रोगों का दूरीकरण। तब व्रत लेना होगा उन सब अपथ्य-कारी वस्तुओं का परित्याग—मांस, मछली, अंडा, लहसुन, प्याज, गर्म मसाला, सिनेमा व दुःसंग का त्याग, पौष्टिक भारी भोजन, काफी, चाय, तम्बाकू, चाट पकोड़े, मीठे का अति सेवन, अधिक नमक खाना नमकीन रोटी, गरम-२ भोजन, गरम गरम मीठा दूध, ऐसी सभी वस्तुओं का त्याग कर दें।

कामाग्नि तूफान का समय तथा सुन्दर उपमा

कामाग्नि तूफान का समय लड़कों को १५, १६ वर्ष की आयु से २०-२२ वर्ष की आयु तक प्रधान रूप से रहता है। लड़कियों में १२-१३ वर्ष की आयु से १७-१८ वर्ष की आयु तक भयंकर तूफान आता है। पर इस तूफान को स्वाभाविक न मान लेना चाहिए वह तो एक उफान आकर पकने की दशा होती है। उस समय अभिभावक का काम होता है संरक्षण करना। संयम से वह समय निकाल दिया फिर उतना खतरा नहीं रहता।

एक सुन्दर उपमा—एक कढ़ाही में २० लीटर दूध समाता है। उस कढ़ाही में पांच लीटर दूध और डाला आग पर चढ़ाया उफान आया सारी कढ़ाही में दूध भर गया, बाहर निकलने को तैयार हो गया पर ज्यों ही थोड़ा जल का छींटा दिया कि उफान बैठ गया। उस समय यह मान लेना कि कढ़ाही में और अधिक दूध समा ही नहीं सकता, न यह कहना ठीक होगा कि पांच लीटर दूध बीस लीटर बन गया। दुबारा उफान आया डंडे या कड़छी से हिला दिया, तीसरी चौथी बार भी कड़छी घुमा दी और दूध नीचे बैठ गया। अब उफान आना ही सर्वथा के लिए बंद हो गया। दूध पक कर गाढ़ा होता जा रहा है। ठीक ऐसी दशा वीर्य पाक काल की है उसे बुद्धिमत्ता से पार कर

लिया, उफान पर विजय पा लिया, कुछ खतरे से बाहर आ गए।

खतरे से वचे रहने के लिए ब्रह्मचर्य की परिभाषा को ठोक से समझना—

ब्रह्मचर्य परिभाषा—अष्टविध मैथुन का परित्याग । पूर्व देखे सुने मैथुन का ध्यान आना या संभोग योग्य व्यक्ति का ध्यान आना । मैथुन की बातें करना, मैथुन को प्रोत्साहन करने वाले नाटक पढ़ना, अश्लील गाने । केलि-काम क्रीडा मखौल मजाक हाथापाई करना, चिकोटी भरना, छेड़ छाड़ करना, हाथ पांव आंख के इशारे करना ।

आठ प्रकार का मैथुन—

स्मरणं, कीर्तनं केलिः प्रेक्षणम् गुह्य भाषणम ।
संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिवृत्तिरेव च ॥

स्त्रियों का चाह पूर्वक स्मरण करना, उनका गुणगान करना ।

केलिः—उनके साथ खेलना, क्रीड़ा, मजाक, हंसी करना ।

प्रेक्षणम्:—उन्हें काम भाव से देखना दृष्टि मैथुन, दर्शनजन्य काम वासना । गुह्य भाषणम्—छिपकर उनसे वार्तालाप करना । मन में उसे पाने का निश्चय करना, तथा निश्चयानुसार काम करना, व क्रिया समाप्ति-परस्पर मैथुन समाप्ति वीर्यपात । अपने को वचाए रखने के लिए विपरीत लिंग अर्थात् पुरुष का स्त्री के प्रति, स्त्री का पुरुष के प्रति इन भावों से मन से बचे रहने का दृढ़ संकल्प होना चाहिए ।

शरीर में वीर्य की महत्ता को ठीक से समझें--

अग्नि मूलं बलं पुंसां रेतोमूलं च जीवितम् ।
तस्मात् सर्व प्रयत्नेन वह्नि शुक्रं च रक्षयेत् ॥

मनुष्य का वल तो जठराग्नि (कुवतेहाजमा) मूलक है, पाचन क्रिया के आश्रित बल है । जीवन अर्थात् आयु वीर्याश्रित है, अतः सब प्रकार से प्रयत्न करके जठराग्नि व वीर्य की रक्षा करनी चाहिए ।

शरीर रक्षण को सब धर्मों का मूल माना—

शरीरं धर्मसर्वस्वं रक्षणीयं प्रयत्नतः ।
शरीरात् सूयते धर्मः पर्वतात् सलिलं यथा ॥

धर्म के आधार स्वरूप शरीर की बड़े प्रयत्न से रक्षा करनी चाहिए क्योंकि जैसे पहाड़ से पानी बहता है वैसे ही शरीर से धर्म प्रवाहित होता है।

शरीर स्वस्थ रहे इसके लिए हर व्यक्ति को उस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करना ही चाहिए—

दिनचर्यां निशाचर्यामृतुचर्यां यथोदिताम् ।
आचरन्पुरुषः स्वस्थः सदा तिष्ठति नान्यथा ॥

मनुष्य को स्वस्थ बने रहने के लिए शास्त्र में लिखी दिनचर्या, रात्रिचर्या तथा ऋतुचर्या का ठीक से ज्ञान प्राप्त कर आचरण में लाना चाहिए।

स्वास्थ्य रक्षा के तीन मुख्य साधन हैं—(१) ब्रह्मचर्य, (२) प्राणायाम, तथा (३) बलवर्धक रसायन औषधि सेवन।

शरीर में सप्तम धातु वीर्य के निर्माण के संबंध में ठीक जानकारी का स्मरण भी बना रहना चाहिए ताकि मन में उसके संरक्षण का भाव बना रहे।

ब्रह्मचर्य के संबंध में कुछ मनीषियों का तात्विक चिन्तन—

पूर्ण संयम आवश्यक नहीं क्योंकि काम की इच्छा को बलपूर्वक दबाया गया तो वह दूसरे मार्ग में उन्मुख हो जायगी और यह स्वाभाविक संतुष्टि की अपेक्षा अधिक हानिकर सिद्ध होगी।

काम हमारे जीवन का रचनात्मक फव्वारा है

इसे दबाना हमारा उद्देश्य नहीं बल्कि इसको नियंत्रित करना ही वास्तविक लक्ष्य है। वशीभूत कर मस्तिष्क को शादी वाले भाग की ओर उन्मुख किया जाए।

दो संभोगों की अवधि बढ़ाई जानी चाहिए। संभोग के बारे में

संभोग के समय के अतिरिक्त विचार नहीं करना चाहिए।

इसी प्रकार अन्य कुछ उपयोगी बातों का सदा ध्यान रखें जैसे—

१-कब्ज न होने दें। उसके लिए प्रातः उषः पान अर्थात् शौच जाने के पूर्व पाव डंढ़ पाव जल पीना शौच लाने में सहायक होता है।

२- मौसम की ताजी कच्ची सब्जियों का सलाद बनाकर खाना, ऋतुज फल सेवन का ध्यान रखना भी कब्ज दूरीकरण का प्रधान साधन है। पर्याप्त मात्रा मे पकाई सब्जी का सेवन करना।

३—चोकर (गेंहू के आटे का छानस—चापड़, छिलका) भूनकर सब्जी में मिला खाना, या फल के गूदे संग खाना, या कच्चे चोकर को दूध में पका खीर बनाकर खाना। इस प्रकार के आहार सेवन से कब्ज न रहेगा।

४—स्वप्नदोष न हो इसके लिए रात को सोने के पहले मूत्रेन्द्रिय एवं मसाने को १० मिनट तक ठण्ड पानी से धोकर सोना भी सहायक होता है।

५-चित्त न सोएं हमेशा किसी करवट सोने का ध्यान रह। कमर के नाचे पीतल की कटोरी बांधने से चित्त सोने की कुटेव से बचे रहेंगे।

६—सोने के समय से दो घंटे पहले रात का भोजन करलें। वह भोजन हल्का होना चाहिए। मिर्च मसाले खटाई अचार वाला भी न हो।

७-सोते समय भूलकर गरम् दूध पीकर न सोएं।

८—प्रातः कुछ दौड़ने का नियम बनाएं। योगासन करें। प्राणायाम करें। प्राणायाम शब्द सुनकर न चौंकें न इस प्रतीक्षा में ही रहें कि कब आपको योग्य उपदेशक योगी गुरु मिलेगा तब आप प्राणायाम सीख पाएंगे। खूब तेजी से हाथों को हिलाते हुए चलना शुरू करें, लम्बे लम्बे श्वास लेते चलें। बिना रोके ही धीरे-धीरे छोड़ते जाएं बस हो गया यह प्राणायाम का ढंग। लम्बे श्वास लेना व छोड़ना ही

प्राणायाम है। योग्य व्यक्ति मिल जाने पर तब और सीख लें। किसी भी प्रकार की कसरत करनी है। कसरत से अंग प्रत्यंग हरकत करता है कामवासना कम होती है। गाढ़ी निद्रा आती है। मस्तिष्क में गर्मी नहीं रहती।

९–भोजन के तुरन्त बाद पेशाब करलें।

१०–अच्छा हो खाट पर सोने के पूर्व उन प्रातःस्मरणीय उज्ज्वल चरित्रा देवियों के पवित्र नामों का स्मरण कर सोएं—

मैत्रेयी कात्यायनी गार्गी अरुंधती सीता मदालसा और
अहिल्या को नित्य सिमरूं।
बुरा सपना कभी न देखूं॥

इन देवियों का २१ बार स्मरण कर सोएं।

११–एक सुन्दर ढंग की दिनचर्या बना लें। नहाते समय ठंडा जल देर तक सिर पर डालते रहें। नदी या तालाब में तैरना बहुत हितकर है।

१२–मन में काम संबंधी विचार या चेष्टा होने पर तेजी से चलते हुए सैर करें।

१३–आश्चर्य पैदा करने वाली पुस्तकें पढ़ने से भी कामवृत्ति बदल जाती है।

१४–कुछ का कहना है उस समय खट्टा फल खाने से मैथुन की वृत्ति की प्रबल वासना नष्ट हो जाती है।

१५–वीर्य की कीमत का गहराई से चिंतन करना कितनी अनमोल वस्तु है। सम्पूर्ण खाद्य का अंतिम परिणाम यह वीर्य है। ब्रह्मचर्य सबंधी पुस्तकों का अध्ययन करना, महापुरुषों की जीवनियां पढ़ना।

दैनिक चर्या का सुन्दर ढंग निर्धारित करलें

१–प्रातः सूर्योदय से एक घंटा पूर्व अवश्य उठने का नियम बना लें।

उषा वेला—जब पूर्व की ओर सूर्योदय के पूर्व सुन्दर लाल आभा

दिखाई पडती है उस उषा बेला के संबंध में ऋग्वेद में एक पूरा सूक्त ही उषा सूक्त है। उसके १२३ वें सूक्त में बताया गया है कि यह उषा देवी जब प्रभात की पहली ज्योति के साथ किरणों के रथ पर आरूढ़ हो कर आगे बढ़ती है तो अपने साथ चार वस्तुएं लेकर चलती है। उन्हें बांटती हुई चलती है। पर देती है उन्हें जो जागते हैं। वे चार वस्तुएं हैं—(१) बुद्धि, (२) बल, (३) धन और (४) यश।

हर रात के पिछले पहर में इक दौलत लुटती रहती है।
जो जागते हैं वो पाते हैं, जो सोते हैं वो खोते हैं।

इस सूक्त में एक मन्त्र आया है जिसमें कहा गया है कि देखो ! उषा का विशाल रथ जुड़ गया है। अजर और अमर देवता इसमें सवार हो गए हैं।

उषा देवी देवताओं को साथ लेकर मनुष्यों के रोगों को दूर करने के लिए आगे बढ़ रही है।

ब्राह्ममुहूर्त में उठ शौच पेशाब से निवृत्त होकर मुंह हाथ धोकर थोड़ी देर बैठ गायत्री जप करें। कुछ ध्यान करें। तब योगासन प्राणायाम करें। प्रातराश नाश्ते के रूप में किसी फल का मोसमी फल का नाश्ता या साथ में धारोष्ण दूध या केवल कच्चा फीका दूध। दोपहर व रात्रि में सात्विक आहार।

स्वप्नदोष निवारक समुचित चिकित्सा का प्रकार

प्रातः—पेंडू पर मिट्टी की पट्टी ३० मिनट से ४५ मिनट तक तत्पश्चात् एनिमा चार्ट (देखें एनिमा चार्ट सूचि) एनिमा के बाद ५,७, या १० मिनट तक कटि स्नान करें। कटि स्नान से जल की शामक शक्ति पेट व मूत्राशय की गर्मी को शांत करती है। मनोविकार का दमन होता है। गाढी निद्रा आती है।

१–रात को सूखे आंवले कांच के गिलास या कप में १, २ तोला भिगो रखें प्रातः उठकर पी लें। प्रातः भिगा कर रखे हुए रात्रि को सोते समय पीकर सोएं।

२–ब्राह्मी चूर्ण ६ माशे प्रातः व सायं दोनों समय जल या ताजे दूध संग।

३–अथवा–ब्राह्मी व शंख पुष्पी चूर्ण दोनों मिला छः छः माशे प्रातः सायं लेना हितकर है।

४–अथवा जामुन गुठली चूर्ण ६-६ माशे प्रातः सायं जल संग।

५-अथवा धनिया, खशखश, पोस्तडोडा समभाग ले देसी खांड चीनी मिला प्रातः सायं ६-६ माशे लेना। इससे धातु पुष्टि होती है।

६–इमली के बीज १२५ ग्राम लेकर डेढ़ पाव २७५ ग्राम दूध में भिगो रखें। १० घण्टे बाद निकाल छील सुखा चूर्ण बना ६-६ ग्राम प्रातः सायं लेना चाहिए फीके दूध संग या ताजे जल से।

७–वीर्य को गाढ़ा करते हुए अवरोधक बन स्वप्नदोष निवारक बट दूध ले उसमें तालमखाने जितने भीग सकें भिगोएं, सूखने पर कूट छोटी इलायची आधा भाग मिला चूर्ण बना प्रातः सायं ६-६ ग्राम दूध संग सेवन करें। वीर्य गाढ़ा होगा सेवन करने वाले को आश्चर्य होगा। तीन सप्ताह पर्यन्त।

ठीक इसी प्रकार वीर्य गाढ़ा व पुष्ट करने वाला प्रयोग होगा—

८. बीजाबंद ४, ४ ग्राम प्रातः सायम् जल संग लेना। प्रातः निहार मुंह ही सेवन करें। २१ दिन

९. पेशाब संग लेसदार धातु गिरने की दशा में जामुन की गुठलियों का चूर्ण बना अथवा कीकर की (बबूल की) कच्ची फलियां सुखा चूर्ण बना ४-४ ग्राम देसी खांड मिला लेना।

१०. इसी प्रकार वीर्य को गाढ़ा व पुष्ट करने में चमत्कारी जादू भरी खीर— शतावर ५० ग्राम
सालम मिश्री २५ ग्रा०
मूसली सफेद २५ ग्राम

तीनों का चूर्ण बना रखें। ४०० ग्राम दूध में ६, ६ ग्राम चूर्ण डाल

एक उबाल दिला. मुनक्का बीज निकले १०-१२ दाने डालें कुछ मेवा मिला प्रातः सायं सेवन करें २५ दिन पर्यन्त ।

यह खीर अनेक कष्टों में प्रभावकारी असर दिखाती है—

कमर दर्द, सुस्ती कमजोरी, दिमागी कमजोरी दूर करना, वीर्य को गाढ़ा कर रोकना । स्त्रियों के प्रदर (ल्यूकोरिया) को ठीक करना। नपुंसकता जैसी दशा को ठीक करना ।

११. नागौरी असगंध कूट छान तैयार कर आधी देशी खांड मिला प्रातः सायं १०-१० ग्राम दूध संग सेवन करना अपार बल एवं शक्ति देने वाला है ।

१२. बट का दूध ५, ६ बूंद बताशे में रख खाना ऊपर से धारोष्ण दूध फीका पीना अत्यंत लाभप्रद है । बट दूध सूर्योदय के पूर्व अच्छा निकलता है । इस प्रयोग से वीर्य में कीट संख्या बढ़ जाती है साथ हो दृढ़ता से ब्रह्मचर्य का पालन करें ।

१३. वोर्य गाढ़ा करने के लिए सत्व गिलो और वंशलोचन असली (तवासीर) बराबर ले कूट २ ग्राम चूर्ण शहद संग लेने से वीर्य गाढ़ा हो जाता है स्वतः स्खलित नहीं होता।

१४ गरीबों का सस्ता वीर्यवर्धक नुस्खा—गूलर के कच्चे फल लेकर सुखा चूर्ण बना देसी खांड मिला १० ग्राम प्रातः सायं दूध संग लें । अत्यंत बलवर्धक पौष्टिक योग है ।

शक्ति का खजाना—हल्दी की गांठें पाव भर २५० ग्राम, अनबुझा चूना आधा किलो, पानी १ एक किलो । एक मिट्टी के घड़े में हल्दी व चूना डालें ऊपर से पानो डालें। पानी डालते बराबर चूना पकने लगेगा तभी ऊपर से ढाक दें, कहीं संभालकर बांधकर रख दें। दो मास बाद खोल हल्दी की गांठों को साफ कर सुखा लें और कूट पीस कर बोतल में भर कर रख दें यह शक्ति की दवा तैयार हो गई । ३ ग्राम औषधि प्रातः १० ग्राम शहद संग सेवन करें, निरंतर साठ दिन अवश्य सेवन कर देखें। इससे नवजीवन सा जान पड़ता है । नई शक्ति

प्राप्त होती है। मुखमंडल दमकने लगता है। रक्त शुद्ध होता है। सफेद बाल काले होने लगते हैं। इसके सेवन से वृद्ध पुरुष अपने को युवक सा मानने लगते हैं।

१५. छुहारों की गुठली निकाल कर उसमें ४, ४ ग्रेन शुद्ध गूगल भर दें और दूध में पकाएं, प्रातः सायं एक एक छुहारा खाएं और ऊपर से दूध पिएं। जहां बल व शक्ति बढ़ेगी वहां कमर दर्द यदि वायु के कारण होगा तो वह भी ठीक होगा।

१६. केवल असगंध चूर्ण छः माशे प्रातः सायम् दूध संग लेने से वीर्य की पुष्टि होती है।

विशेष विवेक से काम लेना होगा—

स्वप्नदोष के संबंध में मैंने अनेक टोटके लिख दिए, अनेक प्रयोगों में देशी खांड मिला कर सेवन की बात लिखी गई। साथ ही दूध संग लें यह भी लिखा गया। यह सेवन करने वाले को देखना है मैं चीनी व दूध का भी अधिकारी हूं या नहीं ? क्योंकि मैं देखता हूं यह चाय चीनी का युग है प्रायः सबका खून अधिक मीठे के सेवन से खराब हो रहा है परिणाम स्वरूप खाज, खुजली, दाद, एक्जिमा, मसूढ़ों की खराबी, दाढ़ दांत का खोखलापन व दर्द, या पेशाब अधिक आना या आंशिक मधुमेह (डायब्टीज) का रोग है। अथवा शरीर में कहीं फोड़े फुंसियां हैं तब समझें आप उतने मीठे के भी अधिकारी नहीं हैं। तब बिना देशी खांड मिलाए फीका चूर्ण ही सेवन करें। इसी प्रकार यदि पाचन क्रिया बिगड़ चुकी है ठीक भूख ही नहीं लगती या दूध से जुकाम व रेशा होने लगता है तब दूध के भी अधिकारी नहीं हैं। पानी से ही चूर्ण लें।

इस प्रकार के प्रभावकारी टोटके बताकर भी मैं पुनः उस मूल बात पर ही जोर दूंगा कि बदला जाए मन को जिसमें बुरे विचार बनते व सारी धातुओं व शरीर इन्द्रियों को संचालित करते हैं। मैं इसे भी ठीक समझता हूं जब दिन भर अनाप शनाप खा खाकर रक्त

इतना दूषित हो जाता है, तो वह दूषित हुआ रक्त ही मन को प्रभावित कर रहा होता है या सीधे रोग का कारण बना दिखाई देता है तब रोगी न तो कुत्सित साहित्य पढ़ता है न सिनेमा देखता है न कोई खराब चिंतन व संगति ही होती है पर अपने आप में उभरा हुआ रहता है। ऐसी दशा को ही समझें यह अधिक खाने बार बार खाने असमय में खाने का भी एक दोष मानसिक विकार ही है। इसे ही ठीक करने के लिए दिनचर्या परिवर्तन पर जोर डाला जा रहा है। दिनचर्या बदलें, स्वाध्याय से मन को बदलें, वीर्य की उत्पत्ति की शास्त्रीय प्रक्रिया को मन में बैठाएं, उसके महत्व को ठीक समझ पाएं तभी ये ऊपर बताए टोटके चमत्कारी सिद्ध होंगे।

मेरा मंतव्य है संयम व सदाचार को उभारना न कि टोटकों को महत्व देना।

वीर्य उत्पत्ति का शास्त्रीय महत है—हम जो कुछ खाते हैं वह कैसे कब किस क्रम से वीर्य के रूप में परिणत होता है—

रसात् रक्तं ततो मांसं मांसान् मेदः प्रजायते।
मेदसोऽस्थि ततो मज्जा मज्जातः शुक्रसंभवः॥

जो कुछ खाया पिया जाता है समान वायु के सहयोग से पेट में पहुँचता है एक प्रकार की मन्थन प्रक्रिया होती है। अनेक रसों के मिश्रण से रस रूप में परिणत होता है। तब रस से रक्त-खून बनता है। रक्त से मांस, मांस से मेद (चर्बी), मेद से मज्जा (हड्डी के भीतर सफेद पदार्थ), मज्जा से शुक्र वीर्य या रज बनता है। प्रत्येक धातु शुद्ध रूप में ४, ४ दिन में आता है अतः वीर्य विकारों में औषधि सेवन की सामान्य अवधि एक मास मानी जाती है। इतना समय या कुछ अधिक समय तक सेवन करने पर ही पर्याप्त लाभ होता है।

———

धातु दुर्बलता

लक्षण—जरा सी उत्तेजना होने पर वीर्य का स्खलन होना अथवा बिना उत्तेजना के ही पेशाब के साथ धातु का स्राव होना, धातु दौर्बल्य कहलाता है। जब यह रोग बढ़ जाता है, तव तो मल त्याग के समय जोर लगाने पर अथवा पेशाब के पहले या अन्त में, घोड़े पर चढ़ने से, साइकिल आदि की सवारी करने पर जहां जरा सा चूतड़ों पर नीचे की नसों पर जोर पड़ा कि धातु स्राव हुआ। किसी भी पशु को कामचेष्टारत् देखकर अथवा स्त्रीमात्र को देखने से ही धातु स्खलन होने लगता है। परिणामतः धातु की इस दुर्बल दशा में शरीर जीर्ण शीर्ण हो जाता है। कमर में दर्द रहना, स्मरण शक्ति की कमी, अकारण ही चिन्ताओं से घिरे रहना, उदास चित्त बने रहना, हल्का सा पागलपन का आभास होना, बिना कारण भयभीत होना, काम करने की शक्ति का नाश, आंखों का भीतर धस जाना, गालों (कपोलों) का चिपक जाना, नेत्र ज्योति की कमी, जरा सा काम करते ही थक जाना, निर्जन स्थान में रहने की इच्छा करना, लोगों से मिलने जुलने या बात करने में अनिच्छा, जरा सी बात में हृदय का धुक-२ करना, जीवन से निराश, कब्ज बने रहना और अजीर्णादि इस रोग के परिणामी लक्षण होते हैं।

रोग के कारण—अनाप-शनाप चीजों का खाना, मिर्च मसाले वाली तामसिक चीजों का प्रयोग, अनेक प्रकार की मिठाइयों एवं गरिष्ट भोजन का प्रयोग करना। उसके साथ ही मन को चंचल करने वाली पुस्तकों का पढ़ना, विषय भोग सम्बन्धी बातों का निरन्तर चिन्तन करना, अश्लोल गाने गाना तथा स्त्रियों को कामवासना की दृष्टि से देखना आदि कामुकता के विचारों से ही इस रोग की उत्पत्ति

होती है। संक्षेप में कहूँ तो बुरी संगत, श्रम का अभाव, भारी भोजन के सेवन से स्नायु मंडल इतना विकृत हो जाता है कि तनिक सी बात में ही उत्तेजना आने लगती है। पर जब स्त्री संग का प्रसंग प्राप्त नहीं होता तो यही भयंकर रोग बन जाता है। अब उपचार के रूप में मैं अपने उसी बहुचर्चित सूत्र को दोहराऊंगा।

व्रत प्रायश्चित्ताभ्याम्
सर्वरोग निराकरणम्।

जैसा कि सुश्रुत ने कहा—

'संक्षेपतः क्रियायोगो निदानम् परिवर्जनम्'

(जिस कारण से रोग उत्पन्न हो गया है, उसको छोड़ देना ही मुख्य चिकित्सा है।)

अतः चिकित्सा के रूप में —

(१) साधारण, सात्विक एवं सुपाच्य आहार लेना।
(२) शारीरिक परिश्रम करना।
(३) उत्तम विचारों से मस्तिष्क को भरना।
(४) सज्जन पुरुषों की संगति।
(५) दिनचर्या को सुव्यवस्थित करना।

ये धातु सम्बन्धी रोग कोई प्रथक रोग नहीं जिसकी चिकित्सा के लिए मैं अलग से अध्याय लिखूँ। यह स्वप्नदोष का ही बढ़ा हुआ भाई है, जिस पर मैं पर्याप्त प्रकाश डाल चुका हूँ। उसे ही ध्यान से पढ़ जायें तो सारी चिकित्सा मिल जायेगी। फिर भी मैं, संक्षेप में, थोड़े इशारे कर देता हूँ जिससे आपको कुछ नवीनता लगेगी और स्वतन्त्र चिन्तन भी मिलेगा। सर्वप्रथम, पेट साफ करने का ध्यान रक्खें। उसके लिए मिट्टी की पट्टी, एनीमा का प्रयोग अथवा त्रिफले या आमले का प्रयोग करें ताकि पेट साफ हो जाय। कटिस्नान

(हिप बाथ) लेना अत्यन्त हितकर है। तब दिनचर्या का रूप यों बना लें।

(१) प्रातःकाल उठते ही थोड़ा उषापान करें।

(२) मूत्रेन्द्रिय स्नान कर अगर अनुकूल ऋतु हो तथा कंकरीला व कांटेदार स्थान न हो तो नंगे पैर ही सैर करने चल दें। दौड़ लगा सकें तो दौड़ लगायें अथवा लम्बे-२ सांस लेते हुए चलें। वापस आ आरोग्य अमृत का पान करें।

(३) मिट्टी की पट्टी, एनिमा और उसके बाद शक्ति के अनुसार कटिस्नान (हिप बाथ) कर लें। कटिस्नान के बाद योगासन जैसे—(i) उत्तानपाद (ii) नौकासन (iii) पश्चिमोत्तासन (iv) सर्पासन (v) भुजंगासन (vi) हलासन (vii) सर्वांगासन तथा रीढ़ के व्यायाम और कुछ प्राणायाम कर लें। उसके बाद स्वप्नदोष प्रकरण में धातु पुष्टिकर चूर्ण कच्चे दूध के साथ अथवा फल दूध का नाश्ता लें। तीन घंटे बाद सात्विक आहार लें। विश्राम करने के २ घन्टे बाद रीढ़ की ठंडी पट्टी। शाम को कुछ फल का रस व फल का नाश्ता लें। रात्रि का सात्विक आहार लें। इतना होते ही आपने इस मूंजी रोग से छुटकारा पा लिया।

नपुंसकता

मुख्य लक्षण:— इसका मुख्य लक्षण इन्द्रिय की शिथिलता होगा। धातु दौर्बल्य में हमने लिखा कि तनिक सा निमित्त पाकर मूत्रेन्द्रिय में उत्तेजना आ जाती है जबकि नपुंसकता में इसके विपरीत मूत्रेन्द्रिय में इतनी दुर्बलता आ जाती है कि उत्तेजना से इन्द्री में कड़ापन ही नहीं आता। अतः सन्तति उत्पन्न करने की क्षमता ही खत्म हो जाती है।

मुख्य कारण: — इस रोग के मुख्य कारण हैं।

(१) बाल्यकाल में हस्त मैथुन।

(२) अत्यधिक विषय सेवन।

(३) अस्वाभाविक ढंग से।

(४) तम्बाकू, शराब, अफीम जैसे व्यसनों का सेवन करना। भले ही तम्बाकू सेवन से इन्द्रिय क्षमता बढ़ती दिखाई देती है परन्तु आगे चलकर उसकी क्षमता का ह्रास हो जाता है।

तत्र वस्तुतः इसे स्नायुक रोग कहना चाहिए। जो स्नायु जननेन्द्रिय का संचालन करते हैं, उनमें शिथिलता आ जाती है और ये स्नायु भी तो शरीर का एक अंश मात्र ही हैं। इसके पीछे जब विपरीत आहार अर्थात अधिक मीठा, मिर्च मसाले आदि खाने से कब्ज रहने के कारण शरीर का सारा खून खराब होने से या व्यसनों के सेवन से शरीर में दूषित पदार्थ संचित हो जाता है तब इन्द्रिय सम्बन्धी स्नायु उससे आक्रान्त होते हैं। इस व्याख्या से ही चिकित्सा का क्रम भी उभर आता है। जहां हम स्थानीय (local) उपचार से मूत्रेन्द्रिय को प्रभावित करें उसके साथ ही साथ सम्पूर्ण शरीर को भी विष-मुक्त करने का प्रयास करें तभी सफल चिकित्सा होगी। स्वप्नदोष, या धातु

दौर्बल्य में उदर शुद्धि के जो उपाय बताये हैं वे सब ज्यों के त्यों करने चाहियें। वे सब पौष्टिक औषधियाँ भी सेवन करनी हैं। इस रोग में तो मैं विशेष दो-चार मुख्य उपचारों का निर्देश करना ही उचित समझता हूँ।

(१) सर्वांग गीली चादर का लपेट ४ ५ मिनट का देकर उसके बाद तौलिये से त्वचा का घर्षण करना चाहिए।

(२) मेरुदण्ड (रीढ़ की हड्डी) के निचले भाग में सात-आठ मिनट तक ठन्डी धारा बहायें और उसके बाद शरीर की सूखी मालिश करें। दोनों समय ठन्डे पानी से स्नान करना चाहिये। पर उससे पहले कुछ मिनट धूप में बैठें और फिर तुरन्त ठन्डे पानी से नहा लेना चाहिए। अथवा सात-आठ मिनट का उष्ण पाद (फुट बाथ) स्नान लेकर, ठन्डे पानी से स्नान करना चाहिए। गुनगुने पानी से ५-७ मिनट तक कटिस्नान (हिप बाथ) करना चाहिए। यदि सम्भव हो तो टब लेकर, एक में ठन्डा पानी लेकर तथा दूसरे में गरम लेकर पहले गर्म में ३ मिनट तथा ठन्डे में १॥ मिनट तीन बार बैठें। इस प्रकार सारे शरीर की चिकित्सा के अतिरिक्त मूत्रेन्द्रिय पर विशेष रूप से एक गीली पट्टी लपेटकर ऊपर से फुलालैन का कपड़ा एक-२ दिन के अन्तर से एक-२ घन्टे के लिए लपेटें। अन्डकोषों पर गरम ठन्डा सेक भी १०-१२ मिनट के लिए कर लेना हितकर होगा। इसके साथ ही दृढ़ता से ब्रह्मचर्य का पालन करें। ज्यों ही इस प्रकार नपुंसकता की जानकारी हो तभी स्त्री को या स्त्री के मैके वालों को सूचित किये बिना दृढ़तापूर्वक प्राकृतिक चिकित्सा का उपचार करें। भले ही यह अन्य चिकित्सा पद्धतियों के लिये अत्यन्त कठिन व असाध्य रोग है पर प्राकृतिक चिकित्सा के लिए सरल एवं सुसाध्य है। बहुत अच्छा हो थोड़ा ही पेट को शुद्ध करके तथा दो-तीन दिन उपवास करके दूध कल्प या मट्ठा कल्प कर लिया जाय। उसके बाद अधिकाधिक अंकुरित पूर्णान्न का प्रयोग करना इसकी निराशा को दूर करने का सरल व सफल उपचार है।

अण्ड वृद्धि (हाइड्रोसिल)

लक्षण—एक या दोनों अण्डकोष फूल जाते हैं। उनमें दर्द होने लगता है। कहा जाता है उनमें पानी उतर आया। कुछ दिन के ब'द दर्द की अनुभूति ऐसी नहीं रहती।

कारणः—अण्डवृद्धि का कारण भी पेडू संस्थान में मल का जमाव है। भले ही बिहार जैसे किन्हीं विशेष प्रान्तों में अधिक देखा जाता है और समझा यही जाता है कि वहाँ का जल ही ऐसा है, जिस कारण यह रोग होता है। पर ऐसा नहीं देखते कि वहां के सभी लोगों को यह रोग होता है। विशेषकर चावल के प्रयोग के कारण आन्तों में कब्ज रहने से ही यह रोग उभरता है। वहाँ का जल व अन्य कारण भी निमित्त बन जाते हैं।

चिकित्साः—यह जान लेने पर कि आंतों में जमाव का ही यह मुख्य रोग है तब पहला काम होगा जल्दी से पेट को साफ कर लेना। पेड़ू का सेक कर, एक मिट्टी की पट्टी देकर, एनिमा देना। अच्छा यही होगा कि ५-७ दिन तक एनिमे का प्रयोग कर लिया जाय। पहले दिन नींबू रस मिलाकर एनिमा दें। दूसरे दिन त्रिफला जल का एनिमा। तीसरे दिन खट्टे मट्ठे, मखनिन, काली लस्सी का एनिमा, चौथे दिन पालक का। पांचवें दिन नीम की पत्तियों का। छठे दिन पुनर्नवा-सांठ या विषखपरा के रस को मिला। सातवें दिन एरण्ड तैल को मिलाकर।

इसके बाद एक छोटे पतीले या हांडी में पानी उबालें। ढक्कन लगा रहे। भाप वाले बर्तन को नीचे रख, दोनों ओर ईंटें रख उन पर बैठ जायें और चादर ओढ़ लें ताकि भाप भीतर ही भीतर रहे। अब धीरे-२ ढक्कन खोलते जायें। सुहाती-२ भाप अण्डकोषों पर लगने

दें। खूब पसीना आ जाने पर, गीले कपड़े से पोंछ लें। अच्छा हो उसी समय मिट्टी की रोटी सी बना बांधें। पौन घन्टा मिट्टी बांधे रहें। एक सप्ताह या दस दिन तक इस शोधक प्रयोग को चलने दें। अन्न दूध दही जैसे आहार बंद केवल फलाहार फल, सब्जी, फल रस व सब्जियों के सूप बनाकर सेवन करें। इस प्रकार आहार व चिकित्सा से अण्ड वृद्धि तो समूल नष्ट होगी। पर लगते हाथ शरीर का इतना अच्छा संशोधन हो जाएगा और कहीं किसी कोने में कोई रोग बन रहा होगा या पड़ा होगा तो वह भी साफ हो जाएगा।

शरीर संशोधन की इस सुन्दर पद्धति करने में अशक्य होने पर केवल स्थानीय सामान्य प्रयोग—छोटी कटेरी (कटेली कंटकारी) की ताजी जड़ १५ ग्राम यदि सूखी हो तो १० ग्राम, काली मिर्च ७ नग ले खूब पीस १२५ ग्राम पानी में मिलाकर प्रतिदिन दस दिन पर्यन्त।

अथवा

तम्बाकू के पत्ते बांधने की प्रसिद्धि भी देखी सुनी गई। ताजा पत्ता हो अन्यथा सूखे को भिगोकर बांधें। ऊपर लंगोट लगाएं, लंगोट भीगने पर दूसरा बदल दें, दो तीन घंटे बांधने से ही बहुत प्रभाव पड़ेगा। इस पत्ते का प्रभाव दिल दिमाग पर भी पड़ता है। दिल घबराएगा, चक्कर आएंगे वैसी दशा में वमन कर लेने पर आराम आ जाएगा, अण्डकोष में खुजली हो जाने पर मक्खन लगा लें।

अथवा

माजूफल २० ग्राम फिटकड़ी ५ ग्राम को पीस अण्डकोषों पर लेप किया करें दो सप्ताह पर्यन्त।

अथवा

इन्द्रायण की जड़ पीस कपड़छन कर अरण्डी के तेल में मिला अण्डकोषों पर लेप करें। ऐसे ही जड़ का चूर्ण कर २ ग्राम चूर्ण फीके गरम दूध संग प्रतिदिन लें ८, १० दिन तक।

अथवा

आम के पत्ते २० ग्राम सेंधा नमक २० ग्राम पीस गरम कर अण्ड-कोषों पर लगाने से लाभ होता है।

नोट—पूर्ण संशोधन न कर सकने की दशा में केवल स्थानीय सामान्य प्रयोग बताए गए पर इन्हें करते हुए पहले बताए गए पथ्य का पालन करना ही चाहिए। दाल, चावल, दही बंद। अच्छा यही होगा ८, १० दिन तक केवल फलाहार ही करें। मिठाई पक्वान्न तो बहुत दूर। इसके साथ ही कुछ योगासन भी करें—जैसे मुख्य रूप से हलासन, सर्वांगासन करना विशेष लाभप्रद होगा। सर्वांग आसन की स्थिति में कुछ मिनट रहें।

अण्ड वृद्धि तो एक बाह्य लक्षण था उदर में जमाव का तब क्यों न पेट को भली भांति साफ कर लिया जाय। केवल लाक्षणिक चिकित्सा कर क्यों संतोष किया जाए इस निमित्त से सारे शरीर को ही झाड़ू लगा दें। प्रायः की जाने वाली चिकित्साओं का उद्देश्य तथा चिकित्सार्थी रोगियों की मनोवृत्ति की यही सीमा देख रहा हूं। लक्षणों को समाप्त कर चिकित्सा को सफल मान बैठते हैं मूलकारण के निवारण की ओर किसी पैथी का लक्ष्य ही नहीं। इसलिए मैं योग प्राकृतिक चिकित्सा को ही एकमात्र चिकित्सा मानता हूं। यही सच्ची वैज्ञानिक चिकित्सा है, जो कारण का नाश कर रोगी को सच्चा आरोग्य प्रदान करे।

———

वायु विकार—गैस ट्रबल

आज के युग का अत्यन्त प्रसिद्ध तथा भयंकर रोग गैस ट्रबल–वायु विकार है। यह वायु विकार ही हृदय को दहला देने वाले हार्ट अटैक जैसे भयंकर रोगों का जन्मदाता है। इसे ठीक से समझ लेना चाहिये। जनसाधारण वायु के रोग का अर्थ लगाते हैं ठण्ड का रोग, ठण्डी वायु का रोग। पर ऐसी बात नहीं, वह ठण्ड का रोग न होकर अत्यन्त गर्म गैस का रोग है। ठीक वैसे ही जैसे कि कोई नाली सड़ रही है उस सड़ांद से गैस बन रही है। अभी हमने आश्रम में गोबर गैस संयन्त्र लगवाया, ७ दिन तक उस हौज में गोबर डाला, जब गोबर में सड़ांद पैदा हुई तब उसकी ऊष्मा अर्थात् गरम वायु निकलने लगी। इससे स्पष्ट हुआ यह गेस वायु का रोग ठण्ड का रोग न होकर उल्टा गर्मी का रोग है।

दूसरी बात समझने की यह है—इसे हमें दो भागों में होने वाली क्रिया को ठीक से जानना होगा। एक भाग है ऊपर का जिसमें लीवर (यकृत) पित्ताशय (गैल ब्लैडर) व (स्टामक) आमाशय या मेदा है। दूसरा भाग नीचे का है जिसमें छोटी बड़ी आंत है।

जब लीवर व पित्ताशय व आमाशय का विकार बढ़ जाता है तब तो डिकार आते हैं। डिकार आने का अर्थ होता है जब कोई चीज पच रही होती है तब डिकार आता है। यकृत का सूक्ष्म पैत्तिक विकार जब आमाशय में पचता-सा है तभी डिकार आता है। ज्यों-ज्यों यह विकार बढ़ता जाता है डिकार की मात्रा भी बढ़ जाती है। रोगी दिन भर डिकार मारता रहता है। यह डिकार का विकार उस समय और भी बढ़ने लगता है जब चिकित्सक व स्वयं रोगी उसे वायु का रोग मान गरम वस्तु खाने का सुझाव देता है या रोगी स्वयं

वैसी चीजें खाने लगता है। दिन पर दिन वह रोग की बढ़ती दुर्दशा में उलझता ही जाता है। निदान ही गलत रोग का स्वरूप ही गलत समझा गया। इसी भूल से गैस का इलाज बताते हुए लोग सोचते हैं— सोंठ, काली मिर्च, अजवायन, दाल चीनी, लौंग, लहसुन, गरम मसाले का प्रयोग।

ठीक दूसरी ओर नीचे छोटी व बड़ी आंत में (गरिष्ठ) भारी भोजन विशेष रूप में चिकनाई से बने पदार्थों के अति सेवन के परिणाम स्वरूप जब ठीक न पचने से आंव बनकर आंतों में चिपकी रहती है। उस आंव में जब हलचल होती है, वायु बनती है, गैस बनते रहते हैं, नीचे (अपानवायु) पाद के रूप में गुदा मार्ग से हवा बाहर निकलती रहती है। उसे भी नासमझी से वायु का रोग ठण्ड का रोग मान लिया जाता है जबकि वह सड़ांद की गर्मी मे पैदा हुई गैस है, ठीक वैसी जैसी गर्मियों में तपिश से एक प्रकार की गरम वायु लू चलती है। इस प्रकार गरम वायु लू से परेशानी के समय कोई भी समझदार व्यक्ति गरम चीजों का प्रयोग न करेगा। अभी तक की व्याख्या से मुझे यह सिद्ध करना है अवयवों की अशक्ति व निर्बलता से ही यह वायु रोग बनता है। जब ऊपर का भाग मेदा, लीवर कमजोर हुआ ठीक काम न कर पाया या विकृत हुआ जिस वस्तु को उसने दो घंटे में पचा कर आगे सरका देना था उसे ही वहां अधिक घंटे रोका। देर तक रुकने से ही वहां वायु पैदा हुई। आज उड़द जैसी चीज वायु प्रधान है, सर्वत्र ऐसी मान्यता है। चिकित्सक भी पथ्य बताते हुए सबसे पहले उड़द का निषेध करेगा। यह वायुकारक है। पूछकर देखो किसी पहलवान से जो पावभर दाल में उतना ही अर्थात् पावभर घी डाल कर पका कर खाएगा पर एक भी पाद न आएगा उसे। वह उसे शक्ति का भंडार बताएगा जबकि कमजोर पाचन शक्ति वाला थोड़ी सी उड़द की दाल खा परेशान हो जाएगा। उड़द ने पेट में वायु पैदा कर दी तभी यह चिंतन कर गरम मसाले की

वस्तुओं का चयन होने लगा। यह गरम मसाला मिलाओ ताकि उडद बाय न करे। साधारणजन की क्या कहूं व्याकरण के प्रसिद्ध ग्रंथ सिद्धांत कौमुदी में 'शर्धं जहति इति शर्धं जहा माषाः 'उड़द को वायु पैदा करने वाला सिद्ध किया।

जब किसी को दूध नहीं पच रहा होता तो उसमें अदरक, पिपली जैसी गरम चीजें मिलाने का सुझाव दिया जाता है ऐसा करने से दूध वायु नहीं करेगा। तभी मैं आपत्ति करता हूं भाई होना चाहिए था मेदा (आमाशय) का इलाज पर किया जा रहा है दूध का इलाज। मेदे को–पाचन क्रिया को सबल बनाने का यत्न होना चाहिए योगासन व्यायाम से पर वैसा न कर किया जाता है दूध का इलाज।

भूल का श्रीगणेश या आरम्भ यहां से होता है जब खाई जाने वाली चीज ठीक से चबाई ही नहीं जाती अथवा एक ख ई गई वस्तु पचकर आगे को नहीं सरकी तब तक दूसरी वस्तु (पाकस्थली) मेदे में पहुंच जाती है। विकार बढ़ते-२ धीरे-धीरे यह दशा आ जाती है जबकि नीचे व ऊपर दोनों भागों में वायु ही वायु भरी जान पड़ती है। जहां जरा भी कुछ खाया कि वायु से पेट भर गया। इसे ही वायु-फुल्लता के नाम से प्राकृतिक चिकित्सा के अनुभवी विद्वान् डा० कुलरञ्जन मुखर्जी ने अपने ग्रंथ में वर्णन किया। इस प्रकार जब नीचे व ऊपर कहीं भी वायु बनने लगती है तब पेट में दर्द होने लगती है। आंतों में बन रहे गैस सीधे उठकर हृदय पर दबाव डाल रहे होते हैं। इसके फलस्वरूप हृदय में धड़कन, छाती में हल्की पीड़ा की अनुभूति होने लगती है। परिणामतः हृदय रोग का भ्रम होने लगता है। ऐसी स्थिति में वैज्ञानिक माने जाने वाले एलोपैथ विद्वान डाक्टरों के हृदय के परीक्षण शुरू हो जाते हैं। हृदय ग्रंथि के ई० सी० जी० तथा ब्लड प्रेशर को चैक किया जाता है। यदि जरा सा भी संदेह हुआ और कुछ चिकित्सा भी की गई तो सचमुच देखते-२ हार्ट अटैक हो ही जाता है।

मैं जो समझ पाया हूं वस्तुतः आंतों की सड़ांद के परिणाम-स्वरूप बनने वाले गैस की उड़ान सीधी हृत् प्रदेश में हो रही होती है ठीक उसके साथ ही यकृत में भी उफान आता है बस ठीक तभी हार्ट अटैक होता है। इसके पहले छाती में होने वाली दर्द पर चल रही गोलियां व दवाएं अग्नि में घी का काम कर देती हैं। ठीक तभी देखते-देखते हार्ट अटैक हो ही जाता है क्योंकि दूषित गैस हृदय को प्रभावित कर चुकी होती है। वैसी दशा में प्रचलित विश्वास के अनुसार एलोपैथ को ही समझदार वैज्ञानिक रोग पर शीघ्र काबू पाने वाला मान उसी का दरवाजा खटखटाया जाता है। और ठीक रोगी के विश्वासानुसार उस वैज्ञानिक माने गए डा० के अज्ञान भरे हृदय रोग के उपचार से तुरन्त राहत भी मिलती है। रोगी का विश्वास भी और अधिक दृढ़ हो जाता है। वह मानने लगता है यह एकमात्र ऐसे वैज्ञानिक, अनुभवी डा० का ही काम था जिसने ऐसी भयंकर दशा पर काबू पा लिया। इनके न मिलने पर न जाने मेरी क्या दशा होती। बस दिल खोलकर बड़ी श्रद्धा और विश्वास से इलाज चलने लगता है। उधर डा० भी अपनी सफलता पर इतरा रहा होता है। फूला नहीं समाता । अपने अज्ञानांधकार में पले मस्तिष्क से बड़े गर्व के साथ यह घोषित करता है अमुकामुक गोलियां तो अब आपको जीवन भर ही खानी होंगी। अन्यथा जीवन की खैर नहीं। रोगी का विश्वास खूब प्रवृद्ध होता है। उसके लिए तो डा० का एक-एक वाक्य ब्रह्मवाक्य ही माना जाता है। तुर्रे की बात यह कि गोलियों के चलते ही चलते तभी दूसरा हार्ट अटैक हो जाता है और डा० को बुलाया जाता है। ज्यों-त्यों करके उस दशा पर भी काबू पा लिया जाता है। तीसरी या चौथी बार के दौरे का तो पूरा भान भी नहीं होता। विरले ही रोगी को तीसरे या चौथे दौरे का मुंह देखना पड़ता है। तभी बिचारा ऐलोपैथी का भक्त रोगी यमलोक को चल देता है।

विरला ही चिंतनशील भाग्यवान् "मनुष्याणां सहस्रेषु" हजारों में कोई एक रोगी सोचने लगता है अरे यह क्या हो रहा है ? ऐसा क्यों हुआ ? जबकि मैंने विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक मानी जाने वाली चिकित्सा के एक योग्यतज्ञ डा० की शरण गही फिर मुझे यह दोबारा हार्ट अटैक क्यों ? झट से चिंतन किया और मार्ग बदला । और सौभाग्य से किसी योग्य अनुभवी प्राकृतिक चिकित्सक के संपर्क में आ गया । जो यह समझा हुआ है वस्तुतः इस हार्ट अटैक का मूल कारण क्या है ? कहां से कैसे पैदा होता है । बस उसने देखते-२ ही उसे ठीक कर दिखाया । प्रा० चि० के संपर्क में आए रोगी को भी तीसरे अटैक का मुंह न देखना पड़ेगा ।

बस दोनों चिकित्सा में इतना मात्र ही अन्तर है ऐलोपैथी का भक्त रोगी तीसरे अटैक का यों मुंह न देखेगा कि उसे भान भी न रहेगा कब अटैक हुआ और चल बसा । दूसरी ओर प्राकृतिक चिकित्सा की शरण में आया रोगी भी तीसरे अटैक का मुंह भी न देखेगा । वह सर्वथा स्वस्थ हो जायगा ।

निःसंदेह मेरी यह भाषा पाठकों को गर्वोक्तिपूर्ण जान पड़ेगी, आत्म-प्रशंसा व स्तुति ही मानी जाएगी । दूसरी ओर पांचसाला कोर्स पूरा कर उसके बाद वर्षों अनुभव कर और आगे बढ़ अमेरिका, इंग्लैंड की डिग्रियाँ प्राप्त किए विदेश की मोहर लगवाए अनुभवी डा० को गालियां दी गई हैं ऐसा ही जान पड़ेगा । पर वस्तुतः ऐसा नहीं है न आत्मप्रशंसा की भावना है न द्वेष से भर गाली देने का भाव है । मेरा वर्षों का अपना अनुभव है जिसने मेरी बात मान ली, मेरी चिकित्सा में आ गया वह नाना जी भागवत (पटना) सरीखा व्यक्ति जिसे डाक्टरों ने हार्ट अटैक घोषित कर दिया पर आज वह योग प्रा० चिकित्सा की बदौलत जी रहा है । तेरह साल हो गए जी रहा है । जी रहा है इतना ही नहीं खूब दौड़ रहा है । पचास किलो मीटर के लगभग मोटर साईकल की दौड़ करता हुआ ऊबड़ खाबड़

जमीन में मोटर साईकल को भगा उसके झटकों को सह रहा है जिसे योग्य डाक्टरों ने सभा में खड़े होकर बोलने की भी रोक लगा दी थी। ऐसे अन्य अनेक रोगी हैं जो हार्ट अटैक के रोगी घोषित किए जाने पर प्रा० चि० की शरण में आ आज एक पैसे की गोली भी नहीं खा रहे और अच्छे जी रहे हैं। दूसरी ओर जिन्होंने हमारी बात नहीं सुनी अवहेलना की वे कभी के (काल कवलित) मृत्यु के ग्रास बन चुके हैं सारी चिकित्सा करा । के बावजूद भी।

जहां तक ड.क्टरों को गाली देने की बात है वह यों है उन विचारों का दोष ही क्या है। उन्होंने तो मेहनत की, वर्षों ज्ञान अर्जन करने में लगाए हजारों रु० खर्च किए। पर मूलभूत जो ज्ञान मिला उस मिलने वाले ज्ञान में ही भूल है। एलोपैथी का सिद्धांत ज्ञान ही भूल भरा दूषित है रोगों को दबाने वाला।

ऋषित्व प्राप्त डा० लूई कून्हें साहब ने आंतों से उठने वाले इस सड़े गैस के संबंध में अपने "आकृति निदान" पुस्तक में बड़े सूक्ष्म ढंग से वर्णन किया। यह गैस गरम वायु किस रास्ते से ऊपर जा रहा है। पेट, पसली, छाती को प्रभावित करता हुआ ऊपर की ओर जा रहा है, वह भी दाईं ओर से या बाईं ओर से। अथवा पीछे की ओर से कमर, पीठ, गले के पिछले भाग को प्रभावित कर रहा है। किस ओर से जाने वाला कितना बुरा है। साधारण या भयंकर। यदि ऐसे ही चलता रहा तो कितने मास में किस किस भयंकर रोग को जन्म देगा इस प्रकार की अत्यंत रहस्यपूर्ण भविष्य वाणी की।

कारण—सबसे पहला प्रसिद्ध कारण है खाये जाने वाले खाद्य पदार्थ को अच्छी प्रकार चबाये बिना ही निगल जाते हैं। पाकस्थली की गड़बड़ी से यह रोग होता है। खाये जाने वाला भारी भोजन के फल स्वरूप अजीर्ण बने रहने से यह रोग होता है। यह स्मरण रखने की बात है जो पक्वान्न दांतों के लिए जितने नम हैं, वे आंतों के लिए उतने ही दुर्जर व भारी हैं। ये हलवे, खीर, पूड़ी कचोड़ी तथा अन्यान्य

मिठाइयां दांतों के लिए अत्यंत नर्म जबकि आंतों के लिए बड़े भारी। स्टेशनों पर बिकने वाले अत्यंत रोचक आकर्षक सुस्वादु मैदे के बने भटूरे तो इस दिशा में गजब ढाह रहे हैं। भोजन के तुरंत बाद ही शारीरिक या मानसिक काम करना गैस रोग का रोगी बनना है। यह स्मरण रखें—**भोजन विश्राम से पचता है न कि काम से।** पाकस्थली के घाव, पित्तकोष के विभिन्न रोग एवं पथरी जैसे रोग का एक साधारण चिह्न है। अजीर्ण व स्नायविक दौर्बल्य दोनों मिलकर भयंकर गैसजनक होते हैं। शरीर की विकार युक्त अवस्था में रक्त और शरीर में से कार्बनिक एसिड और विभिन्न श्रेणी के गैस आकर पेट में ज़मा होते हैं। आंत और पाकस्थली के भीतरी भाग खाली होने के कारण पाकस्थली और आंत की दीवाल में से वे बाहर निकल सहज ही पाकस्थली को फुला देते हैं।

उपचार—यह समझ में आ जाने पर कि भारी भोजन, अजीर्ण व शरीर की दूषित दशा ही इस भयंकर रोग का मुख्य कारण है तब सर्वप्रथम भूलभरी उन आदतों को सुधारें। साथ ही शरीर को भी तर बाहर से धो देने का सुन्दर कार्यक्रम बनाएं। शरीर का सब कूड़ा कर्कट शरीर से झाड़ पोंछ कर बाहर निकाल उसे स्वच्छ बना लें। हमारे आश्रम की शरीर शोधक दिनचर्या को विधिवत् अपनाएं—

१ नेतियां २ वमन, पेड़ू का सेक, मिट्टी की पट्टी, एनिमा चार्ट (विभिन्न प्रकार के एनिमे) ऐसे रोगी के गर्म सेक करके कटिस्नान लेना प्रभावकारी चिकित्सा है। दूसरे समय पेट पर गर्म-ठंडा सेक करना पन्द्रह बीस मिनट का। रात्रि में पेट का गीला लपेट। ठडा पट्टी पेट पर लपेटने के बाद ऊपर से ऊनी वस्त्र लपेटना। कटि-स्नान के लिए टब की व्यवस्था न होने पर लोटे स पानी धार ऊँचे से डालते हुए पेड़ू को मलना चाहिए। नल के नीचे बैठ टूंटी को खोल धार पड़ती रहे, पेड़ को मलते जाएं। ध्यान रहे शरीर के अन्य भाग न भीगें। कभी बहते हुए पानी में बहते खाल में बैठकर कटिस्नान

लिया जाए तो अत्यंत प्रभावकारी है। जैसे हमारे आश्रम में बहते हुए जलकुंडों में कटिस्नान लेने की सुन्दर योजना है। कटिस्नान के लिए बैठते ही वायु निकलने लगती है और कटिस्नान से पेट की खोयी हुई शक्ति भी वापस लौटने लगती है।

कटिस्नान लेने के बाद पेट पर पाउडर लगाकर या तैल लगाकर मालिश करना हाथ की कटोरी बना पेट को थपथपाना चाहिए। जब पेट में वायु भरी हो उस समय ऊपर से नीचे पेट को हथेली से मलना भी सुखकारी होता है।

तब चिकित्सा का एक क्रम बना लें प्रातः नेति, वमन तदनंतर आरोग्यामृत का पान। सेक कर पेट पर मिट्टी पट्टी एनिमा चार्ट, एनिमा लेते समय भी पेट की हल्की मसाज, संभव हो तो पुनः सेक कर कटिस्नान, सेक के लिए गर्म पानी में भिगो कर निचोड़े हुए तौलिए से करें अथवा रबड़ की थैली में गरम पानी भर कर करें, वैसा भी न हो सके तो सूखे तौलिए से पेड़ू को मलकर उसे गर्म कर लें तब वैसी दशा में टब में बैठ कटिस्नान लें। कटिस्नान के बाद पेट की मालिश कटोरी बना थपथपाना। उसके बाद कुछ योगासन जैसे उत्तानपादासन, शलभासन, धनुषासन, उड्डियान, मेरुदण्ड के आसन, सर्पासन, भुजंगासन विशेष रूप से पवन मुक्तासन का अभ्यास हितकर है। आगे पीछे भी जब पेट में भरी हो तभी पवन मुक्तासन का प्रयोग आराम पहुंचाता है।

नाश्ते के रूप में भीगी मुनक्का १५ दाने से २५ दाने तक जेब इजाजत दे शरीर भी अधिकारी हो अर्थात् खाज, खुजली, दाद-एग्जिमा, मसूढ़े व दांत पीड़ा से मुक्त हो साथ ही बहुमूत्र व शुगर डायब्टीज से भी रहित हो तो वैसी दशा में दो खुरमानी सूखी व अंजीर भी भिगो प्रयोग में लाएं। मुनक्का भीगे पानी में नीबू रस मिला लें।

पेट में वायु का कष्ट अधिक हो अन्य चिकित्सा तो करें पर आहार के रूप में कुछ भी न लें केवल पानी गर्म या ठंडा केवल, या नीबू रस मिलाकर एक दो दिन। उसके बाद सूक्ष्मं रसाहार का क्रम चलाएं।

दो बार मौसंबी, अनार, संतरा, अन्नानास जैसे फलों का रस, खीरा व सेव का मिला रस। खीरे व सेव को कसकर रस निकाला जाता है। मौसम की सब्जियों को पतीले में पका (कुक्कर में नहीं, तेज हीट होने से खाद्यांश नष्ट हो जाते हैं आलमोनियम धातु के डिब्बे भी रोगकारी हैं।) मसल निचोड़ नीबू रस मिला सेवन करें। यदि अम्लपित्त एसि-डिटी की शिकायत हो तो वैसा रोगी फलों व फल रस की अपेक्षा सब्जियों का सूप विशेष रूप से सेवन करे। सब्जियों में भी पत्तीदार सब्जियों जैसे पालक बथुआ चौलाई जैसी पत्तियों का प्रयोग भूल कर भी न करें। न टमाटर अदरक व गरम मसाले ही लें। अम्लपित्त के रोगी के लिए विशेष रूप से हितकर बंद गोभी, लौकी (घिया), टिंडे, खीरा, ककड़ी, गाजर जैसी सब्जियां हैं।

पानी पीने के संबंध में भी ध्यान रखें एक ही बार में अधिक मात्रा में पानी न पिएं। थोड़ा थोड़ा पानी पिएं। आयुर्वेद में लिखा है— "मुहुर्मुहुः वारि पिबेदभूरि" बार बार थोड़ा थोड़ा पानी पिएं। विशेष रूप से यह पालन करें भोजन या वैसा आहार लेने के पन्द्रह मिनट पहले थोड़ा गरम पानी नीबू रस मिला पी लें उससे पाचक रस अच्छे काम करने लगते हैं। आहार लेने के बाद अवश्य पौन घंटा विश्राम करें। विश्राम के समय बाईं करवट लेटना विशेष हितकर है ठीक उस समय रबड़ की थैली या बोतल में गर्म पानी डाल आमाशय (मेदे स्टमक) पर रख थोड़ो देर पेट की सेक करें। पेट की दशा जब कुछ सुधर जाए, वायु की भयंकर दशा न रहे और ठोस आहार लिया जा सके तब तो आंत में जमे हुए आंव को निकालने के लिए बेल फल के गूदे में, ताजे बेल जिन दिनों न मिलते हों बेलगिरी सूखा बेलगूदा ले पानी में भिगो कर काम में लें। बेल गूदा में भुना चोकर आटे का छान भून कर रखें, बेले गूदा ३, ४ तोला में २, ३ तोला चोकर मिला सेवन करें। भूने हुए चोकर को किसी भी फल रस या सब्जी के रस में लिया जा सकता है। बेलगूदा चोकर मिला आंतों में जमे वर्षों के

आंव को बड़ी सफलता से निकाल देगा। ये दोनों विटामिन बी (खाद्योज बी०) के घर हैं। बेल के गूदे का जो पीलापन है वह (स्वर्णिम) सोने के अंश को लिए हुए है ऐसा विद्वानों का मत है। इस प्रकार के कठिन आहार संयम व प्राकृतिक उपचारों से निश्चित ही कष्टसाध्य दशा से भी मुक्ति पा लेंगे। इसके लिए चाहिए धैर्य। ये सुनहरी वाक्य दोहराते रहना चाहिए—

स्वास्थ्य का साधन संयम है।

उत्तम स्वास्थ्य का साधन कठिन संयम है।

पूज्य गांधी जी कहा करते थे—"जिसे अपनी जीभ पर संयम नहीं है उसके आगे स्वास्थ्य की बात न करो।"

ज्यों ही कष्टकर दशा से निकल जाएं, ठीक खाने पीने लग जाएं ठीक तभी आंतों का पूर्ण संशोधन करने के लिए केवल आंतों का ही क्यों लीवर, आमाशय व सारे शरीर का संशोधन (ओवरहालिंग) करने के लिए एक विधिवत् उपवास करलें। पहली बार यदि ९, १० दिन का न कर सकें तो रुक रुक कर एक एक दो बार उपवास करें। उपवास ही एकमात्र ऐसी विधि है जो शरीर के हर भाग में जमे विकार को उखाड़ बाहर फेंक देती है। शरीर को निर्मल करती है। आयु को लंबा करती है। हां उपवास किसी अनुभवी चिकित्सक की देखरेख में ही हो। मैं नो उन साथी चिकित्सकों से भी इस अंश में सहमत नहीं हूं जो इस डर से कि कहीं केवल पानी पर रोगी को रखा तो विकार तेजी से उखड़ेंगे, रोगी को कष्ट होगा यह सोच शहद-नींबू, या केवल नींबू रस या मौसंबी जैसे रस देने के पक्ष में हैं मैं तो ऐसा समझता हूं उपवास कराने का अर्थ ही यह है—आमाशय (यकृत) लीवर छोटी आंतें, फेफड़े, श्वासनलिका आदि विभिन्न अवयव अपने पास संचित किए मल को उगालें व बाहर निकालें। कुछ भी पानी में मिलाकर देने का अर्थ है पाचन क्रिया का काम चालू रखना, पाचन क्रिया चलती रहती है तो उगालने की प्रक्रिया रुकी रहती है। मैंने देखा मेरे साथी ने किसी को राय से केवल प्रातः दो चम्मच शहद पानी

संग ले १४ दिन पूरे उपवास कर लिया मैं पहुँचा शहद बंद करवाया दूसरे ही दिन वमन शुरू हो गई जो १४ दिन से रुकी हुई थी। इस विधि को हर रोगी व चिकित्सक को जान ही लेना चाहिए उपवास को कष्ट रहित सफल करने की विधि है उपवास काल में नेति वमन कराना। उपवास में होने वाली अनेक परेशानियां एकमात्र वमन कराने से काफूर हो जाती हैं।

इस विधि से कराया गया उपवास ही संपूर्ण शरीर शोधक आयुष्यवर्धक है।

आंतों से खून गिरना

आंतों से जब खून का स्राव होने लगता है, प्रायः मल के साथ मिलकर आता है। कभी कभी विशुद्ध रक्त भी आंतों से निकलता है। किसी समय तो कोई कच्ची सब्जी खाई गई परिणाम स्वरूप उसने आंतों में छोलन की जिससे खून आने लगा। गाजर कुछ कच्चा अमरूद खाने या वैसो किसी कड़ी चीज खाने से हो जाता है। पेट में चोट लगना, अत्यधिक तीव्र औषधि के व्यवहार बवासीर या टायफायड व कैंसर जैसी दशा में भी खून आता है। कभी तो कच्चे हरे पत्तों के अधिक सेवन से आंतों में अजीब प्रकार की वायु सी बनती है परिणामतः खून आ जाता है।

उपचार—यह पहला काम होगा कि ठीक से कारण को पकड़ें। यदि खान पान की गड़बड़ से हुआ है उसे रोकते बराबर ही अंतर आ जाएगा। पर अक्सर भूल यह होतो है रोगी कुछ घंटों तक ही अपनी नजर दौड़ा पाता है कुछ घंटे पहले जिसे खाया होगा उसे सामने लाएगा। मेरा अनुभव है दो तीन दिन के पीछे लौट कर पकड़ें क्योंकि उसे आंतों तक पहुंचने, वहां रहकर गड़बड़ करने तक के लिए दो तीन दिन मिलने ही चाहिएं। मैं समझता हूं खून आने की मारक स्थिति एकदम सहसा नहीं आ जाती। पहले पहल सामान्य रूप से आने के बाद उसका निराकरण न होने पर ही भयंकर दशा आती है। माना कि ऐसी विपत्तिजनक दशा आ भी जाए तब सर्वप्रथम रोगी को आराम से लिटाकर पेड़ू पर खूब ठंडे पानी की पट्टी बर्फीला पानी हो तो अधिक अच्छा या ठंडे पानी में भीगी मिट्टी की पट्टी रखें। ज्यों ही कुछ मिनटों में गर्म हो जाए पट्टी को बदल दें। तब तक पट्टी बदलें जब तक कि खून आना बंद न हो जाए। ठीक तभी एक दो पट्टी रखने के बाद ही बर्फ का पानी एनिमा द्वारा या पिचकारी द्वारा चढ़ाया जाए। उस पानी में फिटकड़ी पीस १, २

माशे ग्राम मिलाना अधिक अच्छा है।

उस समय यदि नागकेसर मिल सके पीस छान मिला दें। फिटकड़ी या नागकेसर रक्तस्राव के अवरोधक हैं। एक बार ऐसा प्रसग आया एक रोगी को शौच में खून आया साथ ही तभी वमन हुई कुछ रोग कुछ मानसिक चिंतन मन पर पड़ा दोनों का प्रभाव खाट पर पड़ा बकवास करने लगा, तभी मुझे बुलाया देखा बुखार हो रहा है रोगी अनाप शनाप बोले जा रहा है। चिंतन किया दस्त से खून आने व वमन का प्रभाव तो मन पर है ही साथ ही भीतर की ऊष्मा गैस ऊपर सिर की ओर जा रहे हैं जो बेकाबू कर रहे हं। तुरंत पेडू पर मिट्टी की पट्टी रखी गई साथ ही रीढ़ के नीचे कपड़ा भिगो निचोड़ कर रखा गया, गले पर व माथे पर भी भीगी कपड़े की पट्टी रखी गई देखते देखते बुखार कम होने लगा, बकवास करना भी बंद हो गया। ऐसे सुलक्षण देख समीप में मैं पढ़ाने चला गया थोड़ी देर बाद पुनः सूचना मिली वैसे ही लक्षण फिर हो रहे हैं। बुखार भी बढ़ रहा है। झट से यह विचारा आया कि आंतों में पड़े मल में उफान आ रहा है। गैस वन ऊपर को जा रहे हैं। पहला काम आंतों में उफान लाने वाले विकार का शमन करना। तभी गाजनी मुल्तानी मिट्टी (लड़के जिस से तख्ती पोचते हैं) कूट पानी में घोल छान एनिमा कराया गया तुरंत सारे कुलक्षण समाप्त हो गए।

रोगी पर ठंडे उपचार तो हो ही रहे हैं पर यह देख लेना आवश्यक है हाथ पांव ठंडे न हो जाएं। उसके लिए गर्म पानी में भीगे कपड़े हाथ पांव पर लपेटने, हाथ पांव को गर्म पानी में रखना या गर्म पानी की बोतलें रखना चाहिए ताकि हाथ पांव गरम बने रहें। इतने पर भी आवश्यक समझा जाए तो कटिस्नान (हिपबाथ) ठंडे पानी में कराया जाए तब पाँव को गर्म पानी की बाल्टी में रखें।

शेष शरीर को दिन में दो तीन बार भीगे तौलिए से पोंछ दें। उग्र दशा शांत हो जाने पर दही की लस्सी में ६ ग्राम राल देना भी लाभप्रद होगा। क्योंकि देखा एक महिला को मूत्र मार्ग से रक्त आता

दर्द भी होता, डाक्टरों ने कैंसर का संदेह किया, आगे आप्रेशन की बातें सुन वह मेरे पास पहुँची। पहले कुछ वर्ष पूर्व हमारे इलाज से उसने नया जीवन पाया था उसे विश्वास था। राल पीस दही लस्सी संग दी डूश वगैरह अन्य उपचार भी किए गए, ६-७ दिन में ही रक्त आना बंद हो गया। बाद में दर्द भी ठीक हो गया। पुर ने पेचिश या डिसैण्टरी की दशा में लस्सी में भीगी बेलगिरी चमत्कार दिखाएगी।

मैंने शरीर के विभिन्न भागों में पाए जाने वाले अनेक रोगों की जननी के रूप में इस प्रथम गुहा को मान अपनी पुस्तक में लिखा मुझे असाध्य रोगों की जड़ें नाभि प्रदेश में दीखती हैं। इसलिए मेरा मत है—

"प्रथम गुहा हि जननी अनेकेषाम् ऊर्ध्व-मध्य अधःस्थितानाम् रोगाणाम्"।

मेरे इस अनुभूत वाक्य की पुष्टि में सुनें कहानी रुड़की के केंद्रीय भवन अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिक श्री किशनलाल जी से—

मैं प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति से सन् १९६५ से परिचित हूँ। मेरा पेट खराब रहता था। मुझे जरा सी ठंड लग जाने से बहुत तीव्र खांसी व जुकाम हो जाता था और बदन में दर्द रहने लगा था। प्रा० चि० पद्धति की सामान्य क्रियाओं से स्थानीय प्राकृतिक चिकित्सक के प्रयत्नों से पूर्ण स्वास्थ्य लाभ किया। दस वर्ष तक मैं स्वस्थ रहा। गृहस्थ होने के नाते खाने में गड़बड़ी चलती रही फिर भी किसी दवाई की आवश्यकता नहीं पड़ी, दस वर्ष बाद रोगों ने सिर उठाया। मेरी श्रीमतिजी ने अपनी आस्था के अनुसार कहा कि आप प्रा० चि० पर आ जाईये। मैंने कहा 'भाग्यवान, कोई सभी प्रा० चि० पर जिन्दा हैं, अब कुछ दिन दवाऐं खाने दो।' प्रा० चि० की अवहेलना कर पाँच सालों तक फिर विभिन्न प्रकार की औषधियों का सेवन किया। फल-स्वरूप विकार जमा होते गये। नजला, जुकाम, पेट खराब, दर्द बदन

सभी असाध्य रोग हो गए। इन्हें ठीक करने के प्रयास में किसी औषधि के खाने से एक भयंकर रोग उत्पन्न हो गया। अक्तूबर ८० में मेरी नाक से सुबह के समय एक दो बूंद खून आने लगा। एलोपैथिक चिकित्सा तीन माह की कोई लाभ नहीं हुआ। जनवरी ८० में प्रा० चि० की सामान्य प्रक्रियायें (भोजन पर नियन्त्रण, हिप बाथ, मिट्टी की पट्टी, जल नेति, कुंजल क्रिया, व्यायाम आदि।) अपनायीं। पाँच छः माह तक कोई लाभ नहीं हुआ। शरीर का वजन तो कम हो गया परन्तु शारीरिक कष्ट बने रहे। विशेष रूप से नाक से खून का जाना मानसिक कष्ट का कारण रहा। घर पर ही रहते हुए एक उपवास की योजना बनायी और २६ दिन तक उपवास किया। उपवास में २६ दिन तक नींबू, शहद पानी लिया व पांच दिन तक केवल पानी। कमजोरी अधिक आने के कारण उपवास समाप्त किया। आश्चर्य हुआ कि रोग नहीं गये। उपवास के बाद भूख नहीं लगी। मनोस्थिति बिगड़ गयी तथा प्रा० चि० के प्रति विश्वास डोलने लगा। फिर स्वामी जगदीश्वरानन्द जी अनुभवी प्राकृतिक व यौगिक चिकित्सक की शरण में गया। उन्होंने मेरी कहानी सहानुभूति पूर्वक सुनी। मेरे स्वास्थ्य की परीक्षा की और बताया कि मेरे द्वारा किए गए उपवास में उदर की पूरी सफाई नहीं हो सकी, जिससे मेरे रोग यथावत् रहे। उन्होंने एक और उपवास आश्रम में रहकर करने का परामर्श दिया। मैंने कुछ ही समय बाद आश्रम में रहकर अनुभवी स्वामीजी से प्राकृतिक चिकित्सा करायी। चौदह दिन का उपवास रखा। मेरे स्वास्थ्य में आश्चर्यजनक लाभ हुआ। ईश्वर की कृपा से शरीर के सभी दर्द व नाक से खून जाना बन्द हो गया। और मुझे खून जाने के कारण होने वाला मानसिक तनाव दूर हो गया।

दिनांक
२० सितम्बर, १९८०

किशनलाल (वैज्ञानिक)
केन्द्रीय भवन अनुसन्धान संस्थान
रुड़की

मूत्रयन्त्र संबंधी रोग

सजीव प्राणियों के शरीर में प्रतिक्षण ऐच्छिक तथा अनैच्छिक क्रियाएं होती रहती हैं। परिणामस्वरूप शरीर की कोशिकाएं एवं ऊतक टूटते फूटते रहते हैं।

नई कोशिकाओं का निर्माण भी होता है। यह तारतम्य निरन्तर बना रहता है। कोशिकाओं एवं ऊतकों के टूटने से शरीर में कुछ अवशिष्ट पदार्थ अथवा विजातीय द्रव्य (Waste Products) उत्पन्न होते रहते हैं। ये शरीर को हानि पहुँचाते हैं, इन्हें शरीर से बाहर निकालना नितान्त आवश्यक है। ये पदार्थ कार्बनडाई-आक्साइड, यूरिया, यूरिक एसिड आदि हैं।

रक्त से अवशिष्ट पदार्थ निकालकर शरीर को शुद्ध बनाये रखने वाले उत्सर्गी-अंगों में वृक्क अथवा गुर्दे (Kidneys) हैं, इनके द्वारा मूत्र के रूप में जल, यूरिया, यूरिक एसिड व कुछ लवण आदि द्रव्य शरीर के बाहर निकलते हैं।

जिस अंग में मूत्र बनता है उस अंग को वृक्क कहते हैं। मेरुदंड की बाईं तथा दाहिनी ओर सबसे अन्त वाली पसलियों के सामने दो वृक्क (गुर्दे) होते हैं। इनका रंग भूरा होता है इनके चारों ओर वसा रहता है। सेम के बीज के समान आकृति होती है। ये लम्बाई में लगभग चार इन्च तथा चौड़ाई में डेढ़ इंच होते हैं। ये लाखों अनुवीक्षणिक फिल्टर से बने हुये हैं। खून से पेशाब सोख लेना इन गिल्टियों का खास काम है।

इस मूत्रयंत्र की सूजन का नाम ही नेफराइटिस (Nephritis) है। यह रोग हमेशा शैशव एवं किशोरावस्था में अधिकतर होता है।

तात्कालिक लक्षण—जाड़ा लगकर बुखार शुरू होना, गुर्दों की जगह पर तेज दर्द होना, शुरू से पेशाब कम पड़ जाना, कभी पेशाब

बिलकुल बन्द ही हो जाना, कभी बड़ी तकलीफ से बूंद-बूंद थोड़ा-सा पेशाब निकलना, पेशाब में बहुत गर्मी और दर्द मालूम होना, पेशाब का रंग घोर लाल, कभी धुएं के रंग का, अण्डकोष लाल-लाल, जलंदर, आंख के नीचे की पलक और पैर की गिरह कुछ-कुछ फूली-फूली, दबाने से अंगुली धस जाने का निशान पड़ जाना, बदलने वाला शोथ (Dropsy) कभी मुंह से पैर में और कभी पैर से मुंह में चढ़ता हुआ, कभी-कभी सारा शरीर फूल जाने की हालत, सफेद मुंह, रीढ और कमर में दर्द, सिर दर्द, गन्दी जीभ, पेट की खराबी, भूख की कमी, कब्जियत, नींद न होना और बेचैनी आदि इस रोग के साधारण लक्षण हैं।

सफल उपचार—गुर्दों को आराम देना सफल चिकित्सा होगी गुर्दे जो पेशाब के द्वारा पानी निकाल रहे थे उस काम को आंत व त्वचा के द्वारा करा लेना चाहिए ताकि गुर्दों को विश्राम मिल जाए। ज्यों ही गुर्दे अपने काम से छुट्टी पाते हैं तभी प्रकृति उनकी मरम्मत का काम आरंभ कर देती है और बिमारी कम होने लगती है।

इसलिए पेडू सेककर या भापकर अथवा सर्दी का मौसम हो गरम की हुई मिट्टी की पट्टी पेडू पर पौन घंटा रख एनिमा कराना चाहिए। एनिमा के बाद ही दूसरा काम लेना है त्वचा से, तब भाप की व्यवस्था करें जो सहज में सम्भव हो—प्लास्टिक चादर लपेट कर धूप में पसीना दिलाएं या (फुट बाथ) उष्णपाद स्नान के द्वारा अथवा भाप के द्वारा त्वचा के द्वारा खूब पसीना निकलने लगे। शरीर को गरम बनाए रखने का प्रयास करें ताकि सहज में पसीना आने लगे।

अब सीधे स्थानीय उपचार की ओर आएं दिल पर एक ठंडा कपड़ा रख गुर्दे का गरम उपचार करें सेक या भाप दें। गुर्दे का गरम उपचार करते हुए रीढ़ पर ठंडे वस्त्र को रखें ताकि रीढ़

गरम न हो। दिन में दो तीन बार गुर्दे का गरम प्रयोग करें।

विशेष ध्यान देने की बात – न ठन्डे पानी से स्नान कराएं, न कटिस्नान ही दें। गरम प्रयोग करने के बाद गरम पानी में भीगे तौलिए से ठीक से पोंछ दें।

पिंडली पर गीला वस्त्र लपेट ऊनी पट्टी का लपेट घंटे भर के लिए दें उसके बाद ही भीगे तौलिए को निचोड़ (गरम पानी में भिगोए) सारे शरीर का घर्षण स्नान कराएँ। घर्षण स्नान इतना अच्छी प्रकार हो कि शरीर लाल हो जाए।

पेशाब लाने के लिए गीली पट्टी का कमर लपेट देना हितकर है। गुर्दे पर गरम-ठंडा सेक भी करना हितकर है।

भूलकर भी पेशाब उतारने वाली दवा का प्रयोग न करें। डा० अचलार ने स्पष्ट कहा ऐसी 'कोई दवा हम नहीं जानते जो इस बीमारी पर काबू पाए। अन्य डा० भी मानते हैं मूत्रयन्त्र सोजिश की कोई दवा नहीं।

रोग का ज्ञान होने पर सुन्दर चिकित्सा यह होगी कि सर्वप्रथम उसे पूर्ण उपवास करा देना चाहिए। उपवास काल में भी पानी का प्रयोग न करें ताकि देह का पानी स्वयं शोषित होने लगे। उपवास निरापद हो बीच में पानी पी वमन का प्रयोग करें ताकि किसी प्रकार का कोई उपद्रव न हो। उस समय जो एनिमा कराया जाता है आंतें स्वतः ही आवश्यक अंश का शोषण कर लेती हैं। इस प्रकार सप्ताह भर उपवास करा देना विशेष हितकर है।

उपवास के बाद आरोग्यामृत, नींबू का प्रयोग जल में नींबू रस मिलाकर देना चाहिए। कच्चे दूध में नींबू रस मिला गरम करने से दूध फट जाएगा, दूध का फटा पानी 'ह्वे' देना हितकर है। ह्वे में मुनक्का धो भिगोकर रखें, भीगी मुनक्का व दूध का पानी देना विशेष हितकर है। उपवास के बाद रसाहार व फलाहार का प्रयोग किया

जाए। नमक दूध प्रोटीन से बचें। टमाटर पालक जैसी चीजें भी न दें। पर्याप्त समय तक पूर्ण पथ्य से रहने पर रोगी रोग मुक्त हो ही जाएगा।

मेंहदी के पत्ते छः ग्राम आधा किलो पानी में पकाएं, १५० ग्राम रहने पर सेवन कराएं ५, ७ दिन तक, दर्द के लिए हितकर होंगे पेशाब भी ठीक आएगा।

मूली रस १०० ग्राम नींबू रस मिलाकर देना भी हितकर है

मूत्राशय की सूजन—मूत्रग्रंथि (Kidney) में पैदा होकर पशाब जहां पर जाकर इकट्ठा होता है उसे मूत्राशय या (Urinary bladder) कहते हैं। यह पेडू के निचले भाग में रहता है। इसमें लगभग डेढ़ पाव पेशाब रहता है। गुर्दे से १४ से १६ इंच लम्बी दो नालियों द्वारा होता हुआ पेशाव पेशाब की थैली मूत्राशय में आकर जमा होता रहता है। फिर वहां से पुरुषों के लिए प्रायः ८ इंच तथा स्त्रियों के लिए लगभग डेढ़ इंच लंबी मूत्र नाली द्वारा यह पेशाब बाहर निकलता है। इस मूत्र संग्रहालय में जब सोजिश होती है तो उसे मूत्राशय की सूजन कहते हैं।

मूत्राशय सूजन के लक्षण—मूत्राशय व मूत्रनली में दर्द होना, बार बार पेशाब करने की इच्छा होना, पेशाब करने में दर्द, पेशाब भी थोड़ा-थोड़ा, पीब मिला गंदा पेशाब होना, एक साथ सारा पेशाब न हो सकने पर मूत्राशय में उत्तेजना व वेदना की वृद्धि, थोड़ा ज्वर भी हो सकता है। भले ही यह मारात्मक तो नहीं है फिर भी समुचित चिकित्सा न होने पर लम्बे समय तक कष्ट बना रह सकता है।

कारण—देर तक पेशाब रोक रखना, शरीर की दूषित दशा के परिणामस्वरूप लकवा होने से मूत्राशय में अधिक देर तक पेशाब का वहां रुके रहना, सुजाक वगैरह के परिणाम स्वरूप भी ऐसा रोग होता है।

इसलिए स्वस्थ रहने के शिष्टाचार के नियमों में बताया गया कि टट्टी, पेशाब, छींक, जंभाई जैसी हाजतों को कभी रोका न जाए।

सफल उपचार—पेट सेक व एनिमा से सफाई प्रक्रिया पूर्व में बताई विधि से कर दी जाए। कुछ देर बाद संभव हो तो गरम + ठंडा टब का प्रयोग तेजी से लाभ दिखाता है। तीन मिनट गरम टब में बैठ फिर डेढ़ दो मिनट के लिए ठंडे पानी वाले टब में बैठना चाहिए। पुनः गरम पानी वाले टब में फिर ठंडे पानी के टब में इस प्रकार तीन चार बार करना चाहिए।

गरम ठण्डे टब की व्यवस्था न होने पर पेडू का गरम ठण्डा सेक कर ढकी मिट्टी की गरम पट्टी पौन घंटा के लिए दें। पिंडलियों को गीली पट्टी का लपेट दे ऊनी पट्टी का लपेट एक-२ घंटा के लिये दिन में दो बार देना हितकर है। पैरों को गरम बनाये रखने का ध्यान रखें।

ध्यान रहे न ठण्डी मिट्टी की पट्टी दें न ठण्डा कटिस्नान ही दें। इसमें ढर सा गरम पानो पीना हितकर है पानी के अधिक प्रयोग से खून पतला होने में सहायता मिलती है। जितना अधिक पानी पिया जा सके पियें। थोड़ा-२ करके (Sip) करके पानी पिया जाए। दर्द दूर होने पर फिर ठण्डे पानी का प्रयोग करें।

पहले दूध के फटे पानी में भीगी मुनक्का, शहद नींबू फलों के रस आदि पर ही पहले-पहले रखा जाये। आगे चलकर सामान्य रसाहार व फलाहार।

मूत्राशय से खून निकलना

इसमें मूत्राशय पर ठण्डा प्रयोग करना मुख्य चिकित्सा है। आरम्भ में खूब ठण्डो मिट्टी की पट्टी चढ़ाई जाए। बर्फ मिल सके तो बर्फ में भिगोई मिट्टी रखी जाए। पैर को गरम पानी में रखते हुए ठण्डे पानो का कटिस्नान करना हितकर है।

ठण्डे पानी का डूश भी चमत्कारी लाभ दिखायेगा। रीढ़ को बार-२ ठन्डे पानो से पोंछा जाए। चूतड़ के नीचें तकिया रख थोड़ा ऊपर

उठाकर लेटना चाहिये। चारपाई के पैर वाले भाग को ऊपर उठाकर विश्राम दें।

रसाहार में ही पर्याप्त लाभ हो जाएगा बाद में फलाहार व दूध का प्रयोग किया जाना चाहिये। गरम दूध, मीठा, मसाले से बचा जाय।

मूत्रयंत्र से खून निकलना

खून मूत्र यंत्र से निकलता है या मूत्राशय से इसे पृथक्-२ रूप से ठीक ठीक समझ लेना चाहिए कि खून मूत्राशय से आ रहा है या मूत्रनली से ही आ रहा है। मूत्राशय से जब खून निकलता है तब पेशाब की समाप्ति पर अन्तिम पेशाब की बूंद के साथ निकलता है। पर मूत्रनली से जब खून निकलता है तब पहले से ही खून के साथ पेशाब मिला हुआ आता है।

चिकित्सा—मूत्राशय से खून निकलने की चिकित्सा के समान ही है। इसमें मूत्र यन्त्र पर ही जल की पट्टी आदि उपचार किये जाते हैं। मुख्य रूप आरोग्यामृत के साथ १ ग्राम के लगभग फिटकड़ी भस्म भी दी जानी चाहिए। हरी या आस्मानी बोतल का सूर्य रश्मि जल भी १-१ छटांक दिन में चार बार देना चाहिये।

पथ्य—में दूध का पानी, सब्जियों का सूप, फलों के रस आदि दिये जाने चाहियें।

मूत्र की रुकावट (Retention of urine) - पेशाब की थैली में पेशाब जमा रहे परन्तु वह बाहर न निकले तो उसे मूत्र की रुकावट कहा जाता है। यह मूत्र नाश तो नहीं है। इसमें पेशाब इकट्ठा तो होता है पर वह निकलता नहीं। मूत्र नाश में मूत्र-यन्त्र में पेशाब पैदा ही नहीं होता इसलिए पेशाब की थैली खाली रहती है।

मूत्र की रुकावट में मूत्राशय पेशाब से भरा रहता है, पेशाब करने की बहुत तबीयत होती है पर पेशाब होता ही नहीं। रोगी को बेचैनी हो जाती है और बहुत तकलीफ अनुभव करता है। मूत्राशय फूल जाता है। यदि यह दशा जल्दी ठीक न की गई तो मूत्राशय

किसी न किसी जगह से फट भी जाता है।

मूत्र की रुकावट के कारण—१. स्नायुओं को कमजोरी से भी होती है।

२. पेशाब के स्थान की पथरी के कारण दबने से मूत्र में रुकावट आती है।

३. पेशाब की थैली की सूजन से भी रुकावट होती है।

४. पुरुषों को प्रायः प्रोस्टेट ग्लैण्ड (Prostate) की वृद्धि होने पर।

५. गर्भिणी स्त्रियों को कभी-कभी पेशाब की थैली पर बच्चे के दबाव से उसका रास्ता बंद हो जाता है।

६. कभी पहले से हो मूत्र की नाली की सूजन के कारण उसके छेद के सकरा हो जाने के कारण ऐसा होता है।

७. कभी शर्म के कारण या किसी परिस्थितिवश पेशाब को बहुत देर तक रोक लेने के कारण कोशिश करने पर भी पेशाब नहीं उतरता और अंत में ऐसी बीमारी हो जाती है।

प्रसिद्ध प्रा० चिकित्सक कुलरंजन मुखर्जी ने अपनी पुस्तक में इस का एक उदाहरण छापा—युरोप में 'टाईको ब्राही' नामक एक बड़े ज्योतिषी थे। आस्ट्रिया के सम्राट के साथ भेंट करने के समय संकोचवश उठकर पेशाब करने नहीं गए। परिणामस्वरूप पेशाब बंद हो गया तथा उसी रोग से उनकी मृत्यु हुई।

८. कभी खून का चक्का पेशाब की नाली में अटक जाने से ही यह रोग होता है।

९. शरीर के भीतर विजातीय द्रव्य का प्रभाव रूपी उपादान कारण रहता है फिर किसी भी थोड़े से निमित्त कारण से रोग उभर आता है पानी में भीगने से, ठंड लग जाने पर ही ऐसा हो जाता है। शराब पीने, उस प्रकार के ऐय्याशी के जीवन जोने से भी विकृत स्नायु मण्डल के कारण ऐसा हो जाता है।

१०. सबसे भयंकर मूत्र की रुकावट होती है मूत्राशय के अल्पकालिक लकवा से।

सफल उपचार—गरम पानी में बैठना (hip bath) लेना ही इस रोग का मुख्य उपचार है। गरम पानी में बैठते ही पेशाब का सारा रास्ता ढीला हो जाता है और पेशाब सहज में उतरने लगता है। गरम पानी में बैठाते समय सिर को भिगोकर ठंडे तौलिए से भिगो रखना आवश्यक है। यह भी करना चाहिए एक छोटा सा तौलिया भिगोकर निचोड़ दिल पर भी रख लें ताकि गरम पानी में बैठने से बढ़ रही गरमी का प्रभाव दिल पर न पड़े। टब की व्यवस्था न होने पर पेशाब की थैली पर गरम पानी की निचुड़ी बड़ी पट्टी रखने से भी कभी मूत्रावरोध दूर हो जाता है।

इसी प्रकार पेशाब की थैली पर गरम ठंडा सेक देने से भी तुरंत लाभ होता है।

इन सब सेकों से पहले गरम पानी का एनिमा करा देना विशेष महत्व रखता है। उसके बाद पेशाब की थैली पर पानी की धार डालने पर भीं पेशाब खुलकर आने लगता है।

एनिमा कर लेने के बाद या एनिमा के अभाव में त्रिफला चूर्ण या वैसी ही कोई सौम्य विरेचक चीज जैसे गुलाब के फूल ताजे ३ तो० मुनक्का २० दाने पीस चटनी बना सेवन करें अथवा अमलतास का गूदा २ तोला सेवन करने से पेट साफ हो जाएगा।

मूत्र खोलने के लिए—पलाश–ढाक के फूल १०० ग्राम के लगभग पानी के सहारे पीस लें। ताजे मिलने पर वैसे ही पीस नाभि के चारों ओर लगाने से १०, १५ मिनटों के अन्दर पेशाब खुल कर आएगा।

अथवा—केले के वृक्ष की छाल का रस ४० ग्राम घी २० ग्राम मिलाकर पिलाने से भी पेशाब खुलकर आता है। स्त्रियों के लिये विशेष लाभप्रद है।

पथ्य – प्रातः आरोग्यामृत का पान, एक घंटा बाद (ह्वे) दूध का फटा हुआ पानी मुनक्का मिलाकर दें। खीरे व लौकी-घिया का रस नीबू रस मिलाकर लेना विशेष हितकर है। दिन में सब्जियों का सूप नीबू रस मिला कर दें। मौसंबी रस तथा अन्य ऋतुज फलों के रस पर रहें बाद में फल व सब्जियों का आहार दें। इतने से मूत्रावरोधक कष्ट तो दूर हो ही जाएगा, फिर भी मेरा परामर्श होगा इस मूत्राव-रोध को प्रकृति की ओर से दिखाई गई एक लाल झंडी माने जो सकेत करती है शरीर में कड़ा-कचरा, विजातीय द्रव्य संग्रह हो गया है। शरीर का एक वार पूर्ण संशोधन—ओवरहालिंग कर लेना चाहिए। छोटी २ दवाओं व टोटकों से शरोर रूपी गाड़ी को न सरकाएँ, उसे पूर्ण साफ कर अच्छी प्रकार चलने के लिए समर्थ बना दें। ऐसा बना देने का एकमात्र साधन है—पूर्ण उपवास। एक बार विधिवत् उप-वास कर लें ताकि शरीर विकाररहित एवं नवस्फूर्तियुक्त हो जाए।

मूत्रनाश—मूत्रयंत्र (Kidney) जब खून से पेशाब सोख लेने में लाचार हो जाता है और पेशाब नहीं पैदा होता तब उस दशा को मूत्रनाश कहते हैं। साधारण रूप में या फिर पूरा पूरा हो जाता है।

कारण—मूत्रयंत्र की सूजन, उसमें खून की अधिकता, हैजा या बुखार से गुर्दा गड़बड़ हो गया हो तो मूत्रनाश हो जाता है। मूत्र-यन्त्र जो खून से जहर खींच कर पेशाव के रास्ते बाहर निकाल देता है, जव वह इस प्रकार बाहर नहीं निकाल पाता, तब सारा खून ही जहरीला हो जाता है और इसके कारण अवसाद, तन्द्रा, सुस्ती, बेहोशी आदि लक्षण पैदा होते हैं।

उपचार—मूत्र-यन्त्र को संजीवित करने की जितनी पद्धतियां हैं उनमें गरम पानी का एनिमा सबसे महत्वपूर्ण लाभदायक प्रयोग है। प्रकार वही होगा सेक कर एक गरम पानी का एनिमा। कभी तो इतने मात्र से ही पेशाब हो जाता है। एनिमा के बाद भाप द्वारा अथवा उष्णपाद स्नान—फुटबाथ से पसीना दिला देना चाहिए। ऐसा करने से शरीर के भीतर का वह

विषाक्त पदार्थ जो पेशाब के साथ बाहर निकलता है, इस पसीने के साथ ही बाहर निकल जाता है। इससे पेशाब न होने के कारण शरीर पर जो जहर का असर होता है वह नहीं होने पाता। इसके अतिरिक्त हर तीन घंटे के बाद गुर्दे पर गर्म-ठंडा सेंक देकर एक पट्टी का लेप करें। पथ्य में—आरोग्यामृत, फटे दूध का पानी, गाजर, लौकी, खीरा जैसी चीजों का रस, दूध में पानी मिला फीकी लस्सी, सब्जियों के सूप नीबू रस मिला सेवन कराएं। कुछ दिन बाद फिर फल-सब्जियों का आहार ही लें, ऐसा करने से पर्याप्त लाभ होगा। पूर्ण लाभ के लिए शरीर को नवस्फूर्ति युक्त करने निमित्त विधिवत् उपवास कर लेना चाहिए।

शोथ (Dropsy)—शरीर के विभिन्न अंगों हाथ, पांव व मुंह के नीचे के भाग में शोथ होने का अर्थ है वहां कुछ विकृत जल सा जमा हो गया। खून खराब होता है, खून की धारा बिगड़ जाने के कारण जब हृदय व गुर्दे जैसे यन्त्रों और महीन नलियों की दिवारों में विकार जमा हो जाता है, खून में से पानी का हिस्सा छनकर चमड़े के नीचे की तन्तुओं में आकर संचित होता है यही शोथ कहलाता है। आए दिन हमें रोगियों की चिकित्सा करते हुए ऐसे अनुभव होते हैं। विशेष रूप से उन दिनों रोगियों के हाथ-पांव तथा बाद में मुंह पर सोजिश आती है जब अन्नाहार बंद करवा फलाहार पर ला रहे होते हैं। दबे विकार को उखड़ने का एक अवसर मिल जाता है। सोजिश को देख रोगी घबराने लगता है तब उसे समझाते हैं यदि ऐसी बात है वापिस रोटी-सब्जी व पूरी खुराक पर लौट आओ सोजिश समाप्त हो जाएगी। वंसे यह शोथ कोई चिंता का विषय नहीं है। प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ डा० कुलरंजन मुखर्जी ने शोथ का विश्लेषण करते हुए स्पष्ट किया कि हृदय के रोग या मूत्र-यन्त्र (Kidney) की बीमारी से शोथ पैदा होता है। हृदय रोग के कारण जो शोथ होता है वह प्रायः परिश्रम करने से बढ़ता है और मूत्र-यंत्र

की बीमारी से जो शोथ आता है वह विश्राम करने लेटे रहने से बढ़ता है। इसलिए हृदय रोग से उत्पन्न हुआ शोथ संध्या समय आता है और रात्रि विश्राम कर लेने के कारण रात्रि समाप्त होते-२ वह हट जाता है। हृदय रोग से संबंधित शोथ पैर हाथ आदि हृदय से दूर रहने वाले अंगों में होता है।

मूत्र यंत्र की खराबी से संबंधित शोथ प्रातःकाल बढ़ता है और जैसे-२ दिन बढ़ने लगता है उसका भार भी कम होने लगता है। इसमें अधिकतर आंखों का हिस्सा फूलता है। दोनों के विकृत होने पर आया सोजिश कठिनता से जाता है।

सफल चिकित्सा—पूर्व बताए रोगों के उपचार की भांति इसकी चिकित्सा करनी चाहिए। अधिक भाप का प्रयोग न कर थोड़ी-२ देर धूप स्नान कराना चाहिए। विशेष रूप से सारे शरीर की गीली चादर का लपेट विशेष हितकर है। भीगी कमर पट्टी भी लाभप्रद है। उष्णपाद स्नान दिला सारे शरीर को तौलिए से रगड़ कर पोंछना चाहिए।

ऊपर दिए गए लक्षणों को देख यह जान लेने पर कि हृदय विकार से संबंधित रोग है या गुर्दे के विकार से तब उसी अंग के उपचार पर विशेष ध्यान देना चाहिए। जैसे हृदय विकार से संबंधित है तो उष्णपाद स्नान के बाद छाती पर भीगी पट्टी को लपेट ऊनी पट्टी लपेटें। हृदय की गति कम होने पर छाती के पीछे रीढ़ के भाग पर गर्म ठंडा सेक देना हितकर होगा। मूत्र यन्त्र के विकार की दशा में गुर्दे पर गर्म-ठंडा सेक करना होगा। दिन में दो तीन बार ऐसा करने से मूत्र यन्त्र जल्दी ठीक काम करने लगता है। पर्याप्त पेशाब हो जाने पर शोथ सहज में अपने आप विदा हो जाती है।

उपवास करा देना महत्वपूर्ण चिकित्सा है। दूध को फाड़ कर अधिकाधिक फटे दूध का पानी पिलाना गर्म-२ दिन भर में २ लीटर तक पानी पिला दें। सब्जियों का सूप बनाकर पिलाना व अन्य

सब्जियों के रस देना उचित है। नमक जरा भी न दिया जाए। गुर्दों की बीमारी में नमक सबसे ज्यादा घातक विष है। रोगी को नमक देने की जरा भी गल्ती न की जाए। नमक देना मानो रोगी की जान लेना है। डा० एम० विर्चर वेनर एम० डी० का यह कथन सदा स्मरण रखना चाहिए—"सोडियम क्लोराइड इन एक्सस भंसिलैस्ली किल्स दि किटनीज" यह अति मात्रा में खाया गया नमक गुर्दों को बेदर्दी से काटता है इसी प्रकार अन्य तली भुनी चीजें खीर, हलुआ जैसे भारी भोजन भी वर्जित हैं।

गुर्दों से संबधित रोगों की चर्चा समाप्त करते हुए इस संदर्भ में गुर्दों की सामान्य जानकारी व कार्य के संबंध में लिख देना उचित जान पड़ा।

मूत्राशय (Bladder) उदर के निचले भाग श्रोणिगुहा में स्थित पेशियों का बना हुआ एक त्रिकोणी थैला सा होता है। मूत्र, वृक्कों से मूत्र वाहिनियों द्वारा आकर मूत्राशय में एकत्रित होता रहता है।

मूत्र-निष्कासन—पेशाब करने की आवश्यकता होने पर उसके पूर्व मूत्राशय में २५० ग्राम के लगभग पेशाब संग्रह हो जाता है। मूत्राशय में यह मूत्र बूंद बूंद करके आता है। इस प्रकार धोरे-२ रिस्ता हुआ यह मूत्र जब पूरा हो जाता है तब मूत्राशय सिकुड़ता है व मूत्र, मूत्रमार्ग द्वारा बाहर निकल जाता है। पूर्व इसके मूत्राशय की दीवार की मांस-पेशियां सिकुड़ कर छिद्र को बन्द किए रहती हैं। मूत्र त्याग की इच्छा होने पर मांस पेशियां ढीली पड़ जाती हैं और मूत्र मार्ग खुल जाता है। इस मार्ग की क्रियाओं पर ऐच्छिक पेशियों का नियन्त्रण रहता है। मूत्र से भर जाने पर थैला (Bladder) गोलाकार हो जाता है और मूत्र निकल जाने पर वह त्रिकोणाकार हो जाता है।

वृक्क में धमनियों से जो रक्त आता है उसमें यूरिया यूरिक एसिड आदि अवशिष्ट पदार्थ अधिक रहते हैं, पर वृक्क से शिराओं के द्वारा जो रुधिर लौट कर बाहर आता है उसमें ये पदार्थ कम होते हैं। इससे

स्पष्ट होता है वृक्कों में रक्त की शुद्धि होती है। वृक्क की चलनी से वे विकार जहां छनते हैं वहां वे शोषित भी किए जाते हैं। रक्त के भीतर का बहुत सा हानिकारक पदार्थ मूत्र के रूप में बाहर निकल जाता है। इस प्रकार वृक्क के कारण शरीर का काफी काम सधता है।

यूरिया तथा यूरिक एसिड जैसे हानिकारक पदार्थ वृक्कों में नहीं बनते। ये सब हृदय व मांस पेशियों में तैयार होते हैं। वृक्क तो केवल इन्हें छानकर पृथक् कर देते हैं। यह मूत्र को बनाने वाला अंग भी नहीं है। यदि वृक्क अपना काम करना बंद कर दें तो रक्त में समस्त विकार मिले रहेंगे तथा मनुष्य की मृत्यु हो जाएगी।

मूत्र का रंग रूप—मूत्र पीले रंग का एक तरल पदार्थ है, जिसमें अधिकांश मात्रा जल की रहती है। मूत्र में यूरिया, यूरिक एसिड, लवण, जल आदि पदार्थ रहते हैं। इनका एक अनुपात क्रम है। ऋतु के अनुसार भोजन के प्रकार तथा जल की मात्रा के अनुसार मूत्र की मात्रा भी कम या अधिक होती है। जिन दिनों त्वचा से पसीना नहीं निकलता तब पेशाब की मात्रा बढ़ जाती है जैसे सर्दियों में। वर्षा के दिनों में जब बाहर की हवा में भी सीलन बढ़ी रहती है तब मूत्र की मात्रा और अधिक हो जाती है। उन दिनों कोई रस लेने पर तो पेशाब का जुलाब ही लग जाता है। गर्मियों में पसीने के रास्ते जल, यूरिया तथा लवण बाहर निकलते रहते हैं पेशाब की मात्रा एकदम कम हो जाती है। उन दिनों अधिक मात्रा में पानी पीकर व रस लेकर गुर्दों के शोधन कार्य में सहायता करनी चाहिए।

———

मूत्राशय या गुर्दे की पथरी

(Stone in the Bladder अथवा Stone in the Kidney)

लक्षण—इस रोग में मूत्र के साथ सूक्ष्म चूर्ण निकलता है। रोगी गुर्दे में तेज दर्द अनुभव करता है। यह दर्द आगे बढ़कर मूत्राशय तथा अन्त में जङ्घा तक फैल जाता है। जब ये पत्थर मूत्रनली से बाहर निकल आना चाहते हैं तभी साधारणतः यह दर्द होता है। पेशाब करने की प्रबल इच्छा होती है पर पेशाब नहीं कर सकता। इस अवस्था में कभी मूत्रयन्त्र से खून आने लगता है और कभी स्नायविक उत्तेजना से रोगी को उल्टी भी होती है। दो तीन मिनट दर्द रहता है फिर कम हो जाता है।

कारण—खाए गए खाद्यपदार्थ जब अच्छी प्रकार नहीं पचते तब खून में अम्लता–खटास बढ़ जाती हैं। वह खटास ही तरलता से ठोस रूप धारण करने लगती है। यही पत्थर की तरह कड़ी होने लगती है।

उत्पादक कारण—मांसाहार तो मुख्य कारण है ही। शाकाहारियों में जो केवल भात दाल ही खाकर रहते हैं, शाक हरी सब्जियां न खाने से उनके प्राकृतिक नमकों (मिनरल साल्ट्स) से वंचित रहते हैं। सब्जी के नाम पर वे आलू व अर्वी ही खाने के शौकीन होते हैं। परिणाम स्वरूप खून में अम्लता बढ़ जाती है। शरीर एक प्रकार से विजातीय द्रव्य तथा दूषित पदार्थों का कूड़ा घर ही बन जाता है। जिस प्रकार समुद्र की लहरों से मथित हुई समुद्र की फेन ही जम एक ठोस रूप लेती है "समुद्र झाग" बाजार में बिकती है। समुद्री पानी से नमक बनता है। इससे भी बढ़कर सुन्दर उदाहरण हैं—पेट में से उठकर ऊपर मुंह में आकर गैस किस प्रकार ठोस रूप लेता

हुआ दांतों के साथ चिपककर दांतों का ही मानों सजातीय भाग ही बन जाते हैं। कोई समझ ही नहीं सकता गैस ने इतना ठोस रूप ले लिया। ठीक इसी प्रकार पेड़ू संस्थान से उठे गैस जब ऊपर की ओर रीढ़ के साथ चिपकने लगते हैं वहां पर अपनी टेढ़ी-मेढ़ी शक्ल लेकर पीड़ा के कारण बन रहे होते हैं, तब तो बड़े-२ डाक्टर यह कहने लगते हैं रीढ़ की हड्डी बढ़ गई। पचास साठ सत्तार वर्ष की आयु में भी उन्हें हड्डियों का निर्माण दिखाई देता है जबकि निर्माण की अवधि जो कि २५ वर्ष की थी वह कभी की समाप्त हो चुकी होती है। ऐसे ही घुटनों के पास जमे विकार के बारे में भी ऐसी घोषणा करते हैं। अपने इस कथन की पुष्टि में एक्सरे के चित्र पेश करते हुए साक्षी देते हैं जो कि केवल अज्ञान जनित प्रलाप मात्र ही होता है। ऐसे ही यह पथरी भी मिट्टी व रेत के भीतर प्रवेश से बनी है ऐसा नहीं, उसे बनाने वाला हमारा विषाक्त खून है। खून को विषाक्त पथरी के मूत्र मार्ग से बाहर निकलने के प्रयास में पीड़ा होना स्वाभाविक है। तब सर्वप्रथम सहज उपाय यह होगा गरम पानी का एनिमा देकर पेट साफ करने के बाद पेड़ू संस्थान का सेक कर दिया जाय। सेक का महत्वपूर्ण काम होता है शरीर के तन्तु ढीले पड़ जाते हैं। पीड़ा तुरन्त कम पड़ जाती है। अब देखें क्या आसानी से कर सकते हैं। खूब गर्म पानी में तौलिया भिगो निचोड़ कर रखते जाएं ऊपर से ऊनी वस्त्र से ढाक दें। यदि बड़े टब की व्यवस्था हो या कढ़ाही जैसा कोई बर्तन हो उसमें गर्म पानी भर रोगी को बैठाएं। पैर बाहर रहेंगे, पेट टांगों का भाग पानी में डूबा रहेगा। व्यथा काल में हाथ पांव को गर्म बनाये रखें।

ऐसे समय पर गर्म पानी का अकेला एनिमा कितना चमत्कारी जादू सा असर करता है।

एक सुन्दर उदाहरण—देहरादून के एक परिचित सरदार जी मद्रास की यात्रा स्थगित कर पीड़ा आरम्भ होते ही दिल्ली से वापिस देहरादून

लौट आये मुझे बुलाया मैंने देखा तो पीड़ा कुछ सह रहे थे पर दर्द से कुबड़े हो रहे थे। यह जाने बिना ही कि गुर्दे का दर्द है, या मल संचय से बिगड़ी वायु के कारण दर्द है, या किसी अन्य कारण से पर सर्वप्रथम उचित है पेट साफ कर लिया जाए। पेडू का सेक कर मिट्टी की पट्टी दे एनिमा कराया गया। पहले एनिमा से जहाँ पेट की खूब सफाई हुई साथ ही पीड़ा में अन्तर आया, कुबड़ेपन में फर्क आया, लगते हाथ दूसरा एनिमा करवा दिया, भीतर से सड़ा मल निकला पीड़ा व कुबड़ापन और कम हुआ। उसी समय तीसरा एनिमा कराते ही पीड़ा पूर्ण विदा, कुबड़ापन गया। सरदार बहादुर बिल्कुल चंगे हो गये।

पथरी कष्ट निवारक कुछ टोटका चिकित्सा

१- पपीते की जड़ ६ ग्राम ले सिलपर पीस ५० ग्राम पानी में घोल छान कर पिलाएं २१ दिन तक नित्य प्रातः तथा सायं। पथरी गल कर निकल जाएगी।

अथवा

२- २० ग्राम कुलथी को २५० ग्राम पानी में औटाएं (उबालें) चौथाई पानी रहने पर उतार छान गुनगुना सा रोगी को पिलाएं प्रातः सायं। कुछ दिनों के सेवन से पथरी गल-गल कर मूत्र मार्ग से निकलती जाएगी।

भोजन में कुलथी की दाल का प्रयोग कराया जाए।

अथवा

३- टिण्डे का रस ५० ग्राम जवाखार १।। माशा मिला प्रातः पिलाएं।

अथवा

४-कलमी शोरा, जवाखार व नौशादर प्रत्येक आधा आधा ग्राम, गन्ने का रस २० ग्राम, नींबू रस ६ ग्राम मिला पिलाएं यह एक मात्रा हुई। निरंतर कुछ दिन सेवन से पथरी गल कर निकल जाएगी।

अथवा

५–मूली का रस २५ ग्रा. (यवक्षार) १ ग्राम जवाखार मिला कर दें।

अथवा

६–नीम के सूखे पत्तों की राख बना लें, ६ ग्रा. राख फांक पानी पिएं।

अथवा

७– सत्यानाशी का डण्ठल बारीक पीस गर्म कर जिधर पथरी हो उधर पेट पर बांधें। ऊपर बांधने से ही गल कर मूत्र मार्ग से निकलने लगेगी।

अथवा

८– पीपल की कोंपलें ७ काली मिर्च ५ पीस पानी में मिला प्रातः ५ दिन पिलाएं।

महत्वपूर्ण परामर्श—जैसे मेरा अन्य रोगों के संबंध में सुझाव है पूर्णरूप से शरीर संशोधन का ठीक वैसा ही इस रोग में भी। ये रोग तो केवल लाल झंडियां हैं। दर्शाती हैं—शरीर में कूड़े कचरे के संग्रह को। भले ही हमने किसी विशेष औषधि, टोटके या फिर आप्रेशन ही क्यों न हो एक बन चुके रोग को भले ही हटा दें पर रोग बनाने वाली स्थिति का निराकरण तो नहीं हुआ। स्थिति बनी रही तो पुनः रोग को भी बनाती रहेगी इसी कारण प्रायः आप देखते व सुनते होंगे किसी रोग का आप्रेशन हुआ दोबारा फिर आप्रेशन तीसरी बार पुनः आप्रेशन नाक के मांस का, टांसिल व बवासीर के संबंध में सुना होगा। तब हमारा सुझाव है टोटकों द्वारा रोग के विदा हो जाने पर भी कारणभूत स्थिति का निराकरण करने के लिए विधिवत् उपवास कर शरीर संशोधन कर नई स्फूर्ति नया उत्साह व नया जीवन ही प्राप्त करें।

इन लाल झंडियों के आने पर भी यदि जीवन का मोड़ न बदला, इन सारी पैथियों व टोटकों से किसी एक पीड़ा से मुक्त हो जाएंगे पर पीड़ाओं से मुक्त न होंगे। रोगों के कारण को जानना होगा, आहार की भूलों का निराकरण करना होगा।

मेरा प्रसिद्ध वाक्य जो मैंने अपनी पुस्तकों में स्थान-२ पर लिखा है—

"भूल रूपी नींव पर रोगों की दीवारें खड़ी हैं,
उस पर विभिन्न पैथियों के महल खड़े हैं,
साहस कर संयम से भूल रूपी नींव को
सरका दें, बस रोगों की दीवारें ढह पड़ेंगी,
उन पर बने विभिन्न पैथियों के महल
धराशायी हो जाएंगे।"

भूलों को पकड़ने के लिये केवल आहार संबंधी भूल को देखें। मुख़ मार्ग से किस प्रकार के रोग का ही आहार हमारे शरीर में प्रवेश कर रहा है। आज सभ्यता के नाम पर सभ्यसमाज कितना विकृत आहार ले रहा है। एक ओर हमारी सरकार जनकल्याण की समझ से जगह-२ हस्पताल, मैडिकल कालेज खोल रही है ठीक उसके विपरीत पौष्टिक आहार के नाम पर अनेक भयंकर रोगों के जन्मदाता अण्डों का प्रचार किया जा रहा है। आहार के गुणदोषों का विश्लेषण करने वाले अनेक मनीषी वैज्ञानिक अण्डों से होने वाले भयंकर रोगों की सूची पेश कर रहे हैं जबकि दूसरी ओर प्रोटीन के पीछे मतवाले बन कम ज्ञान रखते हुए भी बहुज्ञानाभिमानी डाक्टर लोग हर एक को अण्डे सेवन का परामर्श देते हुए नहीं थकते।

अब पढ़ें उन आहार विश्लेषण करने वाले वैज्ञानिकों के विचार

अमरीका में कृषि विभाग—फ्लोरिडा—की हैल्थ बुलैटिन अक्टूबर १९६७ में निकला—

अण्डों में डी० डी० टी० विष—

१८ महीनों के परीक्षण के बाद ३० प्रतिशत अण्डों में डी० डी० टी० विष मिला।

अण्डों से दिल की बीमारी—

एक अण्डे में ४ ग्रेन कोलैस्टरोल की मात्रा पाई गई है। कोलैस्टरोल की इतनी अधिक मात्रा से अण्डे दिल की बीमारी, हाई ब्लैड प्रेशर, गुर्दों की बीमारी, पित्त की थैली में पथरी आदि रोगों को पैदा करते हैं।—डा० रौबर्ट ग्रॉस प्रो० इरविंग डैविडसन।

अण्डे से पेट में सड़ान—

अण्डों में कार्बोहाइड्रेट्स बिल्कुल नहीं होते और कैलशियम भी बहुत कम होता है। अतः इनसे पेट में सड़ान पैदा होती है।

—डा० इ० वी० मैक्कालम, न्यूअर नोलेज आफ न्यूट्रशन पृष्ठ १७१

अण्डों से टी० बी० और पेचिश—

मुर्गा के अण्डों में बहुत सी बीमारियां होती हैं, अण्डे उन बीमारियों को विशेषतया टी० बी०, पेचिश आदि के कीटाणुओं को अपने साथ ले जाते हैं और इनको खाने वालों में पैदा करते हैं।

इसी प्रकार इन डाक्टरों ने ही मांस व मछली के बारे में कहा—मांस का एसिड विष हड्डियों को कमजोर करता है। आस्ट्रेलिया के डा० श्री डी० के० डान ने मांस खाने वालों के पेट में ६० फीट तक लम्बा कीड़ा बताया। मांस से हाजमा खराब होता है। मछली व मांस में पाये जाने वाले यूरिक एसिड को बताते हुए अन्य अनेक प्रकार के मांसों में यूरिक एसिड के अनुपात को लन्दन के डा० एलैग्जैण्ड़र हेग ने खुलासा कर दिखाया। इस यूरिक एसिड विष से टी० बी०, दिल की बीमारी, जिगर की खराबी, सांस का रोग, गठिया,

हिस्टीरिया, सुस्ती, अजीर्ण, इन्फ्लूएन्जा बुखार आदि तरह-तरह के रोग होते हैं।

इस प्रकार के विकृत आहार का स्रोत जारी रहा पर किसी भी पैथी, किसी दवा या टोटके से कोई ठीक हो भी गया तो शीघ्र ही उसे फिर बीमार होना ही है क्योंकि कारण स्रोत ज्यों का त्यों बना हुआ है।

इसलिए एक अनुभवी प्राकृतिक चिकित्सक ने ठीक ही कहा—

अन्य चिकित्साएं आती व चली जाती हैं,
प्राकृतिक चिकित्सा ही स्थायी रहती है।

स्वस्थ रहने के कतिपय नियम

जिस प्रकार पृथ्वी के संबंध में कहा जाता है—

वसुंधरा, रत्नगर्भा—वसु व रत्नों को गर्भ में लिए हुए, ठीक ऐसी बात प्रकृति के संबंध में कहेंगे—'विज्ञान गर्भा प्रकृति' अथवा "विज्ञान प्रसवाहि प्रकृतिः" अपनी २ साधना से छिपे विज्ञान को प्रकट करते जा रहे हैं, भविष्य में ऐसे प्रकृतिनिहित विज्ञान उभरता जाएगा।

महर्षियों द्वारा निर्दिष्ट दिनचर्या के सामान्य नियम सभी विज्ञान-मय ही हैं। स्वास्थ्य संबंधी पांच मौलिक बातें समझने व पालने योग्य हैं—१. आहार, २. श्रम, ३. विश्राम, ४. मानसिक संतुलन और ५. पंच महाभूतों का सेवन।

१. आहार—सर्वोत्तम बात तो यह है यह ध्यान बना रहे—प्रभु के रसोइए सूर्यदेव ने जैसे पकाया है यथासंभव वैसा ही प्रयोग करें। दूसरी बार रसोई घर में उसे अग्नि द्वारा संस्कृत न करें। जैसे वृक्षों के पके फल खाते हैं, मूली, गाजर, खीरा, ककड़ी खाते हैं, वैसे ही खेतों में तैयार अन्नों को तथा अन्यान्य सब्जियों को भी कच्ची दशा में ही खायें। अन्नों के खाने का एक सुन्दर प्रकार है भिगो अंकुरित करके खाना।

आग के सम्पर्क में लाना ही हो तो कम से कम रूप में लाएं। कम ही पकाएं। मिर्च मसाले डाल तल भून उसे विकृत न बनाएं। वस्तुस्थिति यह है सूर्याग्नि पक्व अन्नों को अग्नि पर पका कर जैसे जीवनीशक्ति हीन बनाते हैं उन्हें खा हम स्वयं भी जीवनीशक्ति विहीन हो रोगों के प्रतिरोध की शक्ति से भी वंचित हो जाते हैं।

मेरा एक प्रसिद्ध वाक्य है—"रोग यों ही नहीं आते निमंत्रित

किये जाते हैं। बाजार से खरीदे जाते हैं, प्रायः मुख मार्ग से रसना के माध्यम से ही प्रवेश पाते हैं।"

पाक शास्त्र की विकासशील कला ने स्वाद संवर्धन को बढ़ाया पर आहार के पोषक तत्वों को गंवाया। स्वाद और पोषक तत्व संरक्षण परस्पर विरोधी नहीं हैं। दोनों का अधिक समन्वय करने में कला का विकास होना था।

आहार में छः रस अपने अनुपात से रहने ही चाहिए। आज चाय चीनी का युग ही बन गया। कड़वा भी सेवन करना ही चाहिए अतः अपने आश्रम में नित्य 'आरोग्यामृत' (नीम, गिलो, चिरायता, सौंफ का क्वाथ) पिलाते हैं।

स्वाद वस्तु में नहीं, भूख में है

विश्व प्रसिद्ध सुकरात जब भोजन कर रहे थे कुछ नवयुवकों ने उन्हें सादा साग खाते देखा, चखने की कामना प्रकट की तब उन्हें थोड़ा २ दिया गया, गले उतरना भी कठिन हो गया। किसी ने ज्यों-त्यों कर थोड़ा खाया, किसी ने फेंक दिया। यह तो बिल्कुल फीका अस्वादु है आप इसे कैसे मजे से खा रहे हैं।

सुकरात ने सरल भाव से जवाब दिया "मैंने तो इस में अत्यन्त स्वादु भूख का मसाला मिलाया है।"

आज हम श्रमहीन हो गए हैं, विज्ञान ने हमें अपनी सुख सुविधा दे हमें आलसी बना दिया है।

स्वस्थ रहने के लिए श्रमशील बनें—आसन व्यायाम, भाग-दौड़, खेल-कूद जैसा सम्भव हो जीवन में अपनायें। यथासम्भव जीवन निर्वाहार्थ उपयोगी कामों को स्वयं करें। न जी चुरायें, न आलसी बनें, इस प्रकार श्रम यदि उत्पादक होगा तो और भी अच्छा, खेती आदि में किया गया श्रम उत्पादक श्रम है।

विश्राम—श्रम जिस प्रकार शरीर में रक्त-संचारार्थ आवश्यक है,

उसे सबल पुष्ट बनाता है, ठीक उतनी आवश्यकता श्रम के बाद विश्राम की है, जो श्रम के कारण तथा यों भी स्वाभाविक चर्या में जो टूट-फूट होती है, उसकी मरम्मत, टूटे कोषों का नव-निर्माण विश्राम से होता है। हर मशीन चलने की एक सीमा है। बिना रुके अबाध गति से चलते जाने पर आग लगना, विस्फोट होने का भय उत्पन्न हो जाता है। इसी प्रकार शरीर के श्रम करने की भी एक सीमा है, थक जाने पर भी लोभवश डबल ड्यूटी करने के लिये चाय पी चेतना, स्फूर्ति पा शरीर को श्रम की भट्टी में झोंक देना भी बड़ी भूल है।

विश्राम रहित जीवन भाग दौड़ में व्यस्त, तनाव युक्त मन के ही परिणामस्वरूप आज ब्लडप्रेशर, हार्ट अटैक आदि भयंकर रोग दीखते हैं। अच्छे श्रम के बाद वस्तुतः पूर्ण विश्राम शरीर ले लेता है यदि चायादि व्यसन युक्त न हो तथा चितामुक्त हो तो। जब सोएं "घोड़े बेचकर सोएं"। शरीर को शिथिल करने की कला भी शवासन से सीखें। चिन्ता से वल, वीर्य, रूपादि का नाश होता है, टी० बी० का कारण बनती है। मन को चिन्ता मुक्त तनाव रहित करने के लिये शांत भाव से बैठ अचित्य शक्ति के साथ सम्बन्ध जोड़ने की साधना भी सीखें।

लम्बे लम्बे श्वास-उच्छ्वास १० बार लेने के बाद शांत भाव से बैठ सहज भाव से चल रहे स्वांस पर मन को केन्द्रित करें। नाभि से सांस उठता हुआ ऊपर की ओर सिर में सहस्रार में जा रहा है, वापिस आ रहा है। कोई चिंतन न करते हुए केवल सांस के आने जाने में ही मन को पिरोते ही एकाग्रता से शांति-विश्रांति की अनुभूति होने लगेगी।

वस्तुतः चञ्चलता में अशांति व्यग्रता है तथा एकाग्रता में ही शांति विश्रांति है।

सांस की गहराई में मन को जितना खो सकें खो दें, मन का अस्तित्व ही न जान पड़े यह प्रकार होगा मन को भी विश्राम देने का,

नहीं तो शरीर के सो जाने पर मन अपने स्वप्न राज्य में व्यस्त रहता है, कभी विश्राम ही नहीं पाता।

शरीर को पंचमहाभूतों के सम्पर्क में लायें—नंगे पांव पृथ्वी पर चलें, जब कभी मिट्टी मल कर नहाएं। ठंडे पानी से स्नान की आदत बनाएं, कभी मूसलाधार वर्षा में ही स्नान करने की मौज लें। नदी तालाब में तैरें, सहने योग्य धूप को नंगे बदन सहें, हर समय छाते की छाया भी न चाहें। चाहकर प्रातः की धूप लें। बंद कमरों की अंधेरी में ही न रमें, खुले प्रकाश में बरामदे व दीवार की छाया में रहें। प्रयास करें मुक्त आकाश में रहने का, छतों के, आकाश के नीचे ही न बने रहें। खुला आकाश, खुली वायु, सीधी धूप व जल व मिट्टी से सीधे २ सम्बन्ध जोड़ें।

स्वस्थ रहने की कुछ सामान्य बातें

१. नाक से सांस लें, नाक बालों की छलनी से छनकर वायु भीतर जाती है। मुंह से सांस लेनी पड़ती है इस का अर्थ है शरीर रोगी बन रहा है।

२. न गंदी जगह सोयें, न बंद कमरे में सोएं, न बहुत से आदमियों से भरे कमरे में ही न पशुओं के कमरे में न रजाई में मुंह छिपा कर ही सोएं। न अंगीठी कमरे में रख सोएं। सोते समय यह समझें कि शरीर का निर्माण हो रहा है। जितनी शुद्ध वायु मिलेगी उतना ही लाभ होगा। नींद के बाद उतनी चुस्ती नवीनता ताजगी मिलेगी।

३. मच्छरों से बचने के लिए मच्छरदानी लगाएँ। अन्यथा सरसों तेल कपूर मिला कर मलकर सोएं। मच्छर ही न काटें, हिम्मत करें रक्त शुद्ध करने की मीठा छोड़ें कड़वा सेवन करें।

४. कपड़ों को साफ रखें। भोजन को मक्खियों से बचाएँ।

५. भोजन के बाद पेशाब करना हितकर है।

६. शौच, पेशाब, छींक, आंसू, भूख, प्यास के वेगों को न रोकें।

७. सूर्योदय के पूर्व जगना आयु बढ़ाना है।

८. भोजन के तुरन्त बाद स्नान न करें, अपच होकर अनेक रोग बनेंगे।

९. भोजन के कुछ देर बाद मैथुन पेट के विभिन्न रोगों को जन्म देता है अतः शास्त्र में आधी रात्रि के बाद का ही समय ठीक माना है जब एक नींद पूरी हो जाए, भोजन भी पच जाए। ज्वर (बुखार) में मैथुन करने से टी. बी. होती है।

१०. प्रातः सूर्योदय के पूर्व शुद्ध खुली वायु में कसरत करना, सैर करना फेफड़ों को शानदार टानिक देना है। फेफड़ों को शुद्ध वायु से जो आक्सीजन मिलता है उसके मुकाबले का टानिक दूसरा नहीं है। समुद्री हवा में उससे भी बढ़ कर ओजोन मिलता है।

११. भोजन आराम से पचता है। भोजन करने पर, न शरीर से अधिक मेहनत करो न दिमाग से, निभा सको तो निभाओ ४० सांस सीधे लेट कर लो, ६० दाएं तथा ८० बाईं करवट लेट कर अपना सामान्य कार्य करो। अच्छा यही है विश्राम का समय नहीं है तो भारी भोजन ही टाल दो। विश्राम का समय देख भोजन करो। हल्का नाश्ता करते रहो।

भोजन—विश्राम को जोड़ दो

श्रम तो हल्कापन चाहता है, वह भोजन का भार नहीं चाहता। खाली रहने पर चुस्ती चेतना होती है, भोजन से सुस्ती और तन्द्रा आती है।

१२. हमेशा खुश रहो, हंसने के प्रसंग पैदा करो और हंसो। चिंताएं कम करो।

१३. दातुन या मञ्जन से दांतों को नित्य नियम से साफ करो, रात को सोने के पूर्व दांतों को साफ करके ही सोवो। दांत ही ऐसी चक्की है जिससे पिसकर आहार पेट में जाता है। साफ चक्की से पिसा आहार शरीर को पूर्ण शक्ति देगा दाना। चीनी का अधिक

मुख पृष्ठ का भाव :

जीवन का एक मार्ग भूलों और असंयम से भरा है उस पर चलते हुए मनुष्य रोग रूपी गढ़ों में आये दिन गिरता रहता है। उसमें से मानव को डाक्टर, वैद्य, हकीम और होम्योपैथ निकालते रहते हैं। परन्तु यही क्रम जीवन भर चलता रहता है।

दूसरा मार्ग है जिस पर चलनें की शिक्षा, प्राकृतिक चिकित्सक देता है। वह अपना दायित्व मानकर रोगी को प्राकृतिक नियमों का पालन सिखाकर, भूलों को हटा संयमी बना देता है।

नवयुगान्तर प्रेस, शारदा रोड, मेरठ-२५०००२ फोन—८२१२